"भारत में छत्रपति शाहू जी महाराज का शैक्षिक योगदान विशेष रूप से दलितों के शैक्षिक उत्थान में"

"EDUCATIONAL CONTRIBUTION OF CHHATARAPATI SHAHU JI MAHARAJ IN INDIA WITH SPECIAL REFERENCE TO THE EDUCATIONAL UPLIFTMENT OF DALITS"
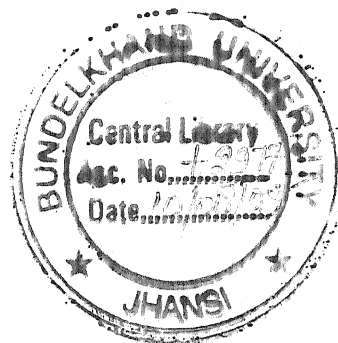
पी-एच.डी. (शिक्षा) हेतु
बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी
में प्रस्तुत

शोध-प्रबन्ध

वर्ष – 2008

शोध पर्यवेक्षक

डॉ0 जे0एल0वर्मा
रीडर, शिक्षक प्रशिक्षण विभाग
(बुन्देलखण्ड कॉलेज), झाँसी
बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी

शोध प्रस्तुतकर्ती

रेनू सिंह
एम.ए. (भूगोल)
एम.एड.

घोषणा–पत्र

मैं श्रीमती रेनू सिंह यह घोषणा करती हूँ कि पी–एच0डी0 उपाधि के लिये प्रस्तुत शोध ग्रन्थ मेरी अपनी मौलिक रचना है। इसके पूर्व यह कहीं भी प्रस्तुत नहीं की गयी है।

मैंने प्रस्तुत शोध प्रबन्ध बुन्देलखण्ड कालेज के सुयोग्य निर्देशक डॉ0 जे0एल0वर्मा जी, रीडर, शिक्षक प्रशिक्षण विभाग, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी के निरीक्षक एवं निर्देशन में पूर्ण किया है।

शोधकर्ती

Renu Singh

श्रीमती रेनू सिंह

डॉ. जे.एल.वर्मा
रीडर, शिक्षक प्रशिक्षण विभाग
(बुन्देलखण्ड कॉलेज), झाँसी
बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय,
झाँसी (उ0प्र0)
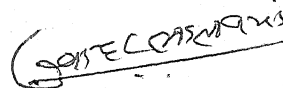
निवास
26, सिविल लाईन,
झाँसी (उ0प्र0) 284001
फोन – 2471817
मो0 – 9451333906

प्रमाण – पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि **श्रीमती रेनू सिंह** ने मेरे निर्देशन में शिक्षा विषय में पी–एच0डी0 उपाधि हेतु शीर्षक **"भारत में छत्रपति शाहू जी महाराज का शैक्षिक योगदान विशेष रूप से दलितों के शैक्षिक उत्थान में"** पर शोध कार्य किया है। शोधार्थिनी ने 200 दिन से अधिक उपस्थिति की अनिवार्यता पूरी कर ली है। इनका यह शोध प्रबन्ध नितान्त मौलिक एवं विवेचना पुष्ट है। अतः इस मेधावी शोधकर्ती के द्वारा तैयार किया गया एवं प्रस्तुत किया जा रहा है। यह शोध प्रबन्ध पी–एच0डी0 की उपाधि के लिये सर्वथा समर्थ है।

मैं श्रीमती रेनू सिंह को पी–एच0डी0 की उपाधि हेतु इस शोध प्रबन्ध को बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झाँसी में प्रस्तुत करने की अनुमति प्रदान करता हूँ।

भवदीय

डॉ. जे. एल. वर्मा

आभार प्रदर्शन

किसी भी कृति की रचना में यद्यपि रचनाकार का स्वंय का अध्यवसाय ही महत्वपूर्ण होता है किन्तु कृति की समग्र पूर्णता में न जाने कितने विद्वतजनो, स्नेहियों, श्रद्धेय विभूतियों का योग एवं आशीर्वाद भी महत्व में किसी प्रकार न्यून नहीं होता। सन्दर्भ के इसी बिन्दु पर मेरे इस शोध प्रबन्ध में भी जिन सत्पुरूषों का योग सहयोग मुझे प्राप्त हुआ है उसका स्मरण मेरे लिये यहां अपरिहार्य है।

सर्वप्रथम **मेरे गुरू और निर्देशक डॉ0 जे0एल0 वर्मा** के अतीव मूल्यवान परामर्श एवं दिशा दर्शन के लिए मैं आभार ज्ञापित करके उनके इस महत् कार्य का अवमूल्यन नहीं करूँगी। इस प्रकरण में मेरा उनको श्रृद्धापूर्ण प्रणाम भी पर्याप्त नहीं हैं तथा मैं उनके समक्ष सदैव विनत्शील रहूँगी।

मैं परम आदरणीय **प्राचार्या दयानन्द महिला प्रशिक्षण संस्थान कानपुर** की मैं हृदय से आभारी हूँ जिन्होने उदारता पूर्वक अपनी संस्था के पुस्तकालय के उपयोग करने की मुझे अनुमति प्रदान की।

मैं अपने पति **श्री अरविन्द सिंह निरंजन जी** की हृदय से आभारी हूँ जिन्होंने प्रस्तुत शोध कार्य को शीघ्र पूरा करने के लिए समय समय पर मुझे प्रेरणा प्रदान की। मैं अपने बेटे **अमन निरंजन** की भी हृदय से आभारी हूँ जिसने शान्ति का क्षण बनाकर प्रस्तुत शोध–कार्य को करने में मुझे बहुत सहयोग दिया है।

मेरे पूज्य पिता **श्री राजेन्द्र कटियार** एडवोकेट (एस0बी0आई0 एण्ड पी0एन0बी0 कानपुर) का पावन आशीष सदैव मेरे सिर पर रहा है। मेरे भाई साहब **श्री राजीव कुमार सिंह** एडवोकेट ने प्रस्तुत शोध कार्य को पूर्ण

करने में जो सहयोग दिया है उसे व्यक्त करने के लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं। उनका कृपालु स्वभाव मेरे इस शोधकार्य में बलवती प्रेरणा रहा। मैं उनकी हृदय से आभारी हूँ। मेरी दीदी **श्रीमती रजनी सिंह** का आशीर्वाद सदैव मेरे सिर पर रहा है।

मेरे इस अनुसंधान कार्य में मेरी माता जी **श्रीमती राजेश्वरी देवी** पिता जी **श्री जगदीश निरंजन** (सास, ससुर) का यथेष्ट सहयोग एवं आशीर्वाद रहा है।

इस प्रकार मेरे परिवार के सभी स्वजन इस अनुष्ठान में बड़े काम आये मैं इन सभी श्रेष्ठजनों को अपना प्रणाम अर्पित करती हूँ।

Renu Singh

श्रीमती रेनू सिंह

अनुक्रमणिका

अध्याय - 1

- अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्व
- अध्ययन का लक्ष्य या अध्ययन का उद्देश्य
    - छत्रपति शाहू जी महाराज के समता पूर्ण समाज की स्थिति का अवलोकन करना।
    - समाज सुधारक के रूप में उनके योगदान का अध्ययन।
    - शाहू जी महाराज के शैक्षिक योगदान का अध्ययन।
    - छत्रपति शाहू जी महाराज के शैक्षिक चिन्तन एवं कार्य का दलितों के उत्थान में योगदान का अध्ययन।
- अध्ययन का सीमांकन
- शोध विधि एवं उपकरण तथा स्त्रोत
- परिकल्पना
- सम्बन्धित साहित्य का सर्वेक्षण
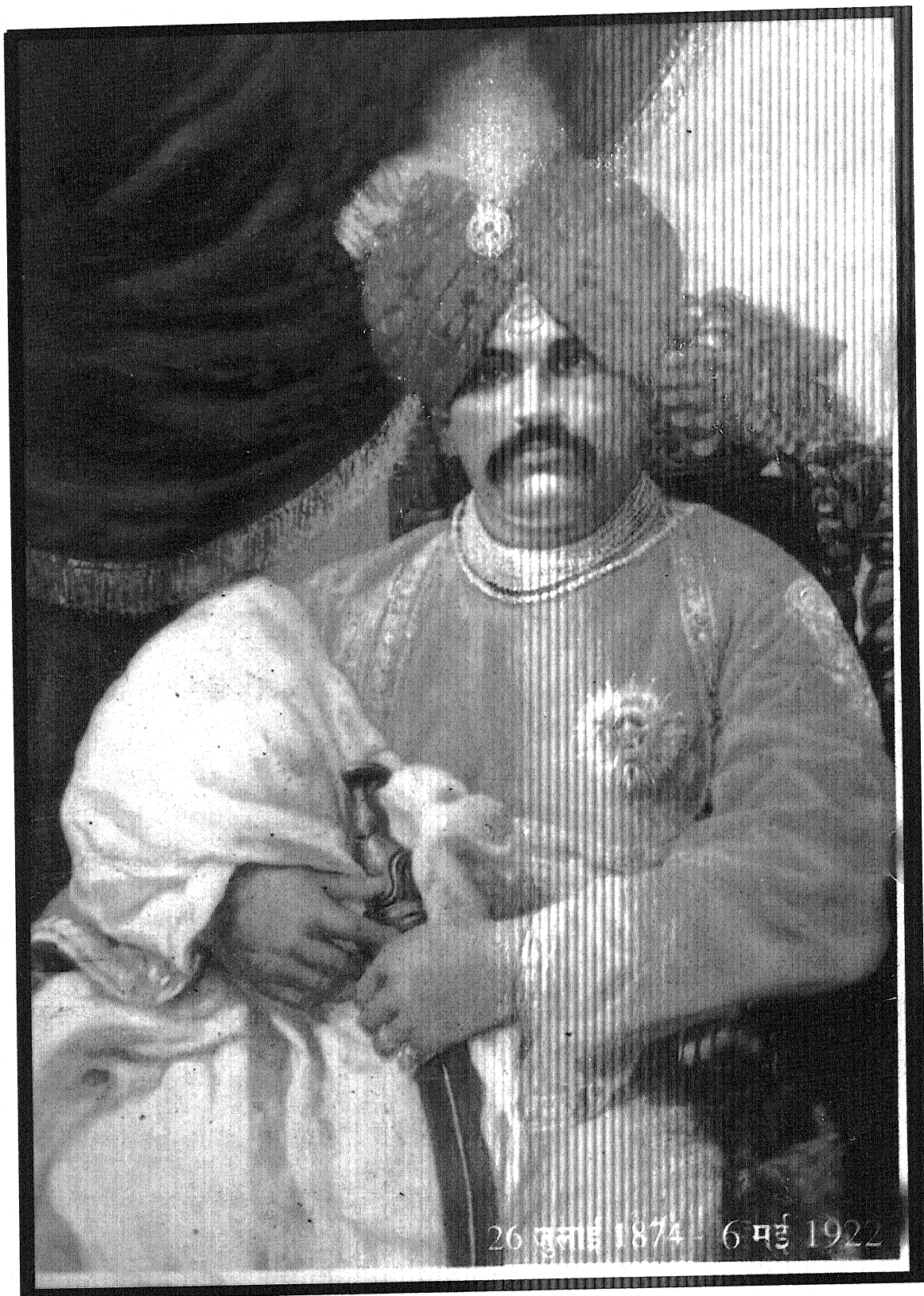
राजर्षि छत्रपति शाहू जी महाराज

अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्व

भारत प्राचीन काल से ही समृद्धि के शिखर पर रहा है। उसके शिखर पर रहने का मुख्य आधार उसमें अपने अनुभवों को पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ाने की क्षमता है। जहाँ अन्य प्राणी पीढ़ी दर पीढ़ी अपनी इन्ही जीवन प्रक्रियाओं को दुहराते हैं और हर पीढ़ी में नये सिरे से ज्ञानार्जन प्रारम्भ करते हैं, मनुष्य अपने ज्ञान को आगे बढ़ाता रहता है। ज्ञान वृद्धि के साथ–साथ उसकी चिन्तन शक्ति में भी वृद्धि होती जाती है और वह अपने वातावरण से अधिक समन्वय स्थापित कर पाता है। सैकड़ों हजारों वर्षों से चली आ रही। यह मानव यात्रा जहां जैविक क्षेत्र में कुण्डलाकार है अथवा जन्म शैशव–युवावस्था मृत्यु के वृत्त में घूम रही है, वहीं ज्ञान के क्षेत्र में वह निरन्तर प्रगति पर है। उसकी प्रगति का मूल आधार उसकी जिज्ञासा है।

मनुष्य सदैव अपने वातावरण को जिज्ञासा की दृष्टि से देखता है उसे समझने तथा नियन्त्रित करने का प्रयास करता है। बहुधा उसकी दृष्टि अन्तर्मुखी हो जाती है और वह अपने को भी समझने का प्रयास करता है। जिज्ञासु मानव की शक्ति असीमित है जैसे ही उसके सामने कोई समस्या आती है, उसकी समस्त शारीरिक एवं मानसिक शक्तियाँ उसके समाधान के लिए एकाग्र हो जाती है। दिन–रात कठोर परिश्रम, चिन्तन एवं मनन करके मनुष्य अपनी समस्या का समाधान कर लेता है।

सम्पूर्ण विश्व में समय–समय पर विभिन्न चिन्तन, सम्प्रदाय मानव प्रकृति, सम्बन्ध उपासना, जीवन–जगत, कतिपय विषयों पर मानवता के परिष्कृतम सांसारिक एवं आध्यात्मिक विकास हेतु महामानव अवतरित होते आये हैं। संसार के समस्त प्राणियों की बौद्धिक चेतना इन समस्त

महामानवों से अनुप्राणित, परिचर्चित, प्रभावित एवं लाभान्वित होती रही है। इन समस्त महामानवों की सर्वाधिक महत्वपूर्ण उपलब्धि थी दर्शन। यही समस्त मूर्धन्य व्यवहारिक तथा सैद्धान्तिक गतिविधियों का लक्ष्य माना जाता था तथा विविध जातियों वाले इस बड़े भू–भाग की सामाजिक संस्कृति में जो विविधता है उसमें एकता और तारतम्य स्थापित करने वाला यही एक बिन्दु था ऐसी रत्न प्रसविनी वसुधा भारतवर्ष में राजर्षि छत्रपति शाहू जी महाराज ने जन्म लिया तथा अपने 48 वर्ष का जीवन आध्यात्मिक प्रयोग की एक अविच्छिन्न श्रृंखला बना दिया।

इतिहास के आईने में देखने से पता चलता है कि सामान्य तौर पर शासक अपने को जनता का महाप्रभु मानता है और जनता को अपना गुलाम। शासकों की यही धारणा और व्यवहार जनभावना को शासन के प्रति विद्रोही बना देती है। जब कोई राजा अपनी इच्छाओं एवं अपने परिवार के स्वार्थों को त्याग करके सामान्य जनों की आकांक्षाओं, अपेक्षाओं तथा आवश्यकताओं का ध्यान रखते हैं ऐसे ही लोग महापुरूष कहलाते हैं। वे तन,मन,धन एवं प्राण को संकट में डालकर भी दीन–दुखीजनों की भलाई करते हैं। भलाई करने के रास्ते में यदि कोई बाधा पहुँचाता है तो उसका डटकर मुकाबला करते हैं और पीछे मुड़ने का नाम नहीं लेते हैं। ऐसे महापुरूष इस नश्वर संसार में कभी–कभी जन्म लेते हैं। सृष्टि की यह परम्परा रही है कि जब भी समाज में दुष्प्रवृतियों का प्रादुर्भाव हुआ है, तब उनके प्रतिकार हेतु अदृष्ट की प्रेरणा से कोई न कोई शक्ति महामानव के रूप में धरा पर अवतीर्ण हुई है जिसने इन दुष्प्रवृत्तियों पर कुठाराघात कर मानवता के मूल्य को विघटित होने से बचाया है उसी ने सामान्य मानव समाज को सही दिशा दी है, साथ ही विकृत मूल्यों का उदान्तीकरण भी किया है। मानव के इस नव संस्करण तथा परिस्करण की

प्रक्रिया सम्पूर्ण विश्व में चलती रहती है। ऐसी शक्तियों में महात्मा ज्योतिराव फूले, महर्षि दयानन्द सरस्वती, महात्मा बुद्ध, एवं छत्रपति शाहू जी अग्रणी है।

राजर्षि छत्रपति शाहू जी के विचारों को समझना तो आसान है परन्तु शर्त यह है कि इसकी कुंजी हमारे हाथ लग जाये। छत्रपति शाहू जी के सामने जो भी धार्मिक, नैतिक, आर्थिक, शैक्षिक सामाजिक समस्यायें आयी उन सभी को उन्होने सत्य और अहिंसा की कसौटी पर रक्खा तथा उनका मूल्यांकन किया। यही कारण था कि उन्हे परम्परायें न बाँध सकी, संगीत न रोक सकी। नैतिक साहस तो उनमे इतना था कि वे अपनी भूलों की घोषणा भी सार्वजनिक रूप से कर देते थे। इसी कारण वे अपने प्रशंसकों के साथ–साथ आलोचकों के लिए भी एक पहेली बने रहे।

इस देश में अनेक सन्तों, महात्माओं, महापुरूषों ने वर्णों एवं जातियों में विभक्त मानवता को एक सूत्र में बांधकर समतामूलक जाति विहीन, हिन्दु समाज की स्थापना का संकल्प एवं उपक्रम किया। उसी अभियान में उद्‌भूत महात्मा ज्योतिराव फूले जी के प्रयासों कोआगे बढ़ाकर सत्यशोधक समाज को पुरोहितों प्रपंच के षंडयन्त्रों में शिक्षा–सम्पत्ति और साधनों से बलात, वंचित कर रखा था वे आंशिक रूप से शिक्षित बने, जीवन यापन के साधन भी जुटे, छुआछूत का भूत भी भागा शूद्रों–अतिशूद्रों पर उच्च कुलीन तन्त्रों की अवमानना किंचित लज्जा का अनुभव करने लगी थी। जिन्होने अपने को पृथ्वीश देवता के रूप में अबोध शिक्षित जनता के बीच प्रतिष्ठित कर रखा था उन्हे एहसास होने लगा था कि अब उनकी ऊँचाईयों के हिमालय क्षिप्र गति से धराशायी होने वाले हैं।

राजर्षि छत्रपति शाहू जी ने स्वंय नरेश होकर भी शिक्षा के प्रचार एवं प्रसार के लिए कोल्हापुर राज्य के ग्रामीण अंचलों में सैकड़ों विद्यालय खोले और पुरूषों तथा महिलाओं के लिए ट्रेनिंग कॉलेज तथा छात्रावासों की स्थापना भी की।

शाहू जी के शिक्षा प्रचार एवं प्रसार के प्रयासों के कारण अनेकों संस्थाओं व सामाजिक संगठनों द्वारा समय–समय पर उन्हे सम्मानित किया एवं अनेक मानपत्र प्रदान किये गये।

राजर्षि छत्रपति शाहू जी ने अपनी प्रेरणा, सहायता तथा प्रोत्साहन से डॉ0 भीमराव अम्बेडकर जैसे साहसी, पराक्रमी और सुयोग्य पुरूष को महापुरूष बना दिया था। जब शाहूजी का शरीरान्त हुआ तो बाबा साहब अम्बेडकर ने अत्यन्त मार्मिक संवेदना में कहा था– मेरा संरक्षक चला गया।

राजर्षि छत्रपति शाहू जी ने 30 सितम्बर 1917 को 10 वर्ष के आयु वर्ग के समस्त छात्रों के लिए प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य कर दी थी।

अतः प्रस्तुत शोध–ग्रन्थ नयी परिस्थिति में राजर्षि छत्रपति शाहू जी के शैक्षिक योगदान के अध्ययन का एक प्रयास है। समाज शिक्षा को प्रभावित करता है। तथा विभिन्न पक्षों पर विचार करता है और लक्ष्य निर्धारित करता है। इन लक्ष्यों की प्राप्ति करना ही मानव जीवन का उद्देश्य है। शिक्षा इन उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक होती है। शिक्षा के द्वारा ज्ञान एवं कौशल विकसित होते हैं। जो पुनः दर्शन को नवीन रूप प्रदान करते हैं। नवीन दर्शन, नवीन शिक्षा को जन्म देकर इस चक्र को गतिशील बनाता है।

इस प्रकार एक विचार को जन्म देता है तथा दूसरा उसे गतिशील बनाता है। इस प्रकार राजर्षि छत्रपति शाहू जी की विचारधारा का प्रभाव भी शिक्षा के उद्देश्यों, पाठ्यक्रम तथा शिक्षण विधियों पर स्पष्ट रूप से पाया जाता है।

हमारी भारतीय सांस्कृतिक परम्परा बहुत ही गौरवमयी एवं सर्वोत्कृष्ट रही है। अपनी गौरवमयी सांस्कृतिक परम्परा के फलस्वरूप भारत विश्व में जगत गुरू के मुकुट से सुशोभित होता रहा है।

आज देश ऐसे संक्रमण काल से गुजर रहा है जिसमें पुरानी मान्यताएँ समाप्त हो चुकी हैं और नयी भौतिकवादी मान्यताएँ सामने आ रही हैं। नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों से लोगों का विश्वास उठ गया है किन्तु समाज केवल भौतिक मूल्यों से नहीं चल सकता है इसलिए ऐसे मार्गों को खोजना है जिन पर चलकर मनुष्य वास्तविक शान्ति प्राप्त कर सके। राजर्षि छत्रपति शाहूजी ने शैक्षिक एवं समाजिक विकास द्वारा भारतीय संस्कृति पर आधारित मान्यताओं को पुनः स्थापित करने का प्रयास किया है।

प्राचीन काल में शिक्षा मठों एवं गुरूकुलों में दी जाती थी परन्तु आज शिक्षा के बड़े–बड़े केन्द्र खुल गये है। लेकिन यह भी विडम्बना ही है कि विकास के नाम पर आज शिक्षा के क्षेत्र में घोर दुर्व्यवस्था फैल गई है। शिक्षण संस्थाओं में अशान्ति का वातावरण तो है ही, साथ ही शिक्षा व्यवस्था आज भी गुलामी के समय में निर्धारित उद्देश्यों को ही पूरा करती है। शिक्षा का स्तर गिर गया है। बच्चों के सर्वांगीण विकास की बात तो आज की शिक्षा में सोचनी ही नहीं चाहिये। आज का विद्यार्थी तो उच्च से उच्च शिक्षा ग्रहण करने के पश्चात भी अपना पेट भरने में सक्षम नहीं है।

इन परिस्थितियों में यह सर्वथा सेमीचीन है कि "राजर्षि छत्रपति शाहूजी के शैक्षिक एवं सामाजिक विकास" का निष्पक्ष विवेचन प्रस्तुत किया जाये क्योंकि उनके विचारों की आवश्यकता एवं महत्व को आज भी स्वीकार किया जा रहा है। आत्मानुशासन चिन्तन, मनन आदि भावनाओं का विकास करने तथा जीवन को सुखमय बनाने के लिए राजर्षि छत्रपति शाहूजी की विचारधारा के अनुसार शिक्षा प्रदान करने की आवश्यकता है।

उत्तर प्रदेश में इन दिनों यह प्रश्न बहुत से लोगों की जुबान में हैं कि कौन है शाहू जी। सामाजिक एवं शैक्षिक न्याय के लिए सक्रिय लोगों के एक वर्ग को छोड़कर राज्य के प्रबुद्धजनों यहां तक कि मीडिया से जुड़े लोगों को भी शाहू जी के बारे में विशेष जानकारी नहीं है। यह स्थिति दुर्भाग्यपूर्ण है क्योंकि शाहू जी महाराज अपने समय के दलितों, पिछड़ों के सबसे बड़े उद्धारक ही नहीं सामाजिक न्याय के पुरोधा भी थे। एक ऐसे राज्य में जहां सामाजिक न्याय की ताकतें सक्रिय हों, शाहू जी महाराज के प्रति आदर सम्मान व लगाव का न होना अपने आप में एक विडम्बना ही है। इस विडम्बना का प्रमुख कारण है—सामाजिक समता के प्रति छदम् प्रतिबद्धता और "न जानने" का अहंकार। जिस प्रकार कुछ लोगों में बहुत सी बातों को जानने का अहंकार होता है उसी प्रकार कुछ लोगों में किसी के बारे में न जानने का अंहकार होता है—ठीक जैसे कि अंग्रेजी विद्यालयों में पढ़ने वाले बालकों के अभिभावक बड़े गर्व से कहते हैं कि उनके बालक को हिन्दी नहीं आती है।

आज सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश में शाहू जी महाराज को लेकर कुछ ऐसी ही स्थिति है। दुर्भाग्यपूर्ण यह है उनके बारे में जानने का प्रयास किये बगैर ही उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व को खारिज करने की चेष्टा की जा रही है। यह स्थिति यही बताती है कि सामाजिक न्याय के प्रति प्रतिबद्ध

होने वाली बहुत सी ताकतें दलितोत्थान तथा सामाजिक समरसता का मुखौटा मात्र चढ़ायें हैं, उनके असली इरादे कुछ और ही हैं। दरअसल यही वह ताकतें हैं जो किसी न किसी बहाने सामाजिक समरसता के अभियान का विरोध करती रही है। इन ताकतों का चेहरा पहली बार तब उजागर हुआ जब "कानपुर विश्वविद्यालय" कानपुर का नाम बदलकर "छत्रपति श्री शाहूजी महाराज कानपुर विश्वविद्यालय" कानपुर कर दिया गया था। नामांतरण के विरोध में अनेक हास्यास्पद और विवेकहीन तर्क गढ़े गये और इस बात की पूरी चेष्ठा की गई कि उत्तर प्रदेश के लोगों विशेष रूप से कानपुर में निवास करने वाले जनमानस को येन–केन प्रकारेण यह महसूस कराया जाये कि शाहू जी के नाम पर किसी संस्था का नामंकरण उस संस्था का अपमान है। इस मामले में खेद की बात यह रही कि मीडिया के एक वर्ग ने भी इस कलुषित अभियान को अपना समर्थन दिया। वास्तव में इसमें आश्चर्य की बात नहीं है क्योंकि सभी जानते हैं मीडिया में ऐसे लोगों का वर्चस्व है जो कि सामाजिक न्याय के विरोधी है।

कानपुर विश्वविद्यालय का नाम बदलने के कुछ ही समय पश्चात 26–27 जुलाई 1997 को श्री शाहू जी महाराज कानपुर विश्वविद्यालय कानपुर के पावन पवित्र प्रांगण में शाहू मेले का भी आयोजन किया गया था। तब से मेरी यह जिज्ञासा थी कि मैं ऐसे महापुरूष का जीवन का अध्ययन करूँ।

अतः आज की शिक्षा में राजर्षि छत्रपति शाहू जी के शैक्षिक एवं समाज के क्षेत्र में सामाजिक सुधारों की आवश्यकता को देखते हुए शोधकर्ता ने "भारत में छत्रपति शाहू जी महाराज का शैक्षिक योगदान विशेष रूप से दलितों के शैक्षिक उत्थान में" नामक विषय को शोध एवं

अध्ययन का विषय चुना। शैक्षिक एवं सामाजिक विकास के सन्दर्भ में राजर्षि छत्रपति शाहू जी द्वारा किये गए शैक्षिक एवं सामाजिक प्रयासों से विद्यार्थी वर्ग एवं आम जनता को अवगत कराना चाहती है। इसलिए उसी दिशा में शोधकर्ती अपने शोध–प्रबन्ध के माध्यम से आगे बढ़ने का प्रयास कर रही है।

अध्ययन का लक्ष्य या अध्ययन का उद्देश्य

मनुष्य का मन अपरिमेय ऊर्जा का केन्द्र है। मानव जीवन के बहुविद्य कार्यकलाप इसी ऊर्जा के दमकते हुए स्फुलिंग हैं। उदारता, करूणा परोपकार, कृपा तथा सहानुभूति के सुषुप्त भावों को शक्ति की यही चिनगारिया जागृत करके सक्रिय बना देती है। द्वेष, क्रूरता, ईर्ष्या तथा दुष्कृतियाँ भी उसी ऊर्जा से ही उत्पन्न होती है शक्ति अग्नि है। अग्नि किसी का घर भी फूँक सकती है तथा भोजन भी पका सकती है। मनुष्य इसी शक्ति से किसी का घर भी लूट सकता है और सहायता करके किसी की बरबाद गृहस्थी को सम्पन्न बना सकता है। शक्ति शोषण और पोषण दोनो कार्य करती है।

इतिहास में उज्जवल तथा मलिन दोनो प्रकार के कार्यों का लेखा जोखा रहता है। यह व्यक्ति पर निर्भर करता है कि वह अपनी शक्ति के उपयोग से उज्जवल कृतित्व का इतिहास छोड़ता है अथवा दुष्कृत्यों से अपने इतिहास को मलिन बनाता है। किसी के घर में आग लगाने वाले व्यक्ति को समाज कोसता है, धिक्कारता है। किन्तु यदि कोई व्यक्ति किसी के घर में लगाई आग को बुझाने में सहायता करता है तो उसे समाज आदर देता है, स्नेह देता है और उसका अभिनन्दन करता है। किसी मनुष्य के जीवन का घटना संकुल होना पर्याप्त नहीं है, घटनाओं का कल्याणकारी होना अतिआवश्यक है। सत्य और असत्य के परीक्षण का यही निष्कर्ष है। यदि इस निष्कर्ष पर कोई व्यक्ति खरा उतरता है तो वह निश्चय ही लोकमंगलकारी होने के कारण इतिहास का स्मरणीय एवं श्रृद्धास्पद व्यक्तित्व बन जाता है।

राजर्षि छत्रपति शाहू जी उन्ही इतिहास पुरूषों में एक हैं जिन्होने समाज की विषमता को धवस्त करके हमारे देश की दलित मानवता को उठाने के लिए हर खतरे का सामना किया, हर विभीषिका से मोर्चा लिया तथा एक प्रबुद्ध न्याय प्रिय नरेश के रूप में दीन–दुखी के कल्याण के लिए अपना सर्वस्व अर्पित कर दिया।

फूले जी द्वारा निर्दिष्ट मानवीय समीकरण, सामाजिक समरसता के स्थापन, विषमता तथा आर्थिक नीतियों को कार्यरूप में परिणत करने के लिए राजर्षि छत्रपति शाहू जी ने राजा होकर भी खतरनाक संर्घष किये। उसमें राजकोष को लगाया तथा फूले जी की संस्था ''सत्य शोधक समाज'' को पुर्नजीवित किया और संचालित किया। ऐसे ही कोल्हापुर व मराठा कुर्मी नरेश की वीरगाथा, उनके अभिक्रमों एवं अभियानों का चित्रण ही हमारा एक मात्र अभीष्ट है छत्रपति शाहू जी राजभोगी होकर भी राजयोगी थे। उन्होने राजपुरूष के धर्म को ठीक–ठाक समझाया। वे सदैव यह मानकर चले कि शासक अपनी जनता का सबसे बड़ा सेवाक होता है और जनता उसकी सर्वोच्च स्वाभिनी।

आज का शासक अपने को जनता का महाप्रभु मानता है और जनता को अपनी क्रीतचेरी। शासकों की इसी धारणा और इसी व्यवहार ने जन भावना को शासन के प्रति विद्राही बना दिया है। छत्रपति शाहू जी शासित और शासित के सम्बंधों की सूक्ष्मताओं को भली–भांति समझते थे।

हमें राजर्षि छत्रपति शाहू जी को एक समदृष्टा मानव तथा एक सच्चे समाजवादी के रूप में स्वीकार करना होगा। छत्रपति शाहू जी का कार्यवृत्त प्रत्येक शासन तन्त्र के लिए प्रेरणा का पुष्ट आधार और शासन का आदर्श बन सकता है।

कोल्हापुर राज्य शाहू छत्रपति के सिंहासनारूढ़ होने तक एक जर्जर दुर्बल एवं शिथिल शासन से पीड़ित था। अधिकारियों का निकम्मापन, घूसखोरी, भ्रष्टाचार तथा जातिवाद अपने चरम पर थे। निर्माण और रचना सर्वथा विलुप्त हो चुके थे नियोजन और योजनायें अस्तित्व में आने से पहले ही नष्ट हो जाती थी। किसी को शासन को जिम्मेदार और सबल बनाने की चिन्ता नहीं थीं। अच्छे लोग प्रभावहीन बना दिये गये थे। खलमण्डली का बोलबाला था। राज्य में या तो कोई स्वामी नहीं था या फिर सभी स्वामी थे। सामान्य जनता नितांत उपेक्षित तथा संत्रस्त थी। इन भयावह और घातक परिस्थितियों को नियन्त्रित करके उनको जनहित की ओर मोड़ना एक दुष्कर कार्य था। समस्याओं की ऐसी जटिल पृष्ठभूमि में राजर्षि छत्रपति शाहू जी का राज्यभिषेक हुआ था। उनके सिंहासन पर बिछे हुये फूल शूल की चुभन लिए हुए थे। राज्य की सारी समस्याएँ कड़क थी और राज्य का हर लापरवाह अधिकारी उनके लिए कंटक था। शोषण की झाडियों में निर्धनता की अमरबेल पल्लवित हो रही थी। छुआछूत की खाईयों में मानवता को बलात् भेज दिया गया था। अनुशासनहीनता के गडढों में भ्रष्टाचार के शूकर लोट–लोट कर मस्त हो रहे थे। राजकोष की आर्थिक विषमता को पहाड़ अडिग खड़े थे। वर्ण व्यवस्था की नदियों में भेदभाव का अथाह जल प्रवहमान था। इस विवशता पूर्ण वातावरण में कोल्हापुर के सिहांसन के उत्तराधिकारी को अपना शासन प्रशासन चलाना था।

राज्य की आर्थिक दुर्व्यव्यवस्था अपव्यय तथा अशिक्षा को दूर करना आदि ऐसी समस्याएँ थी जिनको अविलम्ब हल करना छत्रपति शाहू जी की दृष्टि में अनिवार्य था। जन–जन में शिक्षा का प्रसार करना तथा सामान्य लोगों में व्याप्त अन्धविश्वासों एवं रूढियों का उन्मूलन राज्य के सर्वोन्नमुखी

उत्कर्ष के लिए नितान्त आवश्यक था। परन्तु सामाजिक विषमताओं का मिटाना राजा का तात्कालिक कर्तव्य नहीं था। इस दिशा में छत्रपति शाहू को सावधानी और बुद्धिमानी से काम लेना था। इसके लिए सबसे पहले आवश्यक था कि जनमत तैयार किया जाये तथा जनता में वह भाव उदय किया जाये कि वह स्वंय विभिन्न प्रकार की कुरीतियों एवं बुराईयों को दूर करने के लिए सक्रिय और सचेष्ट हो जाये। राज्य के शासन को इतना चुस्त और स्तरीय बनाना पहला कर्तव्य था जिससे शासन की बुनियाद सुदृढ बन सके। इसके लिए यह भी आवश्यक था कि शासन में सभी वर्गों एवं सम्प्रदायों को भागी बनाया जाये। उसमें किसी एक सम्प्रदाय का आधिपत्य न रहे, शाहू जी महाराज में यह चिन्तन और यह मौलिक उद्भावनाएँ जागृत हुई। इसके लिए कोल्हापुर राज्य को उन फ्रेजर महोदय का ऋणी रहना पडेगा। जिन्होने शाहूजी को इस सबके लिए शिक्षित–प्रशिक्षित किया था।

छत्रपति शाहू जी द्वारा राज्य सत्ता के ग्रहण किये जाने की सार्वजनिक सूचना 2 अप्रैल सन् 1894 को प्रकाशित की गयी। अपने घोष्णा पत्र में छत्रपति शाहू जी ने कहा कि वे राज्य के बहुमुखी विकास तथा जनता की सम्रद्धि की आकांक्षा रखते हैं। राज्य को शक्तिमान बनाने के लिए जो सबसे पहला कदम उठाया वह था प्रशासन परिषद को भंग करना जिसे सभी प्रकार के सर्वोच्च अधिकार प्राप्त थे। कोल्हापुर राज्य का आर्थिक विकास को राजर्षि छत्रपति शाहू जी की दृष्टि में सर्वोपरि था। इसके लिये सर्वप्रथम उन्होने इनामदारों एवं कृषकों को कर्ज दिलाने पर विचार किया तथा उनको सुविधाजनक किश्तों में ऋण और अनुदान देने का निर्णय लिया। छत्रपति शाहू जी ने अपना शासन दृढतापूर्वक प्रारम्भ कर दिया। उन्होने छत्रपति की हैसियत से शिरोल में अपना कैम्प किया।

वहाँ वे आस–पास के गाँवों में गये। सभी किसानों और मजदूरों से खुलकर मिले उनकी कठिनाईयाँ सुनी उनको दूर करने का प्रयास किया। शिकार खेलने के लिए जब शाहूजी निकलते थे तो गाँवों में रूककर साधारण लोगों से मिलते, निर्धन किसानों, चीथड़े लपेटे मजदूरों से बात करते उनकी मुसीबतो को ध्यान से सुनते और उनको आश्वासन व सांत्वना प्रदान करते तथा तदनुसार नियमों और कानूनों को मोड़कर गरीब जनता की विपत्तियों को निरात करते थे। कभी–कभी अपना राजकीय भोजन गरीबों के सड़े–गले खानों से बदल लेते। राजा होकर भी मानव संवेदनशीलता से सम्पन्न थे। वे एक आदर्श शास्त्र के गुणों और विवेकशीलता से सम्पन्न थे। उनके गरीब प्रजा अपने महाराजा के प्रति गहरी भक्ति रखती थी। वे अल्पकाल में ही इतने लोकप्रिय हो गये थे कि इतिहास उनके जीवनकाल से धन्य हो गया। एक बार छत्रपति शाहूजी नरसोबाबाड़ी गए जहां उन्होने कोढ़ियों को देखा। शाहू जी उन कुष्ट पीड़ित लोगों के लिए अलग आवास बनाने पर विचार करने लगे। कुछ ही समय बाद जब 22 जून 1897 में कोल्हापुर मे विक्टोरिया कुष्ठ शरणग्रह बन गया तो किसी सीमा तक कोढियों की समस्या हल हो गयी। बाद में इस शरणग्रह को अनुस्करा स्थान्तरित कर दिया।

छत्रपति शाहूजी की प्रबल आकांक्षा थी कि शासन को चुस्त एवं प्रभावी बनाने के लिए समर्थ अधिकारी नियुक्त किये जाये। वे चाहते थे कि गैर ब्राहमण जातियों से युवकों को नियुक्त करके उनको प्रशासन की ट्रेनिंग दी जाए, जिससे कि पिछड़े और निर्बल वर्ग के लोगों को भी शासन में हिस्सा मिले और शासन सुदृढ एवं सन्तुलित बन सके। इतना ही नहीं ऐसा करने पर निर्बल वर्गों में शिक्षा प्राप्त करने का उत्साह एवं प्रेरणा मिलेगी। महाराज की इस नीति पर मुख्य न्यायाधीश जोशी आक्रोश में

गरज कर बोले कि जब कम वेतन पर अधिक योग्य व्यक्ति ब्राह्मणों में उपलब्ध है तो इनको क्यों नहीं रखा जाता? अपनी इस नीति के तहत शाहू जी ने जाधव परिवार के विठोजी को सरसूभा का प्रोबेशनरी एसिस्टेंट के पद पर नियुक्त किया। जाधव एक मेघावी छात्र थे। हाईस्कूल, बी0ए0, एम0ए0 सभी प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण थे। किन्तु ईर्ष्या और द्वेष के कारण नियुक्त हो जाने के बाद भी स्थान यह कहकर नहीं दिया गया कि पहले उनको अपनी शिक्षा पूरी करनी चाहिये। ब्राह्मणों और ब्राह्मणी समाचार पत्रों ने शाहू जी की इस नीति की कटु आलोचनाएँ प्रकाशित की। ब्राह्मणों में किसी भी स्तर का हो गैर ब्राह्मण को अपने बराबर या अपने से ऊँचा देख सकने की उदारता कभी नहीं रही।

आज समाज, समता और जाति, भेद समाप्ति का संकल्प लेकर आजादी प्राप्त करने के बाद भी जातीय व्यवस्था को अधिक मजबूत आधार प्रदान करता जा रहा है।

वर्तमान समय में पुनः ऐसे समाज सुधारकों को स्मरण करने की आवश्यकता हुई जिन्होंने समाज से असमानता जाति–भेद, ऊँच–नीच का व्यवहार समाप्त करना चाहा था।

समाज सुधारकों में छत्रपति शाहू जी महाराज भी एक थे। जिन्होंने जाति–भेद, ऊँच–नीच का व्यवहार समाज में समाप्त करने के लिए जीवन पर्यन्त संघर्ष किया। छत्रपति शाहू जी द्वारा दलितों के शैक्षिक उत्थान में किये गये योगदान की विस्तृत जानकारी प्राप्त करना प्रस्तुत अध्ययन का लक्ष्य है।

अध्ययन का सीमांकन

शोधकर्ती राजर्षि छत्रपति शाहू जी की विचारधारा से अत्यन्त प्रभावित हुई है। अतः शोधकार्य के लिए समस्या का चुनाव निम्न प्रकार किया गया है–

"भारत में छत्रपति शाहू जी महाराज का शैक्षिक योगदान विशेष रूप से दलितों के शैक्षिक उत्थान में।"

(क) शैक्षिक : इस शीर्षक के अन्तर्गत सर्वप्रथम शिक्षा का अर्थ, शिक्षा की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, मूल आधार तथा सिद्धान्तों का अध्ययन किया जायेगा। तत्पश्चात शिक्षा के क्षेत्र में राजर्षि छत्रपति शाहू जी द्वारा किये गये कार्यों का वर्णन किया जायेगा।

(ख) विशेष रूप से दलितों के शैक्षिक उत्थान में –

1. समाज में असमानता न रहे। जाति भेद, ऊँच–नीच, का व्यवहार समाज में समाप्त हो।

2. प्राईमरी स्कूल, हाईस्कूल और कॉलेज के छात्रों में जातियों के आधार पर भेदभाव न बरता जाये।

3. सरकारी विभागों में कार्य कर रहे दलित जाति के कर्मचारियों के साथ शालीनता का व्यवहार करें तथा उनके साथ छुआ–छूत का भाव न रखें।

भारत वर्ष की विशालता को देखते हुए शोधकर्ती ने यह अध्ययन केवल छत्रपति शाहू जी महाराज के जीवन – परिचय, भारत में शिक्षा में योगदान (दलितों के लिए विशेष) और उनके कार्यों तक सीमित है।

शोध विधि एवं उपकरण तथा स्त्रोत

प्रस्तुत समस्यात्मक अध्ययन में ऐतिहासिक विधि का प्रयोग किया गया है क्योंकि इतिहास किसी भी क्षेत्र में अतीत की घटनाओं का एकीकृत वर्णन है।

वर्तमान की समस्याओं को हल करने के लिए अतीत के अनुभवों से लाभ उठाना ऐतिहासिक अनुसंधान की उपयोगिता का तर्क संगति प्रदान करता है। अतीत केवल अतीत ही नहीं वर्तमान को समझने की कुंजी है।

ऐतिहासिक विधि :

इतिहास किसी ज्ञान के क्षेत्र में अतीत की घटनाओं की एकीकृत वर्णन है जो सम्पूर्ण साहित्य के लिए समालोचनात्मक खोज का प्रतिनिधित्व करता है। किसी भी अध्ययन का ऐतिहासिक उपगमन अतीत के जीवन के किसी पक्ष के वर्णन करने के प्रयास की ओर संकेत करता है।

स्त्रोत :–

1. **प्रमुख साधन** : मौलिक अभिलेख अथवा अवशेष जो किसी भी घटना अथवा तथ्य के प्रत्यक्ष साक्षी होते हैं – प्रमुख स्त्रोत की संज्ञा दी जाती है। वे ऐतिसाहिक अनुसंधान के आधारभूत दत्तों के स्त्रोत होते हैं तथा इसके लिए ठोस एवं सबल आधार प्रस्तुत करते हैं वे दो प्रकार के हो सकते हैं।

ज्ञात रूप से संचरित सूचनायें :

भौतिक अथवा लिखित प्रमाण पत्रों के रूप में अथवा किसी घटना विशेष में भाग लेने वाले या उसको देखने वालों द्वारा लिखे गये अथवा

आलेख रखे गये जैसे–संविधान, चार्टस, न्यायालय के निर्णय, शासकीय आलेख, आत्मचरित्र वर्णन, पत्र वंशावली, लाईसेन्स, घोष्णा–पत्र, मानचित्र, प्रमाण–पत्र, विधेयक, रसीदें, पत्रिका तथा समाचार–पत्र, प्रचार–पत्र, रेखाचित्र, पुस्तकें, सूची–पत्र, आलेख, प्रतिलेखन तथा अनुसंधान प्रतिवेदन।

अवशेषों के रूप में अज्ञात प्रमाण :

उदाहरणार्थ मानवीय अवशेष (जमीन से खोदकर निकाले गये अवशेष, औजार, हथियार, घरेलु वस्तुएँ तथा वस्त्र), भाषायें, साहित्य, कला एवं विभिन्न प्रकार की संस्थायें।

2. गौण साधन :

जिन व्यक्तियों ने न तो मौलिक घटना को देखा है और न उसमें सक्रिय रूप से भाग ही लिया है– सूचना के ऐसे साधन गौण साधन ही कहे जाते हैं। वैज्ञानिक अनुसंधान सम्बंधी कार्यों हेतु इन साधनों का उपयोग सामान्यतः सीमित होता है, क्योंकि इन साधनों के द्वारा दी गयी सूचना वास्तविक घटना में भाग लेने वाले या देखने वालों द्वारा कही गयी या लिखी गयी बातें ही प्रस्तुत की जाती है। ऐसी सूचनाएँ बहुधा मौलिक घटना से कई गुना दूर होती है। अधिकांश इतिहास की पाठ्य पुस्तकें तथा ज्ञान कोष गौण साधनों के उदाहरण हैं।

एक अच्छे अनुसंधान कार्य के लिए आवश्यक है कि प्राथमिक साधन से ही अधिकतर दत्त खोजने चाहिये। प्राथमिक साधनों के विषय में सूचना प्राप्त करने हेतु गौण साधनों का उपयोग कभी–कभी किया जा सकता है, परन्तु उन्हे अन्तिम समझकर उन पर विश्वास नहीं किया जा सकता है।

परिकल्पना

आज समाज, समता और जाति–भेद समाप्ति का संकल्प लेकर आजादी प्राप्त करने के बाद भी जातीय व्यवस्था को और अधिक मजबूत आधार प्रदान करता जा रहा है।

वर्तमान समय में पुनः ऐसे समाज–सुधारकों को स्मरण करने की आवश्यकता हुई, जिन्होने समाज से असमानता जाति–भेद, ऊँच–नीच का व्यवहार समाप्त करना चाहा।

समाज–सुधारकों में छत्रपति शाहू जी महाराज भी एक थे जिन्होने भारत में शिक्षा में महत्वपूर्ण योगदान दिया विशेष रूप से दलितों की शिक्षा में जाति–भेद, ऊँच–नीच का व्यवहार समाज में समाप्त करने के लिए जीवन पर्यन्त संघर्ष किया। छत्रपति शाहू जी महाराज द्वारा दलितों के शैक्षिक उत्थान के लिए किये गये योगदान की जानकारी प्राप्त करने के लिए प्रस्तुत अध्ययन की परिकल्पना की।

सम्बन्धित साहित्य का सर्वेक्षण

सम्बन्धित साहित्य का अर्थ एवं परिभाषा:—

सम्बन्धित साहित्य से तात्पर्य अनुसंधान को समस्या से संबंधित उन सभी प्रकार की पुस्तकों, ज्ञान, कोषों, पत्र—पत्रिकाओं प्रकाशित तथा अप्रकाशित शोध—प्रबन्धों एवं अभिलेखों आदि से हैं। जिनके अध्ययन से अनुसंधानकर्ता को समस्या के चयन, परिकल्पनाओं के निर्माण, अध्ययन की रूप रेखा तैयार करने एवं कार्य को आगे बढ़ाने में सहायता मिलती है।

सम्बन्धित साहित्य के अध्ययन का अर्थ है— अनुसंधान की रिपोर्टस का पठन, व्यापन और मूल्यांकन। साहित्यिक पुननिरक्षिण, नैतिक विज्ञान, प्राकृतिक विज्ञान, सामाजिक विज्ञान और मानव विज्ञान की बहुत सी अनुसंधान योजनाओं का आधार है। सम्बन्धित साहित्य का पुननिरीक्षण अनुसन्धानकर्ता को उस पिछले कार्य की जानकारी प्रदान कराता है जो हो चुका है। पुनःनिरीक्षण का परिणाम वस्तुतः अनुसंधान में प्रयुक्त होने वाले आंकडों को उपलब्ध कराता है। यह उन साधनों को अवगत कराता है जिनसे समस्या के समाधान की दिशा में बहुत समीप पहुँच जाते हैं।

जब तक यह न ज्ञात होगा कि क्षेत्र विशेष में दूसरे व्यक्तियों ने क्या किया है और कितना होना शेष रह गया है, तब तक ऐसी अनुसंधान योजना को विकसित नहीं कर सकते, जोकि क्षेत्र में, ज्ञान वर्द्धन में सहायक हो।

गुड, बार तथा स्केट्स :— "एक कुशल चिकित्सक के लिए यह आवश्यक है कि वह अपने में हो रही औषधि सम्बन्धी आधुनिकतम खोजों से परिचित होता रहे। उसी प्रकार शिक्षा के जिज्ञासु छात्र, अनुसंधान के

क्षेत्र में कार्य करने वाले तथा अनुसंधानकर्ता के लिए भी उस क्षेत्र से सम्बंधित सूचनाओं एवं खोजों से परिचित होना आवश्यक है।''

सम्बन्धित साहित्य के सर्वेक्षण के लक्ष्यों का विश्लेषण निम्नानुसार करते हैं –

1. यह प्रदर्शित करने के लिए कि बिना आगामी अन्वेषण किये ही, क्या उपलब्ध साक्ष्य समस्या का समाधान उपयुक्त ढंग से कर सकता है। इस प्रकार पुनरावृन्ति होने की शंका का निर्माण हो जाता है।

2. समस्या के व्यवस्थापन की दृष्टि से उपयोगी विचार, सिद्धान्त व्याख्या अथवा उपकल्पनायें उपलब्ध कराना।

3. समस्या के अनुकूल शोध प्रणाली प्रस्तावित करना।

4. परिणामों की व्याख्या करने की दृष्टि से उपयोगी तथा तुलनात्मक दत्तों की खोज करना तथा शोधकर्ता की सामान्य विद्वता में योग प्रदान करना।

सामान्यतः दो प्रकार के प्रदत्त होते हैं :

1. प्राथमिक 2. गौण

चार्टर वी0 गुड के अनुसारः– ''प्रकाशित साहित्य के विज्ञान एवं बहुमूल्य खजाने की चाभी व्याख्यात्मक अनुमान और महत्वपूर्ण समस्याओं के स्त्रोतों के दरवाजे खोल सकती है।'' सम्बन्धित साहित्य विषय–वस्तु के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त करने में सहायता तो देता ही है साथ ही साहित्यिक पुनर्निरीक्षण खोजकर्ता की अन्तदृष्टि को भी विकसित करता है। इस प्रकार उपलब्ध सूचनाएँ बहुमूल्य समय को बचाती है।

सम्बन्धित साहित्य का महत्व :

1. शोध–प्रबन्ध के एक महत्वपूर्ण अंग के रूप में अनुसंधानकर्ता के ज्ञान उसकी स्पष्टता तथा कुशलता को स्पष्ट करता है।

2. सभी प्रकार के विज्ञानों तथा शास्त्रों में अनुसंधान कार्य का आधार होता है। इसके अभाव में एक इंच भी आगे नहीं बढ़ सकते हैं।

3. अब तक उस क्षेत्र में हो चुके कार्य की सूचना देता है।

4. पहले किये गये कार्य के आँकडे वर्तमान अध्ययन में सहायक होते हैं।

5. यह समस्या के अध्ययन में सूझ पैदा करता है।

6. समस्या के सीमांकन में सहायक होता है।

सम्बंधित साहित्य के स्त्रोत : पुस्तकालय में उपलब्ध किसी भी शोध के क्षेत्र में विद्यमान सूचना के स्त्रोत दो प्रकार के हो सकते हैं :–

1. प्रत्यक्ष स्त्रोत

2. अप्रत्यक्ष स्त्रोत

शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षा–साहित्य के रूप में सूचना के प्रत्यक्ष स्त्रोत अधोलिखित प्रकार के प्राप्त होते हैं :–

1. पत्रिकाओं में उपलब्ध सामयिक साहित्य।

2. ग्रन्थ एक ही विषय पर निबन्ध–पुस्तिकायें, वार्षिक पुस्तकें तथा बुलैटिन।

3. स्नातक, डॉक्टरल तथा अन्य शोध प्रबन्ध।

4. कुछ विविध स्त्रोत जैसे शिक्षा पर शासन के प्रशासन।

सूचना के अप्रत्यक्ष स्त्रोत अथवा शिक्षा साहित्य के लिए निर्देशिकायें निम्न रूपों में प्राप्त होती है :–

1. शिक्षा का विश्व ज्ञान कोष
2. शिक्षा सूची पत्र
3. शिक्षा सार
4. सन्दर्भ ग्रन्थ सूची एवं निर्देशिकायें
5. जीवन गाथा सम्बंधी सन्दर्भ
6. उद्धरण स्त्रोत
7. विविध अन्य स्त्रोत

प्रस्तुत शोध में सम्बन्धित साहित्य :

प्रस्तुत शोधकर्ता में नेहरू जी, गाँधीजी, स्वामी दयानन्द, स्वामी विवेकानन्द डॉ0 अम्बेडकर का दलितों के उत्थान के क्षेत्र में विचारों का सीमाकंन किया गया है :–

नेहरू जी :

1. देश में जितने भी अल्पवर्ग से सम्बंधित व्यक्ति है, उन्हें विशेष सुविधायें दी जायेगी, जिससे कि वे उन्नति कर सकें।

2. देश में आर्थिक असमानतायें व्याप्त हैं और समाप्त करने के लिए उन्होने विभिन्न प्रकार की योजनाओं को जन्म दिया, जिससे देश के निर्धन वर्ग भी आगें बढ़ सकें।

गाँधी जी :

गाँधी जी किसी भी व्यक्ति को जन्म के आधार छोटा अथवा बड़ा नहीं समझते। वे तो समानता के लिये निरन्तर संघर्ष करते रहे। वे कहते हैं कि ईश्वर ने सबको समान बनाया है, किन्तु ऊँचे वर्ण वालों ने हरिजनों को समान में निम्नतम स्थान दिया है। यह समाज की गिरी हुई भावना का परिणाम है, न कि इसे ईश्वर ने बनाया है।

यह न पूर्व कर्मो का परिणाम और न दैवी उत्पत्ति का। गाँधी जी ने अछूतों को हरिजन नाम दिया। वे कहते हैं– हरिजनों का ऋण संवर्णों के सिर पर चढ़ा है, उसे उन्हे स्पष्ट रूप से स्वीकार कर लेना चाहिये और सवर्णों को वह ऋण पाई–पाई चुका देना चाहिये। ऐसा सम्पूर्ण ऋण हृदय–परिवर्तन से ही हो सकता है।

स्वामी दयानन्द सरस्वती :

हरिजनों की शिक्षा कर अधिकार दिलाने के लिए संघर्ष किया। शिक्षा के क्षेत्र में स्वामी जी का योगदान काफी महत्वपूर्ण है, क्योंकि उन्होने उस वर्ग को शिक्षित करने का प्रयत्न किया जिसे समाज में शिक्षा का अधिकार नहीं दिया था। वे वर्ग थे– हरिजन और स्त्री। इसके लिए उन्होने स्कूलों की स्थापनायें की इन्हे प्रेरित किया कि वे वेदों का अध्ययन करें। इन्हे समाज में समान स्तर दिलाने का प्रयत्न किया।

स्वामी विवेकानन्द :

स्वामी विवेकानन्द, राजा राममोहन राय और स्वामी दयानन्द सरस्वती की तरह ही जाति–पाँति, छुआ–छूत, धार्मिक अंधविश्वास तथा पुरोहित वाद आदि के विरोधी थे। स्वामी विवेकानन्द जी ने 1 मई सन् 1817 को रामकृष्ण मिशन की स्थापना की। इस संस्था का मुख्य उद्देश्य वेदान्त की शिक्षा का प्रचार और प्रसार करना तथा हरिजन और निर्धन व्यक्तियों की सेवा करना।

रामकृष्ण मिशन के निम्नलिखित उद्देश्य है :–

1. निर्धन और अछूत व्यक्तियों की सेवा करना।
2. मानव–कल्याण की भावना का प्रसार करना।
3. सभी धर्मों के व्यक्तियों में भाई – चारे की भावना बढ़ाना।
4. वेदान्त दर्शन का सन्देश घर–घर पहुँचना।
5. समाज सेवा के माध्ययम से मानवता वादी विचारों का प्रचार व प्रसार करना।

डॉ0 अम्बेडकर द्वारा उद्बोधन :–

"पढ़ो, संगठित बनो, प्रचारक बनो आत्मविश्वासी बनो। जो लड़ रहें हैं वह सब कुछ इज्जत के लिए लड़ रहे हैं। इज्जत से रहना मनुष्य का जन्मसिद्ध अधिकार है।"

"यदि जीना चाहते हो तो दीनता को त्याग दो, जिन्दादिल होकर जियो। जैसा इस देश के दूसरे मनुष्यों को प्राप्त है वैसे ही अन्न वैसे ही

कपड़े और वैसे ही मकान तुम लोगों को भी चाहिये। यह तुम्हारा जन्मसिद्ध अधिकार है। इस अधिकार को प्राप्त करने के लिए तुम्हे ही आगे बढ़ना होगा और मजबूत हृदय से काम करना होगा।'' जाति प्रथा या चातुर्वणर्य एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था है जो लोगों को निर्जीव, पंगु और लूला बनाकर उन्हे प्रगतिशील उत्तम कार्यों के लिए असमर्थ कर देती है।

महात्मा ज्योतिराव फूले का आत्म–विश्वास :

''जब शूद्रों, अति शूद्रों, कोल, भीलों के बच्चे जिनको नीच, शूद्र, अछूत कहकर धिक्कार है, धीरे–धीरे समुचित ज्ञान और शिक्षा प्राप्त करेगें तो एक दिन उन्हीं के बीच कोई महान व्यक्ति प्रादुर्भूत होगा, यह पक्की भविष्यवाणी है।'' महात्मा फूले की भविष्यवाणी सच्ची निकली। उनके विचारों और दर्शन के अनुयायी कोल्हापुर नरेश छत्रपति शाहूजी तथा डॉ0 अम्बेडकर जैसे विद्वरेण्य नेताओं का अविर्भाव हुआ, जिन्होने अछूतोंद्वार के लिए गहन संघर्ष किया।

वस्तुतः सम्बन्धित साहित्य के अध्ययन के बिना अनुसंधानकर्ता का कार्य अंधेरे में तीर चलाने के समान होगा। इसके अभाव में उचित दिशा में वह एक भी पग आगे नहीं बढ़ सकता, जब तक उसे ज्ञात न हो कि क्षेत्र में कितना कार्य हो चुका है। किस विधि से कार्य किया गया है तथा उसके निष्कर्ष क्या प्राप्त हुए हैं, तब तक न तो वह अपनी समस्या का निर्धारण कर सकता और न ही रूपरेखा तैयार करके कार्य को सम्पन्न कर सकता है।

सम्बन्धित साहित्य का अनुसंधान के क्षेत्र में अपना अलग ही स्थान है। यह जंजीर की लडियों के समान है जिस प्रकार जंजीर की प्रत्येक लड़ी महत्वपूर्ण होती है ठीक उसी प्रकार अनुसंधान हेतु प्रत्येक लड़ी चरण

महत्वपूर्ण होता है। जैसे सूर्य के प्रकाश से अन्धकार नष्ट होता है उसी प्रकार सम्बन्धित साहित्य अनुसंधान कर्ता की अज्ञानता रूपी विभिन्न समस्याओं के समाधान में सहायता करता है व अनावश्यक पुनरावृत्ति, समय व श्रम को बचाता है। कभी–कभी समस्या के अध्ययन की पुनरावृत्ति भी आवश्यक है क्योंकि एक सन्दर्भ में जो अध्ययन किया गया है वही अध्ययन दूसरे सन्दर्भ में उपयोगी हो सकता है। कभी–कभी एकन्यादर्श पर किये गये अध्ययन के निष्कर्ष सन्देहात्मक हो सकते हैं ऐसी स्थिति में उसी न्यादर्श पर दूसरा अध्ययन उपयोगी हो सकता है। कभी–कभी अध्ययन की तकनीक पर निष्कर्ष आधारित हो जाते हैं इसलिए दूसरी तकनीक अपनाकर उसी विषय पर अध्ययन करके एक नई दिशा और निष्कर्ष प्राप्त किया जा सकता है। समय व परिस्थिति के अनुसार विभिन्न निष्कर्षों के अर्थों में कालान्तर में परिवर्तिन होता रहा है। इन सभी निष्कर्षों और उनके अर्थों से शोधकर्ती को परिचित होना आवश्यक है। इससे उसे अपने शोध के निष्कर्षों एवं अर्थों को परिभाषित करने में बड़ी सुविधा होती है।

पूर्वकृत अध्ययनों की सूचनाओं की अच्छी सुविधायें देश में अभी उपलब्ध नहीं है। इसलिए किसी भी शोधकर्ता को विभिन्न अध्ययनों की जानकारी ठीक–ठाक नहीं मिल पाती है। विभिन्न विषयों के अध्ययन की सूची की भी कोई उचित व्यवस्था नहीं है। फिर भी शोधकर्ती ने विभिन्न सूत्रों से पूर्वकृत अध्यायों की समीक्षा करने का प्रयास किया है।

सम्बन्धित शोध अध्ययनों का संक्षिप्त विवरण काल क्रमानुसार

शर्मा उमारानी (1989)[1] ने अपने शोध ग्रन्थ **"A comperative study of the educational ideas of Sarvapalli Radhakrishna and Bertrand Russel"** में दोनों महापुरूषों द्वारा विश्लेषित बुनियादी शिक्षा की प्रासंगिकता का वर्णन किया गया है। इसका विवेचनात्मक अध्ययन ही प्रस्तुत शोध का मुख्य बिन्दु था। इनके अध्ययन का उद्देश्य मनुष्य को संकीर्णता से ऊपर उठाना है, यह केवल शिक्षा द्वारा ही सम्भव है।

द्विवेदी श्यामनारायण (1990)[2] ने अपने शोध ग्रन्थ आचार्य नरेन्द्र देव के सामाजिक एवं राजनैतिक चिन्तन के शैक्षिक निहितार्थ में आचार्य जी के शिक्षा दर्शन का प्रतिपादन किया है। उनके सामाजिक–राजनैतिक चिन्तन के शैक्षिक निहितार्थों को स्पष्ट करते हुए उन्होंने आचार्य जी को आधुनिक भारतीय शिक्षा शास्त्रियों को स्पष्ट करते हुए उन्होंने आचार्य जी को आधुनिक भारतीय शिक्षा शास्त्रियों की पंक्ति में प्रतिष्ठापित किया है और बताया है कि आचार्य जी के विचारों से भारतीय शिक्षा के प्रचलित ढांचे को स्वस्थ आधार मिल सकता है।

सुनन्दा समादर (1990)[3] **ने अपने शोध ग्रन्थ में "Educational Contribution of Pandit Ishwar Chandra Vidya Sagar Analysis of humanism materialism and scientism in his educational philosophy "** पं0 ईश्वर चन्द्र विद्यासागर द्वारा शिक्षा के क्षेत्र में किये गये योगदान का वर्णन किया तथा उनके द्वारा मानवता तथा विज्ञान के क्षेत्र में भी किये गये कार्यों का वर्णन किया।

---

[1] "A comparative study of the educational ideas of Sarvapalli Padhakrishnan and Bertrand Russel"-24 उमा रानी शर्मा – पी0 एच0 डी उपाधि के लिये प्रस्तुत

[2] आचार्य नरेन्द्र देव के सामाजिक एवं राजनैतिक चिन्तन के शैक्षिक निहितार्थ– श्यामनारायण द्विवेदी– पी0 एच0 डी0 उपाधि के लिये प्रस्तुत''

[3] Fourth educational survey – M.B. Buch N.C.E.R.T., New Delhi

गोगेट वी0वी0 (1991)[4] द्वारा प्रस्तुत शोध–ग्रन्थ **"A critical study of Samarth Ramdas's contribution of the field of education"** में समर्थ गुरू रामदास द्वारा शिक्षा के क्षेत्र में क्या कार्य किये गये थे उनका वर्णन किया गया है। शिक्षा के उन्नयन के लिए समर्थ गुरू रामदास ने क्या कार्य किये तथा वर्तमान समय में उनके द्वारा शैक्षिक प्रसार के लिए किये गये कार्यों की प्रासंगिकता क्या है, का वर्णन किया गया है। इसमें समर्थ गुरू रामदास के सामाजिक कार्यों का भी उल्लेख किय गया है।

अग्रवाल कुसुम (1992)[5] द्वारा रचित शोध ग्रन्थ "Educational philosophy of Ram Tirth" में रामतीर्थ पर अध्ययन किया। रामतीर्थ स्वामी द्वारा प्रतिपादित शिक्षण विधि कौन सी थी? रामतीर्थ स्वामी की शिक्षा क्या थी ? इसका स्वरूप क्या था? इनके शैक्षिक दर्शन में आज के परिवेश में कहां समानता है और कहां असमानता है। इन सभी का समालोचन अध्ययन किया गया है।

कौर रविन्द्र जीत (1992)[6] – "A comparative study of educational philosophies of sri Arbindo and Mahatma Gandhi and their relevance of Modern Education System" इस शोधग्रन्थ में शोधकर्ता ने महात्मा गाँधी तथा श्री अरविन्द घोष पर एक तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया है। गाँधी तथा अरविन्दों के शैक्षिक दर्शन के महत्वपूर्ण पक्षों का उल्लेख किया गया है। इनके शैक्षिक दर्शन में कहाँ एक दूसरे में समानता है और कहाँ असमानता इसका समालोचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

---

[4] Fourth educational survey – M.B. Buch N.C.E.R.T., New Delhi
[5] Fourth educational research survey – M.B. Buch N.C.E.R.T., New Delhi
[6] Fourth educational research survey – M.B. Buch N.C.E.R.T., New Delhi

राम सरदार (1993)[7] – **"डॉ0 राधाकृष्णन और आचार्य नरेन्द्र देव की शैक्षिक विचारधारा तथा वर्तमान भारतीय शिक्षा के लिए इसकी प्रांसगिकता"** उपर्युक्त शोध अवध विश्वविद्यालय फैजाबाद में हुआ था।

उपर्युक्त शोध ग्रन्थ में डॉ0 रामसरदार ने बताया है कि भारतीय समाजवाद के प्रकाश स्तम्भ आचार्य नरेन्द्र देव दार्शनिक एवं राजनीतिक चिन्तक के रूप में विख्यात रहें हैं किन्तु भारतीयता की पृष्ठभूमि पर आधारित भारतीय शिक्षा की जो रूपरेखा उन्होने प्रस्तुत की है वह अद्वितीय है। शिक्षा के उद्देश्यों, विद्यार्थियों, अध्यापकों, विद्यालयों, विश्वविद्यालयों पाठ्यक्रम शिक्षा माध्यम, शिक्षण विधि जन शिक्षा सम्बन्धी समस्याएँ, प्रबन्धकीय व्यवस्था, अनुशासन परीक्षा प्रणाली लिपि आदि विषयों पर अपनी विचार पूर्ण प्रखर लेखनी की प्रसूति द्वारा आचार्य नरेन्द्रदेव एक शिक्षाविद के रूप में भारतीय इतिहास में अजर – अमर हो गये।

विभिन्न शिक्षा समितियों तथा आयोगों में सरकार उनको भुला नहीं सकी है तथा अधिकांश की अध्यक्षता तथा संयोजकत्व का कार्य उन्ही को सौंपा। इन विभिन्न समितियों तथा संयुक्त प्रान्तीय सरकार की माध्यमिक शिक्षा समिति, लिपि सुधार समिति, संस्कृत शिक्षा सुधार समिति, जमींदारी उन्मूलन समिति में रहकर उन्होने शिक्षा को जिस प्रकार सुधारने का प्रयास किया वह निश्चय ही उल्लेखनीय है और उसमें वास्तव में भारत के भविष्य का रचनात्मक पक्ष निहित है।

थलेडी सुभाष चन्द्र – (1994)[8] एम0एड0 की आशिंक पूर्ति हेतु प्रस्तुत लघु शोध प्रबन्ध **"डॉ0 सम्पूर्णानन्द के शैक्षिक विचारों का**

---

[7] राम सरदार – डा0 राधाकृष्णन और आचार्य नरेन्द्र देव की शैक्षिक विचारधारा तथा भारतीय शिक्षा के लिये इसकी प्रासंगिकता – पृष्ठ – 220–221

[8] डा0 सम्पूर्णानन्द के शैक्षिक विचारों का समीक्षात्मक अध्ययन – सुभाष चन्द्र थलेडी, एम0एड0 की आंशिक पूर्ति हेतु प्रस्तुत लघु शोध प्रबन्ध – कानपुर विश्वविद्यालय

समीक्षात्मक अध्ययन'' में शोधकर्ता सुभाष चन्द्र थलेडी ने बताया कि डॉ0 सम्पूर्णानन्द वास्तव में सच्चे अर्थों में महापुरूष थे। डॉ0 सम्पूर्णानन्द जी शिक्षाविद, पत्रकार, साहित्यकार, दार्शनिक, कुशल राजनीतिज्ञ, समाजसेवी, के साथ–साथ एक सच्चे देशभक्त भी थे। वास्तव में अगर उनके व्यक्तित्व को ठीक से देखा जाये तो उनके सम्बन्ध में सम्यक अध्ययन नहीं हो सका है। उन्होंने किसी की भी कृपा या समर्थन के कारण वह सब नहीं पाया है जो उनके नाम है। डॉ0 सम्पूर्णानन्द जी की समस्त उपलब्धियां उनकी स्वंय अपने द्वारा प्राप्त की गयी है। सम्पूर्णानन्द जी के चिन्तन में अपारनिधि है। हम डॉ0 सम्पूर्णानन्द जी के योगदान को कभी भुला नहीं सकते हैं।

श्रीवास्तव इन्दु (1994)[9] लघु शोध प्रबन्ध – ''डा0 राधाकृष्णन का भारतीय शिक्षा में योगदान'' में शोधकर्ती ने वर्तमान समय में प्रचलित शिक्षा के दोषों को उन्होने जहां भी उल्लेख किया है एक बात जो मैने उनके विचारों में मूलतः पायी है वह मौलिकता का विनाश। जिस पर स्पष्टतः डॉ0 राधाकृष्णन का कथन है कि धार्मिक और कलात्मक, आध्यात्मिक और नैतिक प्रवृत्ति केवल वैज्ञानिक विधि और सामाजिक नियमों में रहने से आती है। इस प्रकार के अध्ययन का परिणाम अच्छा नहीं होता और आधुनिक शिक्षा मस्तिष्क को यन्त्र बना देती है। शिक्षा के सम्बन्ध में उनके द्वारा दिये गये विचारों के अध्ययन से शोधकर्ती ने निष्कर्ष निकाला कि वे शिक्षा द्वारा एक ऐसे समाज का निर्माण करना चाहते थे जिससे राष्ट्र का उत्थान हो सके। शिक्षा के पाठ्यक्रम के सम्बन्ध में उन्होने व्यापाक शिक्षा का समर्थन किया ताकि विद्यार्थी किसी भी क्षेत्र में पिछड़ा न रह जाये।

---

[9] लघु शोध प्रबन्ध – ''राधाकृष्णन का भारतीय शिक्षा में योगदान'' शोधकर्ती – इन्दु श्रीवास्तव

जहाँ तक शिक्षा के माध्यम के सम्बन्ध की बात है उन्होने प्रादेशिक भाषा को शिक्षा का माध्यम बनाये जाने पर जोर दिया व शिक्षा के समर्थक थे जो कि पूर्णतया भारतीय ढाँचे में रची बसी हो।

शिक्षा के सम्बन्ध में सभी दार्शनिकों ने अपने बहुमूल्य स्वर्णांक्षरों से अंकित योग्य विचारों से शिक्षा के भण्डार को भरा है। आधुनिक समय में या हम यह कहें कि वर्तमान एवं भविष्य में यदि शिक्षा के स्तर को उठाना है तो निः सकोंच एवं बिना किसी स्वार्थ के हमें अपने दर्शन में अवश्य ही झोंकना चाहिये।

पाठक आनंद नारायण (1994)[10] **एम0एड0 की आंशिक पूर्ति हेतु प्रस्तुत लघु शोध प्रबन्ध "विनोबा भावे के शिक्षा दर्शन की आधुनिक समय में प्रासंगिकता का अध्ययन"** में शोधकर्ता ने बताया है कि विनोबा जी ने शिक्षा का नया अर्थ प्रदान किया है वह है उनकी यह धारणा कि "शिक्षा सहज रूप से प्रसार होने वाली क्रिया है। शिक्षा की नयी अवधारणा को प्रकट करता है।" पाठ्यक्रम के क्षेत्र में विनोबा भावे ने व्यापक दृष्टिकोण अपनाने अनुभव व प्रयोग द्वारा संचित ज्ञान द्वारा पाठ्यक्रम निर्माण एवं धार्मिक, सामाजिक और आर्थिक संकीर्णता एवं कट्टरता को दूर करने का परामर्श देकर तथा विभिन्न विषयों की समीक्षा करते हुए समावेश के लिए निर्देश प्रदान करके जागरूक शिक्षा शास्त्री होने का परिचय दिया है।

वैज्ञानिक एवं तार्किक प्रत्यक्षवादी दृष्टिकोण के आधार पर विनोबा ने शिक्षा में शोध समन्वय पद्धति, प्रश्नविधि, शिक्षण विधि, पूर्णांक विधि, स्थल से सूक्ष्म की ओर, मौखिक शिक्षण, अनुबंध पद्धति, प्रासंगिक पद्धति आदि के उपयोग पर बल देकर शिक्षण विधि के विषय में कुछ सुझाव दिया है।

---

[10] विनोबा भावे के शिक्षा दर्शन की आधुनिक समय में प्रसंगिकता का अध्ययन – आनन्द नारायण पाठक

उनकी दृष्टि में शिक्षा में, शिक्षक में प्रेम, ज्ञान और तटस्था के गुणों का समुच्चय होना चाहिये। वर्तमान स्थिति की इस आधार पर उन्होने कड़ी आलोचना की है।

शुक्ल कृष्ण कुमार (1995)[11] **ने अपने शोध प्रबन्ध "भारत के सामाजिक एवं शैक्षिक विकास के परिपेक्ष्य में आचार्य नरेन्द्र देव के शिक्षा दर्शन का समालोचनात्मक अध्ययन"** में शोधकर्ता ने आचार्य नरेन्द्र देव द्वारा प्रस्तुत किये गये शिक्षा दर्शन का प्रतिपादन किया जिसके अन्तर्गत उनकी शैक्षिक, सामाजिक, राजनीतिक विचारधारायें प्रस्तुत की गयी थी।

उन्होने बताया कि राष्ट्रीय शैक्षिक व्यवस्थायें शैक्षिक विचारधाराओं से अवश्य ही अनुप्राणित होती है। वही दूसरी ओर शैक्षिक विचारधराओं वेदान्त दर्शन से भी प्रभावित होती रही है। आचार्य नरेन्द्र देव में निर्भीकता, सत्य के प्रति दृढ़ निष्ठा, स्वदेशी की प्रबल भावना एवं मुख्य तथा वसुधैव कुटुम्बकम का भाव समाहित था। ये आचार्य नरेन्द्र देव जी के प्रमुख गुण थे। आदर्शों की स्थापना करना तथा राष्ट्रहित कार्यों के प्रति विशेष अनुराग ही उनकी नियति का परिचायक रही है।

सिंह सीमा (1995)[12] **द्वारा प्रस्तुत लघु शोध प्रबन्ध "स्वामी विवेकानन्द के शैक्षिक सिद्धान्तों का अध्ययन व वर्तमान समय में उसकी उपादेयता"** में शोधकर्ती ने विवेकानन्द के शैक्षिक सिद्धान्तों के सम्बन्ध में अध्ययन किया। अपने शोध कार्य में इन्होने वर्णनात्मक नीति अपनायी। स्वामी जी के विचार के अन्तर्गत मुख्यरूप से आत्मा, वेद, मन चिन्तन, साधना, एकाग्रता, स्वतन्त्रता आदि का चयन किया गया। स्वामी जी एक

---

[11] कृष्ण कुमार शुक्ल – "भारत के सामाजिक एवं शैक्षिक विकास के परिपेक्ष्य में आचार्य नरेन्द्रदेव के शिक्षा दर्शन का समालोचनात्मक अध्ययन"

[12] स्वामी विवेकानन्द के शैक्षिक सिद्धान्तों का अध्ययन व वर्तमान समय में उसकी उपादेयता – सीमा सिंह

भविष्य वक्ता थे। वे हीरे के सदृश अपनी चमक बिखेर कर शिक्षा को चमक प्रदान करना चाहते थे। उनके वेदान्त का एक पक्ष शंकरानन्द से सम्बन्धित था तथा दूसरा पक्ष महात्मा बुद्ध के वेदान्त से सम्बन्धित था। निष्कर्ष में यह कहा गया है कि इनके शैक्षिक विचारों द्वारा भारत का पुनरूत्थान सम्भव है या नहीं? इनके शैक्षिक विचारों का शोधकर्ता ने सीमित रूप में अध्ययन किया है। विवेकानन्द जी के शैक्षिक विचार आज के वर्तमान युग में कितने प्रांसगिक है इसका अध्ययन भी शोधकर्ता ने करने का सफल प्रयास किया है।

अशोक कुमार (1995)[13] **ने एम0एड0 की आंशिक पूर्ति हेतु अपने लघु शोध प्रबन्ध "डा0 सर्वपल्ली राधाकृष्णन के शैक्षिक विचारों का वर्तमान परिस्थिति मे प्रासंगिता का अध्ययन"** में शोधकर्ता ने डॉ0 सर्वपल्ली राधाकृष्णन के शैक्षिक विचारों का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया जिसका मुख्य आधार बेसिक (प्राईमरी) शिक्षा ही थी। किन्तु इसमें नये सन्दर्भों का अभाव था और दार्शनिक तथा तुलनात्मक पक्ष पर्याप्त रूप से व्यापक नहीं था।

सिंह अर्चना (1995)[14] **द्वारा प्रस्तुत लघु शोध प्रबन्ध "स्वामी विवेकानन्द के धार्मिक विचारो का शिक्षा में योगदान"** शोधकर्ता ने अपने शोध प्रबन्ध में विवेकानन्द को एक वेदान्ती के रूप में प्रस्तुत किया है। इसमें विवेकानन्द द्वारा प्रतिपादित योग, माया, साधना, चिन्तन एकाग्रता आदि पर विचार किया गया तथा उसे एक व्यापक रूप में प्रस्तुत किया गया।

---

[13] डॉ0 सर्वपल्ली राधाकृष्णन के शैक्षिक विचारों का वर्तमान परिस्थिति में प्रांसगिकता का अध्ययन – अशोक कुमार – एम0एड0 की आंशिक पूर्ति हेतु छत्रपति शाहूजी महाराज कानपुर विश्वविद्यालय में प्रस्तुत।

[14] स्वामी विवेकानन्द के धर्मिक विचारों का शिक्षा में योगदान अर्चना सिंह–एम0 एड0 की आंशिक पूर्ती हेतु छत्रति शाहू जी महाराज कानपुर विश्वविधालय में प्रस्तुत

द्विवेदी शैलजा (1996)[15] **लघु शोध प्रबन्ध एम0एड0 हेतु "महर्षि दयानन्द के शैक्षिक विचारों का अध्ययन एवं मूल्यांकन"** में शोधकर्ती ने दयानन्द सरस्वती जी के शैक्षिक विचारों के सम्बन्ध में अध्ययन किया। दयानन्द सरस्वती को उन्होने भारतीय शिक्षा के पुनरूत्थान का पैगम्बर माना। दयानन्द सरस्वती जी यह स्वीकार करते थे कि भारत के पुनरूत्थान के लिए आधुनिक शिक्षा की आवश्यकता है, लेकिन उनके अनुसार यह उतना महत्वपूर्ण नहीं था जितना भारतीय जनता को जाग्रत करना। स्वामी जी यह अच्छी तरह समझते थे कि उनके उद्देश्यों की पूर्ति के लिए एक संगठित प्रयास की आवश्यकता थी। इसी कारण उन्होने आर्यसमाज की स्थापना की, जिसका मुख्य उद्देश्य सभी मनुष्यों के शारीरिक, आध्यात्मिक और सामाजिक स्तर को ऊपर उठाना तथा अज्ञान को हटाकर ज्ञान के प्रकाश को फैलाना था।

जाधव रमेश[16] **–A sociological studay of marthi Biography with special refercnce to phule- urvane relation-** शोधकर्ता ने इसमें फूले के जीवन परिचय तथा उनके द्वारा समाज की विषमता को खत्म करने के लिए किये गये प्रयासों का उल्लेख किया है। फूले जी ने किस प्रकार भारत की शोषित, दलित एवं मानवता को एक सूत्र में बांधने के लिए सतत् संघर्ष किया तथा जाति प्रथा का मूलोच्छेद करके समाज के इस गर्हित कलुष को मिटाने का सुखण्ड प्रयास किया। फूले जी समाज सुधार की दिशा में अग्रणी थे। इसी कारण महात्मा ज्योतिराव फूले जी को सामाजिक एवं शैक्षिक क्रान्ति का ज्योति स्तम्भ कहा जाता है। फूले जी

---

[15]महार्षि दयानन्द के शैक्षिक विचारों का अध्ययन एवं मूल्याकंन–शैलजा द्विवेद्वी
[16]A sociological studay of marathi biography with special retrence to phule urvane relation- Ramash Jadhav

अपेक्षानुरूप सामाजिक परिवर्तन लाने के लिए और टिकाऊ रखने के लिए शिक्षा को ही सबसे अधिक प्रभावी माध्यम मानते थे।

पाण्डेय रामगोपाल (1996)[17] – **लघु शोध प्रबन्ध "नयी शिक्षा नीति के सन्दर्भ में गुरूदेव रविन्द्र नाथ टैगौर के शैक्षिक दर्शन की प्रासंगिकता का अध्ययन"** में बताया कि औपचारिक क्षेत्र ही सार्वभौमिक बुनियादी शिक्षा का लक्ष्य प्राप्त नहीं कर सकता है। सभी को विविध प्रणालियों से शिक्षा प्रदान करनी होगी। औपचारिक स्कूलों का संचालन बहुत से देशों में मुख्यतः सरकारी और निजी क्षेत्रों द्वारा किया जाता है। गैर औपचारिक स्कूल – औपचारिक स्कूलों की तुलना में कम गठित होता है।

बहुविधि शिक्षा प्रणाली का महत्व इस तथ्य से और भी बढ़ जाता है।

गीता कुमारी (1996)[18] –**"श्री अरविन्द घोष के शिक्षा–दर्शन पर उनके विचारों का दृष्टिकोण एवं आधुनिक भारत में उनके कार्यों की उपादेयता"** नामक लघुशोध–ग्रन्थ प्रस्तुत किया, जिसमें उन्होने बताया कि श्री अरविन्द जी का शिक्षा दर्शन, आध्यात्मिक साधना, ब्रहमचर्य और योग्य पर आधारित है। उनका विश्वास है कि इस प्रकार से मानव का पूर्ण विकास किया जा सकता है। अरविन्द जी के अनुसार सच्ची और वास्तविक शिक्षा केवल वहीं हैं जो मानव की अन्तर्निहित समस्त शक्तियों को इस प्रकार विकसित करती है कि वह उनसे पूर्ण रूप से लाभान्वित होता है।

---

[17] नयी शिक्षा नीति के सन्दर्भ में गुरूदेव रविन्द्रनाथ टैगोर के शैक्षिक दर्शन की प्रासंगिता का अध्ययन– रामगोपाल पाण्डेय

[18] श्री अरविन्द घोष के शिक्षा दर्शन पर उनके विचारों का दृष्टिकोण एवं आधुनिक भारत में उनके कार्यो की उपादेयता– गीता कुमारी

श्री अरविन्द जी का यह अभिवादन इस युग के एक प्रतिभाशाली व्यक्तित्व के रूप में करते हैं। वह एक राष्ट्र उद्धारक थे। वह मानवता के उन मुक्तिदाताओं में से एक थे जो हर युग तथा हर देश में होते हैं तो सनातन है तथा अपनी शाश्वत उपस्थिति में हमारे जाने या अनजाने में हमारे जीवन को परिप्लावित करते रहें हैं।

श्री अरविन्द जी में साहित्य तत्व, मीमांसा और सिद्धि की साधना परिस्थितिक आधार और सामंजस्य में पृथ्वी से स्वर्ग तक धुमावारोहण है। नि0 के0 आर0 श्री निवास अनंगमक के भव्य संक्षिप्त विवरण के अनुसार दृष्टा ने सत्य के साथ आंखे चार कर ली थी। कवि ने समाधि के महिमामयी क्षेत्रों का स्तवन किया, दार्शनिक ने अतः दर्शन को तर्क के पदों में ढाला, भोगी ने चेतना के वांछित परिवर्तन पाने के लिए प्रक्रिया को सूचीबद्ध किया तथा बहुविधि तक नीव का निर्माण किया। अपने सिद्धान्तों को उन्होने अपनी पुस्तक "दिव्य जीवन" में प्रस्तुत किया जो मानव विचार और अभीष्टता के इतिहास में एक महत्वपूर्ण संस्मरण है। सर फ्रांसिस यगहरचन्ह ने उनका यह कहकर जय-जयकार किया कि यह मेरी पीढ़ी की महानतम् पुस्तक है। आज उनके विचारों और सिद्धान्तों को अपनाकर नया समाज विकसित कर सकते है। भारत एक महान तथा एकताबद्ध स्पष्ट राष्ट्र बन सकता है।

आज हमारे देश में उनके विचारों को अपनाया जा रहा है। उनके सिद्धान्तों को अपनाकर जनता तक पहुँचाना शिक्षाविद् ों का कर्तव्य है।

मिश्रा पंकज कुमार (1996)[19] – एम0एड0 हेतु लघुशोध प्रबन्ध **"श्री अरविन्द घोष के शैक्षिक विचारों का अध्ययन"** में शोधकर्ता ने महर्षि घोष

[19]श्री अरविन्द घोष के शैक्षिक विचारों का अध्ययन–पकंज कुमार मिश्रा

के जीवन परिचय के बारे में जानकारी करने का प्रयास किया है जिसके अन्तर्गत उसने निम्न बिन्दुओ को देखा है।

1. महर्षि घोष के महत्वपूर्ण कार्यों के बारे में जानना।

2. महर्षि घोष के विभिन्न प्रकार के विचारों को जानना।

3. महर्षि घोष के शिक्षा सम्बन्धी विचारों को जानना।

4. आज की शिक्षा प्रणाली के साथ महर्षि अरविन्द घोष के विचारों की तुलना करना।

5. आज की शिक्षा प्रणाली में व्याप्त दोषों को इनके शैक्षिक विचारों के परिप्रेक्ष्य में दूर करने का प्रयास करना।

महर्षि अरविन्द घोष ने पूर्व से चली आ रही परम्परागत शिक्षा का केवल विरोध ही नहीं किया वरन् उसे जड़ से उखाडकर शिक्षा के नवनिर्माण की रूप रेखा प्रस्तुत की। अरविन्द जी ने प्राचीन संस्कृति और आधुनिकता में समन्वय करके आधुनिक समाज की आकांक्षाओं और आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए शिक्षा के पुनर्गठन की मांग की। अरविन्द जी ने शिक्षा के प्राचीन उद्देश्यों को आधुनिक समाज की आवश्यकता के अनुरूप सत्य एवं मूल्यों की आस्था रखते हुए नवीन दृष्टिकोण प्रतिपादित किया।

श्री अरविन्द घोष की विचारधारा भारतीय शिक्षा के इतिहास में महत्वपूर्ण स्थान रखती है। श्री अरविन्द जी ने शिक्षा में जीवन के लिए शिक्षा को उपयोगी बनाने पर विशेष बल दिया। उनकी शिक्षा का परम लक्ष्य बालक–बालिकाओं एवं सम्पूर्ण समाज का सर्वांगीण विकास था।

उनका जीवन आज भी सफलता के सर्वोच्च शिखर पर पहुँचकर ज्ञान ज्योति बिखेर रहा है।

वास्तव में अरविन्द घोष जी के विचार हमारे वर्तमान युग के लिए बहुत ही उपयोगी सिद्ध होगें। यदि हम उनके विचारों पर शुद्ध मन से दृष्टिपात करें और उनके विचारों को कार्य रूप दें तो एक नये युग का सूत्रपात हो सकता है।

बीना कुमारी (1996)[20] – एम0एड0 आंशिक पूर्ति हेतु, प्रस्तुत लघु शोध, **"गुरूदेव रविन्द्र नाथ टैगोर का शिक्षा दर्शन एवं वर्तमान युग में उसकी उपादेयता"** में शोधकर्ती ने बताया कि गुरूदेव रविन्द्र नाथ टैगौर भौतिकवाद के विरोधी थे। उन्होने बताया कि भारत के युगों की उपज भारतीय सभ्यता और संस्कृति व्यक्त है। इसके अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य मनुष्य को संकीर्णता से ऊपर उठाना है। यह केवल शिक्षा द्वारा तभी सम्भव है जबकि उसका माध्यम ऐसा बनाया जाये जिसमें भारतीय दर्शन और सभ्यता के तत्व हो। अनुसंधानकर्ती द्वारा भारत को रविन्द्रनाथ टैगोर का मुख्य योगदान विभिन्न उद्देश्यों, विधियों शिक्षा के पहलुओं के अन्तर्गत सार रूप में दिया गया है।

त्रिवेदी विजय कुमार (1996)[21] – ने महात्मा गाँधी के शैक्षिक एवं दार्शनिक विचारों का अध्ययन नामक लघु शोधप्रबन्ध प्रस्तुत किया। गाँधी जी के शिक्षा दर्शन का इन्होने आलोचनात्मक अध्ययन किया। अनेकों दार्शनिकों द्वारा गाँधी शिक्षा दर्शन पर उनके विचारों का प्रस्तुतीकरण किया। यह अध्ययन गाँधी शैक्षिक दर्शन की रूपरेखा प्रस्तुत करता है। गाँधी दर्शन का प्रमुख आधार बेसिक शिक्षा ही थी और बेसिक शिक्षा दर्शन

---

20 गुरूदेव रविन्द्रनाथ टैगोर का शिक्षा दर्शन एवं वर्तमान युग मे उसकी उपादेयता–बीना कुमारी

21 महात्मा गाँधी के शैक्षिक एवं दार्शनिक विचारों का अध्ययन –विजय कुमार त्रिवेदी

द्वारा व्यक्त सिद्धान्तों एवं आदर्शों का अध्ययन व्यापक दृष्टिकोण को ध्यान में रखकर किया गया है।

सुरेश (1996)[22]– लघु शोध प्रबन्ध– **"महात्मा गाँधी के शिक्षा दर्शन का टैगोर और विवेकानन्द के शिक्षा दर्शन से तुल्नात्मक अध्ययन"** में शोधकर्ता ने महात्मा गाँधी के शिक्षा दर्शन तथा उनके शैक्षिक सिद्धान्तों का विश्लेषण किया है गाँधी का शिक्षा दर्शन टैगोर तथा विवेकानन्द के परिप्रेक्ष्य में कहाँ तक सही है इसका विश्लेषण भी शोधकर्ता ने अपने शोधग्रन्थ में करने का प्रयास किया है।

मिश्र रामनिवास (1996)[23] द्वारा प्रस्तुत शोध प्रबन्ध **"पं0 जवाहर लाल नेहरू, इन्दिरा गाँधी के शैक्षिक विचारों का आलोचनात्मक अध्ययन"** शोधकर्ता ने बताया कि हम शिक्षा के बारे में बहुत सी बातें करते हैं। जाहिर है कि यह बहुत अहम एवं बुनियादी चीज़ है फिर भी आज दी जाने वाली शिक्षा और उससे होने वाले नतीजों को देखकर डर लगता है। इसका मतलब यह नहीं कि शिक्षा खराब है। लेकिन कभी–कभी गलत ढंग से शिक्षित करने के बजाय ऐसा भ्रम पैदा कर देते है कि आदमी साक्षर हो जाये और सब कुछ जान जाये। दोनो नेहरू और गाँधी के विचार लगभग एक ही तरह के थे। केवल नेहरू शांति प्रिय विचारों के व्यक्ति थे जबकि इन्दिरा गांधी क्रान्तिकारी विचारों वाली महिला थी।

---

[22] महात्मा गाँधी के शिक्षा दर्शन का टैगोर और विवेकानन्द के शिक्षा दर्शन से तल्नात्मक अध्ययन –सुरेश

[23] प0 जवाहर लाल नहेरू, इंन्दिरा गाँधी के शैक्षिक विचारों का आलोचनात्मक अध्ययन –रामनिवास मिश्र

राम नरेश (1996)[24] – एम0एड0 आंशिक पूर्ति हेतु प्रस्तुत लघु शोध **"भारत रत्न डा0 भीमराव अम्बेडकर के शिक्षा दर्शन का अन्य भारतीय शिक्षा विदों के साथ तुलनात्मक अध्ययन"**। शोधकर्ता ने यह जानने का प्रयास किया है कि आधुनिक शिक्षा में डा0 भीमराव अम्बेडकर का शिक्षा दर्शन किस प्रकार सहायक सिद्ध हो सकता है।

डा0 भीमराव अम्बेडकर की शिक्षा में समता एवं एक रूपता का रूप अपनाया गया है। वे अंधविश्वास रहित एकता सिखाने वाली एवं निर्भय बनाने वाली शिक्षा के पक्षधर थे। बाबा साहब की शिक्षा का केन्द्र बिन्दु व्यक्ति है। वे शिक्षा द्वारा बालक का सर्वांगीण विकास चाहते थे वे ऐसी शिक्षा चाहते थे जिसमें बालक स्कूल छोड़ने के बाद अपनी शिक्षा के साथ–साथ समाज सेवा भी कर सके।

इस प्रकार विस्तृत विवेचना के पश्चात् हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे है कि छात्रों के सम्पूर्ण व्यक्तित्व के विकास में डा0 भीमराव अम्बेडकर की शैक्षिक विचारधारा अन्य शिक्षा शास्त्रियों की तुलना में पूर्ण हैं।

द्विवेदी ममता (1998)[25] – **"कबीरदास के शिक्षा दर्शन का आधुनिक परिप्रेक्ष्य में समालोचनात्मक अध्ययन"** में शोधकर्ती ने कबीर का जीवन–दर्शन, कबीर के जीवन दर्शन को प्रभावित करने वाली परिस्थितियों का पता, शैक्षिक विचार, शिक्षा दर्शन को प्रभावित करने वाले कारक एवं उनकी आधुनिक परिप्रेक्ष्य में समानता पर अध्ययन किया। उनके अनुसार कबीरदास आध्यात्मिक विचारधारा के परिपालक तथा समर्थक थे। विश्व बन्धुत्व के आदर्श पर समाज रचना, परोपकार की शुद्धि, जाति प्रथा की

---

[24]भारत रत्न डा0 भीमराव अम्बेडकर के शिक्षा–दर्शन का अन्य भारतीय शिक्षाविदो के साथ तुल्नात्मक अध्ययन– राम नरेश।

[25] कबीर दास के शिक्षा–दर्शन का आधुनिक परिप्रेक्ष्य में समालोचनात्क अध्ययन –ममता द्विवेद्वी।

निन्दा, सर्वगुण सम्पन्न, सदाचरण शील की सराहना करते, एवं धन संचय को पाप (अधर्म) कहते थे उनका आदर्श ''संत न बांधे गठरी'' रहा है। कबीरदास जी सादा जीवन व्यतीत करना चाहते थे तथा व्यक्तियों को भी सादा जीवन व्यतीत करने की शिक्षा देते थे।

कबीरदास ने बंधन को दुख का मूल कारण माना है। मोह, माया, क्रोध, लोभ, अहंकार आदि सब बंधन है जिसमें फँसकर व्यक्ति अपनी सुध–बुध भूल जाता है। इन बंधनों को हम आत्मसंयम एवं आत्म साधना द्वारा दूर कर सकते हैं।

विभवनाथ (2000)[26] – एम0एड0 की आंशिक पूर्ति हेतु प्रस्तुत लघु शोध प्रबन्ध **''गोपाल कृष्ण गोखले के शैक्षिक विचारों का अध्ययन''** गोपाल कृष्ण गोखले प्राईमरी शिक्षा एवं स्त्री शिक्षा के प्रबल समर्थक थे। वे मानते थे कि जब तक स्त्री को शिक्षित नहीं किया जायेगा तब तक देश में पूर्ण साक्षरता हो ही नहीं सकती है।

गोपाल कृष्ण गोखले ने कहा था कि 6 से 10 आयु वर्ग वाले बालको को अनिवार्य रूप से प्राथमिक विद्यालयों में भेजा जाये। इस नियम का उल्लंघन करने वाले को कठोर दण्ड दिया जाये। जो अभिभावक/माता–पिता अपने बालकों को शिक्षा नहीं देते हैं तथा उन्हें विद्यालय में भेजने में बाधा उत्पन्न करते हैं उन्हे निश्चित रूप से दण्ड का भागीदार बनाया जाये। ग्राम तथा ब्लॉक स्तर पर प्रौढ़ शिक्षा के कार्यक्रम सम्पादित किये जायें जिसमें मुख्यता स्त्री शिक्षा पर बल दिया जायें क्योंकि पूर्ण साक्षरता लाने के लिए हमें स्त्रियों को जागरूक करना होगा।

---

[26] गोपाल कृष्ण गोखले के शैक्षिक विचारों का अध्ययन–विभवनाथ

धर्मराज (2000)[27] एम0एड0 की आंशिक पूर्ति हेतु प्रस्तुत लघु शोध **"सन्त गाडगे का शैक्षिक दर्शन एवं उपयोगिता"** दलितों पिछड़ों की शिक्षा में संत गाडगे जी द्वारा दिये गये योगदान की जानकारी प्राप्त करना ही प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य है।

शोधकर्ता द्वारा ज्ञात किये गये निष्कर्ष निम्न है –

1. सभी वर्गों के लिए शिक्षा की उचित व्यवस्था होनी चाहिये, शिक्षा ही ज्ञान का आदि श्रोत है और ज्ञान ही शक्ति एवं सम्रद्धि का मूल आधार है।

2. शिक्षा विहीन मनुष्य अधूरा और अपूर्ण होता है बिना शिक्षा के न तो नैतिकता का बोध होता है और न ही भौतिक जगत का। द्वेष और घृणा के स्थान पर प्रेम कल्याणकारी है। जिस देश में शिक्षा अभाव है उस देश का शासन पंगु होता है। वस्तुतः शासन का मुख्य आधार शिक्षा ही है।

शोधकर्ता ने निम्न सुझाव भी दिये है –

क. समाज में असमानता खत्म हो, जातिभेद, ऊँचनीच का व्यवहार समाज में समाप्त हो।

ख. प्राईमरी स्कूलों, हाईस्कूलों, कालेजों और विश्वविद्यालयों के छात्रों के साथ जातियों के आधार पर किसी प्रकार का भेद–भाव न रखा जाये।

ग. सरकारी विभागों में कार्य कर रहे दलित जाति के कर्मचारियों के साथ शालीनता का व्यवहार करें तथा उनके साथ छुआ–छूत का भाव न रखें।

---

[27] संत गाडगे का शैक्षिक दर्शन एवं उपयोगिता–धर्मराज।

उपरोक्त अध्ययनों के अवलोकन से यह ज्ञात होता है कि उसी व्यक्ति या विषय पर कई अध्ययन हुये हैं। शिक्षा दर्शन की मीमांशा करते हुए बुच द्वारा संकलित सर्वे "सर्वे आफ रिचर्स इन एजूकेशन" में यह स्पष्ट किया गया कि भारत जैसे विशाल देश में जहां बहुत से विश्वविद्यालय हैं शोध अध्ययनों की पुनरावृत्ति से नहीं बचा जा सकता है। नये विकासों के प्रकाश मे किसी विषय के पुनः मूल्यांकन करने में कोई हर्ज नहीं है।

पूर्वकृत अध्ययनों से शोधकर्ती को अत्यधिक लाभ हुआ है। वह प्रारम्भ से न केवल अपना पथ प्रशस्त कर सकी अपितु शोधकर्ती की निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया में संशोधन और परिवर्तन भी किये और अपने निष्कर्ष की पुष्टि के लिए विषय से सम्बन्धित अनेक मूल श्रोतों का अवगाहन भी किया इसके अतिरिक्त भावी सम्भावनाओं के सम्बन्ध में भी प्रकाश मिला।

शोधकर्ती को सम्बन्धित अध्ययनों के सर्वेक्षण से यह ज्ञात हुआ है कि जो भी शोध–कार्य समय–समय पर होते रहें हैं उनमें छत्रपति शाहू जी महाराज द्वारा किये गये शैक्षिक प्रयासों के पक्षों को कहीं पर भी सम्मिलित नहीं किया गया है। अतः शोधकर्ती ने अपने अध्ययन में इस महत्वपूर्ण समस्या को सम्मिलित किया है।

अतः निश्चित रूप से इस शीर्षक **"भारत में छत्रपति शाहूजी महाराज का शैक्षिक योगदान विशेष रूप से दलितों के शैक्षिक उत्थान में"** का अध्ययन जनमानष एवं शोधकर्ताओं के लिए अत्यधिक उपयोगी सिद्ध होगा।
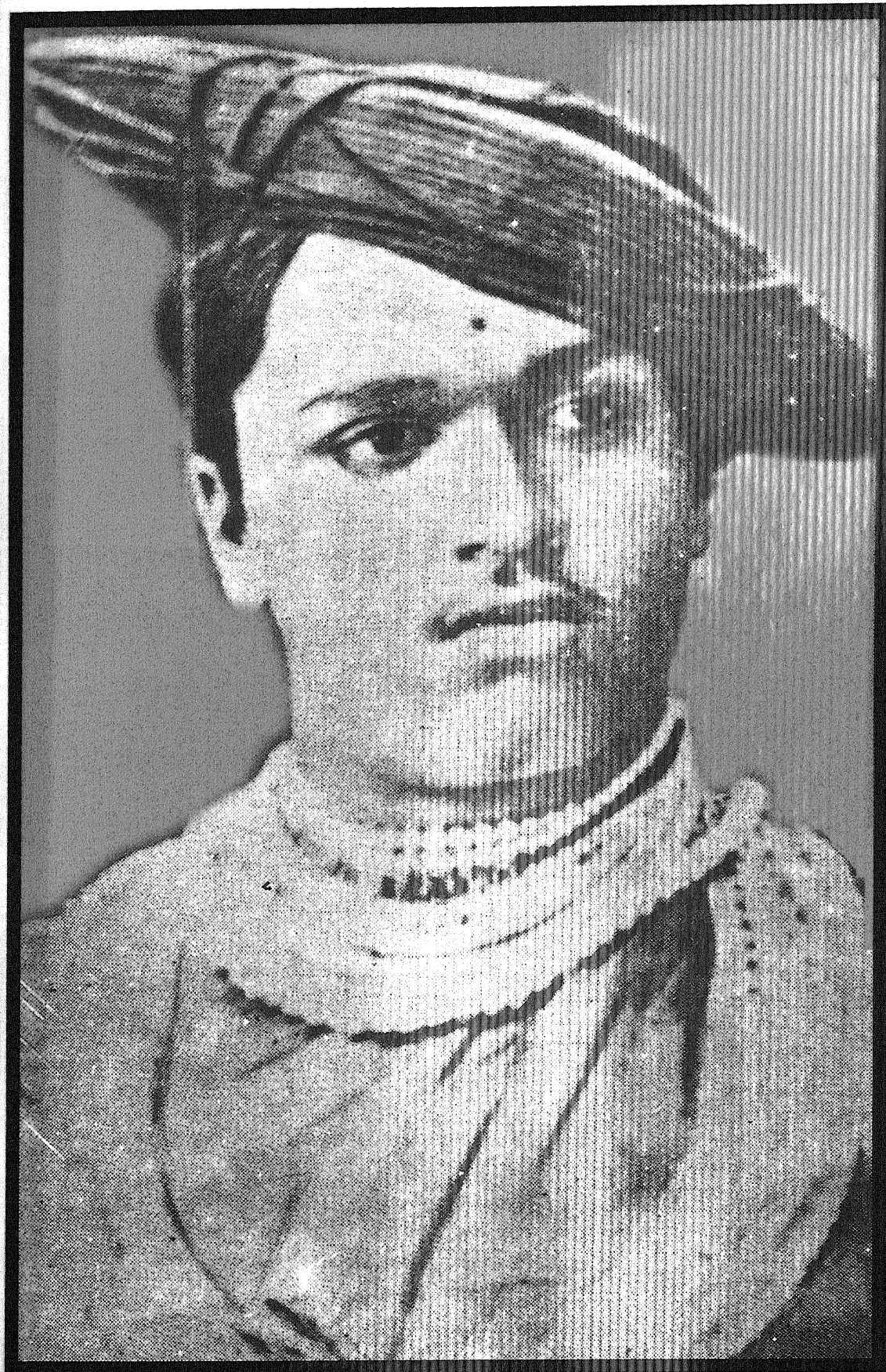
छत्रपति शाहू जी

राजसिंहासन के समय

अध्याय - 2

- छत्रपति शाहू जी महाराज का जन्म एवं शिक्षा ।
- पारिवारिक जीवन।
- सार्वजनिक जीवन।
- शाहूजी के राजनैतिक कार्य।
- शाहूजी का आर्थिक चिन्तन।

छत्रपति शाहू जी महाराज का जन्म एवं शिक्षा

उत्कट इच्छा और उसकी पूर्ति का प्रयास कभी–कभी मनुष्य को सफलता की ऐसी पीठिका पर लाकर खडा कर देते है जो सम्पूर्ण समाज के कल्याण का सेतु बन जाती है। यद्यपि बीच में उपस्थित होने वाले संघर्ष और व्यवधान विश्वास करने की अनुमति नहीं देते कि अभियान कभी सफल भी होगें। आबा साहब घटगे की इच्छा और प्रयासो की यही कहानी है। 17 मार्च 1884 का दिन कोल्हापुर के भाग्योदय का दिन माना जायेगा।

रीजेन्ट घटगे अपने ज्येष्ठ पुत्र यशवन्तराव बाबा साहब को कोल्हापुर के राजसिंहासन पर आसीन कराने में सफल हो गए। दोनों रानियों ने भी इसका अनुमोदन कर दिया। बम्बई के गवर्नर सर जेम्स फर्गुसन ने भी स्वीकृति प्रदान कर दी। यशवन्त राव का जन्म 26 जुलाई 1874 ई0 को कोल्हापुर के राजमहल मे हुआ था। जो अब सरकिट हाउस के नाम से जाना जाता है। यशवन्त राव के भाई बापू साहब 5 जनवरी 1876 को पैदा हुये। सन् 1877 ई0 में बाबा साहब और बापू साहब की माता राधाबाई जो मधोल के राजा साहब की बेटी थी इस संसार से चल बसी। किन्तु यह दुखद घटना दत्तक संस्कार (गोद लेने की क्रिया) में किसी प्रकार बाधा नहीं डाल सकी। कर्नल एच0 ए0 रीब्स जो कोल्हापुर के पॉलिटिकल रीजेन्ट थे लिखते है कि यशवन्त राव बाबा साहब के गोद लिये जाने की पूर्व संध्या से ही विघ्नों के बादलो का छँटना प्रारम्भ हो गया। जनता का यह विश्वास स्थिर होने लगा कि कोल्हापुर राज्य के अच्छे दिन आ गये। कोल्हापुर की गली–गली में नागरिक उत्साह और हर्ष की धारा उमड़ने लगी। उत्सव अपने में अद्वितीय था। आबा साहब अपने पुत्र यशवन्त राव के साथ कार्य करते हुये बड़ी सज–धज के साथ कोल्हापुर के राजप्रसाद

राजर्षि छत्रपति शाहू जी महाराज
की जन्म स्थली (अब सरकिट हाऊस)

में प्रविष्ट हुए। दत्तक क्रिया का शानदार शुभारम्भ हुआ। घटगे ने रानी आनन्दी बाई के हाथ में विधिवत जल छिड़का जिससे यह सूचित हुआ कि उन्होंने अपना पुत्र आनन्दी बाई की गोद में दे दिया। हवन कुण्ड अग्नि से प्रज्जवलित हो उठे। सभी कुल देवताओं का आहवन किया गया। गोद लेने वाली माता की गोद में पुत्र को बिठा दिया गया। अन्तःपुर के सभी राजमहिर्षियों ने दत्तक पुत्र का मुँह मीठा किया। ठीक इसी समय यशवन्त राव बाबा साहब का नया नाम शाहू महाराज रखा गया। रानी और शाहू महाराज ने अपने कुल देवता महालक्ष्मी के मन्दिर जाकर उनकी विधिवत् पूजा की। शाहू महाराज को गद्दी पर बिठाया गया, जिसका उद्घोष 19 तोपों की सलामी के साथ किया गया। समारोह में आमन्त्रित महत्व मण्डित राजपुरुष तथा जनसेवी अपनी–अपनी भेटों एवं उपहारों के साथ उपस्थित थे। उधर रानी की गोद शाहू महाराज से और शाहू महाराज की गोद मूल्यवान उपहारों से भर गयी। पूना से सार्वजनिक सभा के कुछ प्रतिनिधि भी इस समारोह में सम्मिलित होने के लिये आये थे। उन प्रतिनिधियों ने सभा की ओर से शाहू महाराज को एक अभिनन्दन पत्र समर्पित किया। समारोह में सभी को पान सुपाड़ी दी गयी। रीजेन्ट ने कोल्हापुर के यूरोपियन सैनिक को एक सुन्दर भोज दिया।

कोल्हापुर के पॉलिटिकल एजेन्ट ने बाल युवराज शाहू महाराज के सम्मान में एक विशेष दरवार बुलाया जिससे शाहू जी के गोद लिये जाने तथा गद्दी पाने की विधिवत् घोषणा की। रीजेन्ट ने कहा कि कोल्हापुर के सौभाग्य से यह अवसर आया है। भविष्य में भारतीयों और यूरोप के लोगों के बीच अधिक निकटता का सूत्रपात होगा। दोनों एक दूसरे के शील स्वभाव से परिचित हो सकेगें, परन्तु इसके लिये अत्यन्त आवश्यक है

माता - राधाबाई साहब

कि बाल युवराज की शिक्षा की समुचित व्यवस्था की जाये तथा उनको यात्राओं के द्वारा बहुमुखी एवं व्यापक अनुभव उपलब्ध कराये जायें।

पॉलिटिकल एजेन्ट रीब्स का विचार था कि शाहू महाराज को भली प्रकार शिक्षित बनाया जायें, जिससे वे उस दायित्व पूर्ण उच्च आसन के अनुरुप एवं योग्य सिद्ध हो सके। एजेन्ट का इरादा था कि महाराज को शिक्षा के लिये इग्लैण्ड़ भेजा जाये जिससे कि वे भारतीयों और यूरोपियों के बीच एक सुदृढ़ सम्पर्क सूत्र का माध्यम बन सके। 17 मार्च 1884 की रात में पंचगंगा नदी के घाट पर हजारों लोग जमा हुए। तरह–तरह की आतिशबाजी छुड़ाई गयी। वही पर कई शिविरों की बीच शाहू महाराज का शिविर लगा था। मुख्य–मुख्य भवनें और गलियाँ पूरी राजधानी में सजायी गयी चारों ओर आलोक ही आलोक दिखाई पड़ता था। कोल्हापुर के स्थानीय बालकों को भोजन दिया गया। लगभग 2500 छात्रों ने महाराज को बधाई दी। राजाराम कॉलेज के छात्रों ने शशिकला तथा रत्नपाल नाटक का आकर्षक अभिनय किया जिसे शेक्सपीयर के अंग्रेजी ड्रामा रोमियो और जूलियट से हिन्दी में रूपान्तरित किया गया था।

कोल्हापुर रियासत अपने सर्वांगीण अभ्युदय का पूर्वरंग देख रही थी। रीजेन्ट ने शाहू महाराज की शिक्षा की माकूल व्यवस्था की। कागलवासी के0 बी0 गोखले ने शाहू महाराज को तथा एच0 बी0 गोखले ने शाहू जी के भाई बापू साहब को शिक्षा देना प्रारम्भ किया। पी0 एस0 वी0 फिटजरैल्ड शिक्षा के निरीक्षक बनाये गये। उनको शाहू महाराज को इंग्लैण्ड भेजने की शैक्षिक तैयारी का उत्तर दायित्व सौंपा गया। आबा साहब 1884 के मार्च महीने में अपने अंग्रेज मित्र फर्गुसन के साथ इंग्लैण्ड गये तथा वहाँ से वापस आने पर उन्होंने शाहू महाराज को इंग्लैण्ड भेजने से मना कर दिया। अतः फिट्जरैल्ड को अपना शिक्षाधिकारी का कार्य भार

छोड़ना पड़ा। इधर बाल युवराज (शाहू जी) ने अपनी प्राइमरी शिक्षा समाप्त कर ली और अंग्रेजी की पढ़ाई शुरू की। बाल युवराज शाहू जी अंग्रेजी पढ़ने की उत्कट इच्छा रखते थे। किन्तु अपने लिये उनको कठोर परिश्रम की आवश्यकता थी। शाहू जी स्वभाव से शर्मीले थे उनका यह लजीला स्वभाव कई सद्गुणों का कोष था। उस समय तक वे अपने पद से अवकाश ग्रहण कर चुके थे। खान बहादुर मेहरजी भाई कुबेर जी तारपोर वाला कोल्हापुर के दीवान नियुक्त किये गये तथा राव साहब दत्ता जी जोशी वहाँ के मुख्य न्यायधिकारी बनाये गये।

आबा साहब घटगे तथा जे0 डब्ल्यू0 वाट्सन ने आपस में मिलकर मंत्रणा की तथा शाहू महाराज को राजकोट के राजकुमार कॉलेज में शिक्षा प्राप्त करने हेतु भेजा। साथ में गोखले और बाबा साहब इंगिल निजी ट्यूटर के रूप में भेजे गये जो वहाँ पहुँचकर अध्यापकों एवं छात्रों के प्रिय बन गये। शाहू महाराज जब वहाँ पहुँचे तो उन्हें 19 तोपों की सलामी दी गयी। शाहू जी तथा उनके सहपाठी बाला साहब, बापू साहब तथा दत्ता जी इंग्लिश 5 वीं कक्षा में दाखिल कराये गये। भावनगर के भावसिंग भी उसी कक्षा में थे।

शाहू महाराज अपने भाई और अन्य सहपाठियों के साथ राजकोट शिक्षा पाने के लिये गये ही थे कि आबा साहब एकायक दिल के दौरे के शिकार हो गये। 19 मार्च 1886 को शाहू महाराज तथा बापू साहब आदि को वापस बुलाया गया। परन्तु राजकोट और कोल्हापुर की दूरी को देखते हुए यह सम्भव नहीं प्रतीत होता था कि बच्चे समय के भीतर पहुँच सकेगें। आबा साहब जब इंग्लैण्ड की यात्रा से वापस हुए थे तो उनका राज्य में बड़ा सम्मान और अभिनन्दन किया गया था। वे भारत के नरेशों में पहले नरेश थे जिन्होने इंग्लैण्ड की यात्रा की थी। मृत्यु शैया पर लेटे

पिता - रीजेन्ट आबासाहब घटगे

हुए पॉलिटिकल एजेंन्ट आबा साहब ने कार्यवाहक रीजेंन्ट विलियम ली वार्नर के समक्ष अपनी इच्छा प्रकट की थी कि उनके दोनों पुत्र जब राजकोट में अंग्रेजी की तैयारी अच्छें रूप में कर ले तो उनको इंग्लैण्ड अवश्य ही भेजा जाये। 20 मार्च 1886 ई0 को आबा साहब का निधन हो गया। उनके पुत्र 22 मार्च को कोल्हापुर पहुँचे और देखा की उनके पिता की 30 वर्ष की आयु में आकस्मिक मृत्यु से सारे राज्य में शोक व्याप्त हो गया जगह–जगह पर आबा साहब की बुद्धि–कौशल और प्रतिभा की सराहना हो रही थी। आबा साहब ने अपने कार्यकाल में मंगल और कोल्हापुर में कई प्रकार के जनता कल्याण के लिये सुधार किये थे। वे पहले रीजेन्ट थे जिनको महारानी विक्टोरिया से साक्षात्कार का अवसर मिला था। वे निर्धन पोषक तथा पिछड़ें लोगों के सुख दुख का सदैव ध्यान रखते थे। वे शारीरिक व्यायामों और खेलों में गहरी रूचि रखते थे। आबा साहब घटगे की प्रथम पत्नी से दो पुत्र थे। शाहू महाराज की माता का निधन तभी हो गया जब शाहू जी केवल 3 वर्ष के थे। दोनों पुत्रों का पालन आबा साहब की द्वितीय पत्नी राधाबाई ने किया जिनके केवल दो पुत्रियाँ थीं। जब शाहू महाराज 12 वर्ष के थे तब उनके पिता का निधन हो गया। जीवन की विपत्तियों का सूत्रपात उनकी अल्पायु से प्रारम्भ हो गया था। आबा साहब जैसे आदर्श पिता का नैतिक सांस्कृतिक और सहज पोषण संरक्षण शाहू जी से आरम्भिक वर्ष में ही छिन गया इसका परिणाम यह हुआ कि शाहू महाराज कुछ एकान्त सेवी बन गये। आबा साहब की मृत्यु का कारण शराबखोरी था। अतः शाहू जी शराब से दूर भागते थे। वे कितना भी निकट का व्यक्ति क्यों न हो यदि वह शराब पीता था तो उससे भी दूर रहते थे। यहाँ तक कि अपने पिताजी के शराबी दोस्तों का भी उन्होंने परित्याग कर रखा था। पिता की इस विषादकारी मृत्यु का एक

दूसरा प्रभाव शाहू महाराज पर यह पड़ा कि यदि कभी कोई किसी राज परिवार में अपने छोटे–छोटे बच्चे छोड़कर मरता तो शाहू जी उस परिवार को अपनी शोक संवेदना के साथ ही कुछ आर्थिक सहायता भेजते थे। वे दूसरो के दुख में अपने निजी दुख की अनुभूति करने लगते जब शाहू जी के निजी अध्यापक के0 बी0 गोखले ने सुझाव दिया कि युवराज को छोटी श्रेणी के लोगों का साथ करने के बजाय अपने पिता के पुराने मित्रों के सहचर्य में रहना चाहिये। इस पर शाहू जी ने अपनी तीखी प्रतिक्रिया इन शब्दों में व्यक्त की, मैं भली–भाँति जानता हूँ कि इस प्रकार के व्यक्तियों के साथ ने मेरे पिता को क्या दिया। हाँ एक ऐसा दुर्गुण अवश्य दिया जिससे वे अपना आकर्षक स्वास्थ खो बैठे। मैं अब न तो उसके तथाकथित समाज को चाहता हूँ और न इसके दुर्गुण। आबा साहब की मृत्यु पर अपनी शोक संवेदना महारानी विक्टोरिया ने बम्बई गवर्नर के माध्यम से भेजी जिसमें उन्होंने अपना शोक व्यक्त करते हुये आबा साहब के व्यक्तित्व की भूरि–भूरि प्रशंसा की थी।

भारत के गर्वनर जनरल लार्ड–डफरिन नवम्बर 1886 ई0 में बम्बई आये जहाँ शाहू जी महाराज ने उनसे भेंट की और उनकी आश्वस्त किया, मैं अपने स्वर्गीय पिता के चरण चिन्हों पर चलने के लिये कृत संकल्प हूँ। मैं महारानी विक्टोरिया के शासन तथा कोल्हापुर राज्य के बीच परम्परागत मधुर सम्बन्धों का पूरी तरह निर्वाह करूँगा। इसी अवधि में शाहू जी ने भारत के विभिन्न भागों की यात्रायें की। शारीरिक व्यायाम, घुड़सवारी, शिकार ,निशानेबाजी तथा खेलों मे उनकी गहरी रूचि थी। हर रविवार को वो अश्वरोहण तथा शिकार में बिताते थे। शाहू जी अपने पिता की भाँति ही वन्य पशुओं में बड़ा अनुराग रखते थे। उनके पिता जी तो घोड़ों और कुत्तों की सार संभाल करने तथा उनके पालन–पोषण के लिये प्रसिद्ध थे।
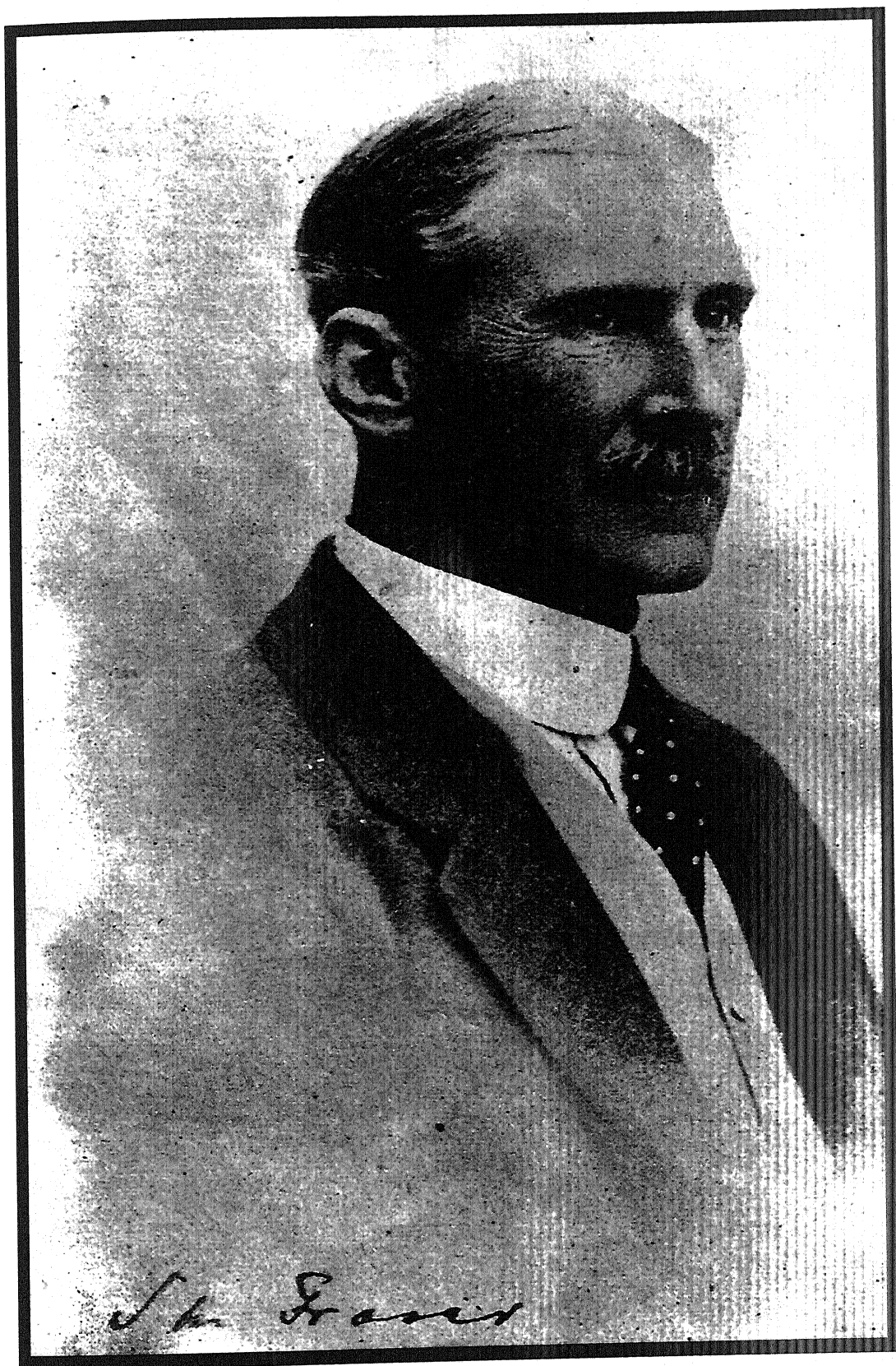
मित्र, गुरू, एवं पथ प्रदर्शक

सर स्टुवार्ट फ्रेजर

शाहू जी प्रतिवर्ष कोल्हापुर से राजकोट की यात्रा तांगों और गाड़ियों द्वारा करते थे। सन् 1888–89 में राजाराम कॉलेज के प्रधानाचार्य सी0 एच0 कैनेडी हुए। वे कोल्हापुर के छात्रो के प्रति दुर्भाव रखते थे जो आगे चलकर उनके लिये महँगा पड़ा। राजकोट कॉलेज के प्रिंसपल तथा स्टाफ का दोषपूर्ण व्यवहार शाहू जी को नापसन्द आया। फलतः कोल्हापुर के सभी छात्र अप्रैल 1889 में राजकोट कॉलेज छोड़ गये। भावनगर के भावसिंह जिनसे शाहू जी की स्थायी मित्रता थी, उन्होंने भी कॉलेज छोड़ दिया। इसी प्रकरण मे शाहू जी ने अपना स्पष्ट मत व्यक्त किया कि कोल्हापुर राज्य के लिये एक कुशल युवा दीवान राज्य से ही तैयार किया जाना चाहिये तथा एक ब्रिटिश अधिकारियों के अधीन बनाकर राज्य से दूर नहीं रखा जाना चाहिये। शाहू जी तथा उनके अन्य साथियों के लिये एक सुयोग्य ट्यूटर की व्यवस्था की गयी जो आई0 सी0 एस0 थे, तथा जिनका नाम स्टुवार्ट मिटफोर्ड फ्रेजर था। के0 एन0 गोखले शाहू जी के निजी अध्यापक थे जिन्होंने उनके स्वास्थ्य शिक्षा तथा सुख सुविधा का बड़ा ध्यान रखा। फ्रेजर ने गोखले की इस सन्दर्भ में अतिशय प्रशंसा की थी। फ्रेजर के लिये प्रभाशंकर दलपतिराम पट्टनी को सहायक अध्यापक के रूप में व्यवस्था की गयी। सन् 1889 से 1892 तक सभी छात्रों का अंग्रेजी, गणित, भूगोल तथा अर्थशास्त्र की विशेष शिक्षा दी गयी। अध्ययन काल के अतिरिक्त छात्रों को कवायद परेड शिकार तथा विभिन्न खेलों का प्रशिक्षण दिया जाता था। शाहू जी यद्यपि विभिन्न विषयों के अध्ययन मे कठोर परिश्रम करते थे, अंग्रेजी में पर्याप्त सुधार था किन्तु लज्जालु स्वभाव होने के कारण वे सीधे–सादे तथा कुछ पिछड़े से थे। राजनैतिक अर्थशास्त्र मे वे सभी छात्रों से आगे थे। शाहू जी में सामान्य बुद्धि प्रखर थी। वे किसी भी बात को तुरन्त समझ जाते थे। फ्रेजर ने उनके सम्बन्ध में अच्छी

धारणा व्यक्त की थी। तथा उनकी ईमानदारी, निःस्वार्थ भाव तथा विवेक की प्रशंसा की थी। शाहू जी के अध्यापकों तथा निजी शिक्षकों की धारणाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि शाहू जी स्वभाव से ईमानदार, जनसेवी, सत्यनिष्ठ तथा नीति परायण छात्र थे। वे पुस्तकों की अपेक्षा अनुभव, सत्संग तथा बाह्य वातावरण से अधिक सीखते थे। परन्तु वे अपने मूल विषयों के अध्ययन पर भी दृष्टि रखते थे। विशेषतः इस उद्देश्य से भी उन्हें कोल्हापुर राज्य का एक आदर्श शासक बनना है। वे कद मे लम्बे, स्थूल एवं हष्ट–पुष्ट तथा प्रियदर्शन थे।

ब्रिटिश युवराज अलवर्ट विक्टर का 1889 के शीतकाल में भारत में पदार्पण हुआ। युवराज के प्रति सम्मान प्रदर्शित करने के लिये शाहू जी को पूना लाया गया। युवराज के सम्मान में पूना नगरी को भव्य रूप से सजाया गया था। पूना आलोकमयी छवि से गौरवान्वित था। युवराज ने शाहू जी के लिये दरबार बुलाकर उनका स्वागत किया। वे पहले भारतीय नरेश थे, जिसके लिये इस प्रकार की गरिमापूर्ण व्यवस्था की गयी थी। सन् 1890 में शाहू जी और उनके साथी 15 दिन कोल्हापुर में ठहरे और चिंचली के वार्षिक पशु मेले में भाग लिया। दिल और दिमाग से शाहू जी एक विभ्राट व्यक्ति थे। उनके शारीरिक विन्यास का वर्णन करते हुए फ्रेजर महोदय ने लिखा है, "शाहू जी एक विशालकाय बालक थे, 5 फीट 9 इंच लम्बा शरीर 14 स्टोन 1 पौन्ड वजन, मोहक चाल किन्तु शरीर की स्थूलता उनकी पैतृक थी।" शाहू जी अपने शरीर के वजन को सदैव नापते रहते थे, और व्यायाम से उसे सन्तुलित रखते थे। नियमित आहार और व्यवहार का सदैव ध्यान रखते थे। स्वभाव से संकोची और लज्जालु होने के कारण वे यूरोपियन लोगों की संगत मे रूचि नहीं रखते थे। उनकी बातचीत में चुलबुलापन नहीं था। वे अपने भारतीय मित्रों की गोष्ठी और संगत अधिक

पसन्द करते थें। टेनिस के खेल में वे मन्द थे, किन्तु टमटम चालन, तैराकी तथा नौका चालन में वे अच्छा अभ्यास रखते थे। शाहू जी छात्र जीवन में प्रखर नहीं थे। यहाँ तक कि अपने भाई बापू साहब से भी कभी आगे नहीं पढ़ पाते थे। शाहू जी आलसी नहीं थे, किन्तु उनकी लापरवाही गणित में सदैव आड़े आती थी।

इन्हीं दिनों कोल्हापुर राज्य के प्रशासन में कुछ परिवर्तन हुए। विलियम वार्नर के इंग्लैण्ड चले जाने पर लेफ्टिनेंट कर्नल हंटर राज्य के कार्यवाहक पॉलिटिकल एजेंट नियुक्त किये गये। उनकी सहायता के लिये चार्ल्स वुड हाउस रखे गये थे। 1890 में शाहू जी महाराज उत्तर भारत की यात्रा में भेजे गये। नासिक पहुँचने पर वहाँ के पण्डों ने अपनी–अपनी बही में शाहू जी के हस्ताक्षर यह कहकर माँगने लगे कि शाहू जी के पूर्वज सदैव उन लोगो के यहाँ ठहरते थे। दोनों पण्डों में इसी बात पर खटपट हो गयी। दोनों को शाहू जी ने हटाकर बाहर किया इसके पश्चात् वे वाराणसी और प्रयाग पहुँचे। वाराणसी में अपने कुल पुरोहित के निर्देश पर गंगा स्नान किसा इसके उपरान्त शाहू जी की पार्टी दार्जिलिंग और कलकत्ता गई। 16 वर्ष की आयु के बालकों को ताज देखकर बड़ी प्रसन्नता और आश्चर्य हुआ परन्तु शाहू जी ने ताज के शिल्प पर विशेष ध्यान नहीं दिया। वे फतेहपुर सीकरी भी गये। दिल्ली जाकर उन्होंने उन स्थानों को विशेष रूप से देखा जो 1857 के स्वतन्त्रता संग्राम से सम्बधिंत थे हिन्दूराव उर्फ जयसिंह राव घटगे के मकान को देखा जो शाहू जी पिता आबा साहब घटगे के पितामह थे। पार्टी जयपुर अजमेर और बम्बई का भ्रमण करती हुई कोल्हापुर वापस आयी।

राजकोट से लेकर धारवाड़ तक की शैक्षिक गतिविधियों का उपसंहार तथा सम्पूर्ण देश की यात्राओं का विस्तार धीरे–धीरे कोल्हापुर

राज्य को उज्जवल भविष्य की ओर अग्रसर कर रहे थे। छत्रपति शाहू जी अपना शैक्षिक सत्र पूरा करके धारवाड़ से कोल्हापुर आ गये। के0 बी0 गोखले ने राज्य की शिक्षा सेवा से अवकाश प्राप्त किया तथा उनके स्थान पर रघुनाथ व्यंकाजी सैब्निस हुए। किन्तु फ्रेजर महोदय अपने पद पर पूर्ववत् विद्यमान थे। सैब्निस बम्बई विश्वविद्यालय के ग्रेजुएट थे जो बम्बई के थाना हाईस्कूल के हेडमास्टर थे। बम्बई सरकार ने सैब्निस को कोल्हापुर राज्य का शिक्षक बनाकर भेजा। सैब्निस धारवाड़ जिले के गजेन्द्रगढ़ कस्बे मे 10 अप्रैल 1856 को जन्मे थे। कठिनाइयों के होते हुए भी सैब्निस ने कागल कोल्हापुर और बम्बई मे कठोर परिश्रम करके अपनी शिक्षा पूरी की थी। स्वभाव से वे एक गम्भीर, ईमानदार, प्रबुद्ध तथा दयालु चित्त व्यक्ति थे। शाहू जी अब राजकार्यों मे रूचि लेने लगे। सन् 1893 की फरवरी के प्रथम सप्ताह में बम्बई के गवर्नर हैरिस कोल्हापुर आये, जहाँ चिंचली की पशु प्रदर्शनी का उद्घाटन किया। अपने उद्घाटन व्याख्यान में गर्वनर ने शाहू जी की उपस्थिति में कहा कि आप सब देख रहे हैं कि ब्रिटिश सरकार इस देश के लिये जो कर सकती है कर रही है। कृषक समाज देश के व्यापार और उद्योग–धन्धो का मूल स्त्रोत है। आप लोग जाने कि वह दिन दूर नहीं है जब कोल्हापुर राज्य के सिंहासन पर शाहू जी महाराज प्रतिष्ठित होगें तथा जिस दिन की प्रतीक्षा यहाँ की जनता अधीरता से कर रही है। राज्य की शिक्षा व्यवस्था की ओर अब शाहू जी का ध्यान जाने लगा। 3 अप्रैल 1893 को राजाराम कॉलेज की ओर से शाहू को पुरस्कार वितरण हेतु आमन्त्रित किया गया। उन्होंने अपने व्याख्यान में कहा,''मुझे हर्ष है कि इस कॉलेज से छात्रों को स्वतन्त्र व्यवसायों मे प्रवृत्त होने की प्रेरणा दी जाती है, न कि सरकारी नौकरियाँ पाने की। कोल्हापुर के उन चार छात्रों की सफलता की मैं कामना करता

हूँ, जो स्वतन्त्र व्यापार करने के उद्देश्य से पूना गये हैं। कोल्हापुर को क्रिकेट टीम पर गर्व है जिसने पूना दकन कॉलेज की टीम से दो बार विजय प्राप्त की।'' शाहू महाराज ने कॉलेज बोट क्लब को डांड़ का एक जोड़ प्रदान करने की घोषणा की। कोल्हापुर के लोग अनुमान करने लगे कि कोल्हापुर का शासन करने की क्षमता से महाराज को पूरी तरह से सम्पन्न बनाया गया। राज्याभिषेक तथा सिंहासनारोहण से एक वर्ष पूर्व शाहू जी कोल्हापुर राज्य का भ्रमण फ्रेजर महोदय और भाई बापू साहब के साथ कर चुके थे। उन्होंने सारे प्रमुख स्थान देखे थे। उन किसानों, मजदूरों, दलितो एवं शोषितों से भी वे मिले थे। जिनकी उपेक्षा करना राज्य के उच्च वर्ग के लोगों का स्वभाव बन गया था। इस प्रकार हम मान सकते है कि शाहू जी कन्याकुमारी से पेशावर तक की यात्रा कर चुके थे। और अब वे अपने ही राज्य के निर्धनों, असहायों, बाबुओं, चपरासियों, अध्यापकों की दशा का जा–जाकर निरीक्षण कर रहे थे। कोल्हापुर का सुनहरा भविष्य अपने आगमन की पूर्व सूचना दे रहा था। छत्रपति शाहू महाराज ने अपने राज्य के काली मिट्टी वाले क्षेत्रों को देखा। सह्याद्रि की खुरदरी पहाड़ियाँ देखी। जहाँ–जहाँ महाराज गये वहाँ–वहाँ के नागरिकों, जागीदारों ने उनकी अगवानी और अभिनन्दन किया। दूर–दूर तक जनता पंक्तिबद्ध हो कर अपने राजा का दर्शन करने के लिए खड़ी रहती थी। लोग आपस में धन संग्रह करके अपने प्रिय राजकुमार की अगवानी में अच्छी आतिशबाजी और मार्ग को सजाने की व्यवस्था करते थे। मलाकापुर के प्रधान और प्रतिनिधियों ने शाहू महाराज का बड़ी सुन्दर साज सज्जा के साथ अभिनन्दन किया। फ्रेजर महोदय ने अपना अध्यापन के अन्तिम वर्ष मे सभी राजकीय छात्रों को कानून नागरिक व्यवहार, शासन, प्रशासन, संधियो ,समझौतों तथा ऐतिहासिक घटनाओं की शिक्षा प्रदान की और इसी

प्रकार की विविध विषयों पर फ्रेजर महोदय ने व्याख्यान दिये थे। प्रशिक्षण के अन्तिम चरण मे शाहू जी और उनके भाई बापू ने जो नोट्स–गाँव और जिलों की पुलिस व्यवस्था भारतीय दण्ड संहिता, क्रिमिनल प्रोसीजर कोड पर लिखे थे उनके व्यावहारिक बोध के लिये वे मुख्य न्यायाधीश की अदालत में जाते थे। तथा जज के बगल में बैठकर महत्वपूर्ण मुकदमों के साक्ष्य पर अपने नोट बनाते थे। 4 वर्ष के शिक्षण–प्रशिक्षण की अवधि समाप्ति हो गयी। एक सफल शासक बनने के लिये जिस–जिस विभाग की जो–जो जानकारी अपेक्षित थी शाहू जी तथा बापू साहब को ब्रिटिश शासन ने सही ढंग से प्रदान की। शिक्षा की समग्र प्रक्रिया में फ्रेजर महोदय की कृपा, उदारता, स्नेह, ममता, ईमानदार, नैतिकता तथा विधिवत्ता का सर्वाधिक योग था। इसमें किचिंत संदेह नहीं कि फ्रेजर जैसे अध्यापक युगों–युगों तक दुर्लभ रहते हैं। शिष्य का सम्पूर्ण जीवन जिस गुरू की प्रतिमा, महिमा और दाक्षिण्य से झंकृत और गुंजित रहें ऐसे गुरू सहज–सुलभ नहीं है। फ्रेजर के प्रति शाहू जी का समर्पण विनय और पूजा भाव भी किसी अन्य राजकुमार द्वारा सम्भव नहीं। इसलिए शाहू जी की जीवन पद्धति फ्रेजर के कृतित्व एवं व्यक्तित्व से सर्वदा प्रभावित रही। ऐसे अध्यापक का कोई जाति, सम्प्रदाय, धर्म अथवा देशकाल नहीं होता। उनकी नैतिकता एवं चारित्रय और मानवता समूची धरती के इंसान के लिये होती है। वह अपने में विशुद्व अध्यापक होता है। न वह हिन्दू होता है न मुस्लिम और न ईसाई। वह मात्र मानव है। भेद भावों के घेरे स्वयं ही ऐसे गुरु की मानवता के घेरे में ध्वस्त हो जाते हैं। धन्य है फ्रेजर साहब जिनका अध्यापन भारत के इतिहास को शुभ बनाने में बड़े गाढ़े में काम आया। फ्रेजर महोदय की गुरू गरिमा तथा छत्रपति शाहू जी की शिष्य धर्मिता दोनों ही अनन्य है, वन्दनीय हैं। ऐसे ही गुरू और शिष्य मिलकर

मानवता की विकृतियों का परिष्कार कर उसे नितान्त उज्जवल सीमान्त संस्कृति में परिणत करते रहते हैं। विद्या का यह इन्द्र जाल हर देश मे हर युग मे होता रहता है। अतः आज के मानव को निराश होने के बजाय अपने फ्रेजर जैसे गुरू के रूप में अथवा शाहू जैसे शिष्य के रूप में ढालने का प्रयास करना चाहिये। आखिरकार वह 2 अप्रैल 1894 ई0 आ ही गयी जिस दिन शाहू महाराज को एक नरेश के रूप में सिंहासन पर बैठना था। बम्बई के गवर्नर लार्ड हैरिस ने इसके लिये एक विशेष दरबार की व्यवस्था की। इस दरबार में राजे–महाराजे, प्रमुख सरदार, अधिकारी, कोल्हापुर के शासनाधिकारी तथा महत्वपूर्ण व्यक्ति उपस्थिति थे। इस अवसर पर लार्ड हैरिस ने राज्याभिषेक के समारोह का उद्घाटन करते हुए कहा कि आज का दिन कोल्हापुर राज्य के लिये सौभाग्य का दिन था। पिछले तीस वर्षो से कोल्हापुर राज्य समर्थ उत्तराधिकारी के अभाव में निरन्तर अस्थिरता और संघर्ष में फसा रहा। एक लम्बी अवधि के पश्चात् कोल्हापुर को शाहू जी महाराज के रूप में एक धीर वीर नरेश प्राप्त हुआ। शाहू जी पर कोल्हापुर के शासन का गुरूतर भार आया है। जिसके लिये उन समस्त संधियों, सनदों, तथा परम्पराओं पर सावधान दृष्टि रखनी होगी, जिनके माध्यम से ब्रिटिश शासन और कोल्हापुर राज्य के सम्बन्ध कायम रह सकें। लार्ड हैरिस ने इस अवसर पर फ्रेजर महोदय कर्नल बुड हाउस, लीवार्नर को हार्दिक बधाई और धन्यवाद दिया जिन्होंने छत्रपति शाहू महाराज की शिक्षा–दीक्षा, अनुभव अर्जन तथा नैतिक संस्कारों के विकास के लिये कुछ रख नहीं छोड़ा। उन्होंने संकेत में यह भी कहा कि कोल्हापुर की भूमि व्यवस्था, भूमि की स्थायी पैमाइश' के अन्तर्गत ला दिया गया है तथा व्यापार को मुक्त कर दिया गया हैं।

छत्रपति शाहू जी जिस समय गद्दी पर बैठे, समाज की दशा कई दृष्टियों से शोचनीय थी। जाति–पाँति, छुआ–छूत, मानव निर्धन कृषकों और मजदूरों की दीन–हीन स्थिति चितपावन ब्राह्मणों द्वारा परम्परा से चलाई गयी आतंकपूर्ण पाखंडी धर्म पद्धति, वर्ण व्यवस्था का घोर ताण्डव नृत्य अबोध और असहाय जनता को उबरने नहीं देते थे। यद्यपि इन बुराइयों को दूर करने के लिये आगकर तथा रानाडे के नेतृत्व में समाज सुधार का शिष्ट आन्दोलन चलाया जा रहा है। वर्ण व्यवस्था तथा ऊँच–नीच के भेदभाव को दूर करने के लिये 'सत्य शोधक समाज' लगातार कार्य कर रहा था।

'सत्य शोधक समाज' की स्थापना बहुत पहले महात्मा ज्योतिराव फूले ने की थी। देश को विदेशी शासन से मुक्त करने का आन्दोलन लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक के नेतृत्व में चल रहा था। इनमें 'सत्य शोधक समाज' के समाज कल्याणकारी कार्यकलाप का धरातल अपेक्षाकृत अधिक प्रशस्त एवं व्यापक था। सामाजिक असमानता को दूर करना, शिक्षा का प्रसार, वैज्ञानिक, अविष्कारों का उपयोग तकनीकी कार्यप्रणाली पर 'सत्य शोधक समाज' का विशेष ध्यान केन्द्रित था। यह सब होते हुए भी उस समय के महाराष्ट्र की समग्रता एकरूपता और सामाजिक समरसता छिपी हुई किसी कोने में दुबकी खड़ी थी। स्त्रियों की दशा शोचनीय थी। विधवा–विवाह, विधवा के सिर मुण्डन का विरोध, ब्राह्मण महार सहभोज जातीय व्यवस्था को समाप्त करने पुरोहिती प्रपंच और धार्मिक के बहिष्कार हेतु यद्यपि सभी विवेकशील संस्थायें जोर देती थी। किन्तु जब किसी वृक्ष की जड़ में दीमक लग जाता है तो वृक्ष को गिराना ही पड़ता है। ठीक उसी प्रकार हिन्दू समाज रूपी वृक्ष की भारत वर्ष मे यही स्थिति थी। और अल्पाधिक आज तक जारी है। इसमे सबसे अधिक विघटनकारी विषय था।

ऊँच–नीच, जात–पाँत की संकीर्णता तथा अबोध जनता का धर्म के नाम पर पाखण्डी ब्राह्मणों द्वारा अर्थ–दोहन तथा शोषण वह भी आतंक के बल पर।

'सत्य शोधक समाज' ने महाराष्ट्र के भागों और महारों में अपना आन्दोलन तेज कर रखा था। विवाहों मे पुरोहित अथवा ब्राह्मणों को संस्कार कराने के लिये न बुलाये जाने पर ब्राह्मणों ने अपनी कटु और तीखी प्रक्रिया व्यक्त करते हुए कहा कि यदि ब्राह्मणों को विवाह आदि में पुरोहिती कर्म के लिये न बुलाया गया तो उनका शाप और भगवान का शेष सबको नष्ट कर देगा। महाराष्ट्र में उस समय ब्राह्मणों की संख्या मात्र 5 प्रतिशत थी, फिर भी वे ब्रिटिश शासन में हर स्थान में नियुक्त थे। ब्रिटिश शासन के बाद सारी शक्ति ब्राह्मणों के हाथ में थी। चपरासी से क्लर्क तथा सहायक से उच्चाधिकारी तक ब्राह्मण ही थे। 'सत्य शोधक समाज' अवश्य ही ब्राह्मणों के द्वारा प्रचारित अंधविश्वासो का सीधा विरोध कर रहा था। वर्ण–व्यवस्था, मूर्ति–पूजा, दान–दक्षिणा तथा वेद–पुराणों की कठोरता से तिरस्कार कर रहा था। किन्तु उच्च वर्ग के अत्याचारों का नंगा नाच किसी भी प्रकार कम नहीं हुआ। राजनीति, सरकारी नौकरियाँ, धर्मदण्ड सभी कुछ उनके हाथ मे था। चतुर और बुद्धिमान वे थे ही। ब्रिटिश शासन भी उच्च वर्ग के भुलावे छलावे में फँस जाता था। ऐसी विषय स्थिति में अबोध और गरीब जनता का जीवन नरकीय हो गया था। सुधारवादी संस्थायें इन व्यक्यिों के पाखण्डी प्रताप के आगे अस्तित्वहीन सी लक्षित होती थी। उच्च वर्ग की उदण्डता और अनीति के समक्ष सुधारवादियों की शिष्टता और सजगता प्रभावहीन हो जाती थी।

छत्रपति शिवाजी को बहुत रिश्वत लेकर राज्याभिषेक द्वारा क्षत्रिय माना गया। परन्तु शाहू जी महाराज का राज्याभिषेक सीधे हाथ से बिना

रिश्वत के आसानी से किया गया। क्योंकि शाहू जी महाराज प्रमाद से निकलकर प्रजा के प्रकाश में आ चुके थे। उन्हें बुद्धत्व प्राप्त हो चुका था। प्रमाद का अर्थ है– अंधविश्वास की जगह बुद्धि का प्रयोग।

जब तक माल इकाई आदर सत्कार होता रहा तब तक शाहू जी महाराज क्षत्रिय रहे। जब तक दलितों–पिछडों का भरपूर शोषण होता रहा तब तक शाहू जी महाराज क्षत्रिय रहें। क्षत्रियपन इन्हीं परिस्थितियों मे बरकरार रह सकता है। जिस किसी को क्षत्रिय नहीं माना उसके काटो तो खून नहीं, मिट्टी में मिल गया ऐसी परम्परा रही। कोई तो गड़बड़ी होगी इन मंत्रो में जिसके कारण 90 प्रतिशत जनता पर इनके सुनने पर रोक लगायी गयी। शाहू जी महाराज विजय पर्व पर तरणताल में स्नान कर रहे थे। परन्तु राज्य पुरोहित बिना स्नान किये अवैदिक मंत्रों का उच्चारण करने लगा। शाहू जी महाराज ने कहा, ''महाराज क्या आपकी तबियत तो खराब नहीं, कहीं भेजा तो नहीं घूम गया। जो बिना नहायें अवैदिक मंत्र उच्चारित कर रहें हैं'' पुरोहित ने कहा,''महाराज वैदिक मंत्र क्षत्रियों के लिये होता है, तभी स्नान करके बोला जाता है। ''शाहू जी ने पूछा पहले मैं क्षत्रिय था अब मै क्षत्रिय क्यों नहीं हूँ। उत्तर दिया जाये– महाराज जब तक आप हमें अपने से भी सर्वोपरि मानते रहे और राजतन्त्र के अनुसार शासन चलता रहें तब तक आप क्षत्रिय थें। अब तो आप बाल गंगाधर तिलक को नहीं मानते। घर बाहर राज्य दरबार में हमेशा आप महार, चमार, भंगी आदि नीच–जाति से घिरे रहते है। आपने उनके दिमाग खराब कर दिये। शाहू जी महाराज की जगह यदि शिवाजी महाराज होते तो शायद एक–दो करोड़ रिश्वत देकर क्षत्रिय बने रहते।

छत्रपति शाहू अपनी शान शौकत अथवा राजकीय गरिमा की परवाह नहीं करते थे। विदेशी शासन छत्रपति शाहू को इसलिये नहीं प्रिय था कि

वे अपने देश में विदेशी शासन का पोषण करके भारत को पराधीन रखने के पक्ष में थे वरन् वे इसलिये उसके तब तक के लिये पक्षपाती थे जब तक कि ब्रिटिश शासन उसके राज्य की बहुमुखी समस्याओं मे उनको समर्थन देता रहे। ब्राह्मणों की विभेदकारी नीति, राज्य के निर्बल पिछड़े वर्ग को समृद्ध बनाना, सामाजिक न्याय की स्थापना, सिंचाई की ब्रहद योजना, भूमि सुधार, कृषि का विकास तथा राज्य विरोधी शक्तियों को नियन्त्रित रखना आदि समस्याओं में ब्रिटिश शासन निश्चय ही किसी न किसी रूप में कोल्हापुर की सहायता करता है। शाहू जी ने गाँधी जी के दक्षिण अफ्रीका आन्दोलन में यथाशक्ति भरपूर आर्थिक सहायता दी।

शाहू जी की प्रवृति आर्य समाज की ओर अधिक गहरी हो गयी थी। 10 दिसम्बर 1918 को शाहू जी ने बम्बई के लिये प्रस्थान किया। वहाँ उनको 14 दिसम्बर को आर्य समाज के एक सम्मेलन में भाग लेना था। उस सम्मेलन का मुहम्मद अली जिन्ना विरोध कर रहे थे। शाहू जी इन दिनों सार्वजनिक सभाओं की प्रायः अध्यक्षता करने के लिये जाते रहते थे। नवसारी, गुजरात के आर्य समाज सम्मेलन में उद्घाटन के लिये 13 दिसम्बर 1918 ई0 को बम्बई रवाना हुई। अपने उद्घाटन भाषण में शाहू जी ने ब्राह्मणों पर कटाक्ष करते हुए कहा, "जिनको गुण एवं कर्म के अनुसार वर्ण व्यवस्था को चलाना चाहियें वे जन्म से ही वर्ण और जाति को स्वीकृत दे रहे है। मूर्तियों की पूजा करने वाले अपने को परम पवित्र मानते है। मुफ्त का धन और जीवन पालन के कारण ब्राह्मण आलसी और प्रमादी हो गये है। पढना–लिखना भी इनका समाप्त सा हो गया है।" महात्मा ज्योतिराव के विचारों और आचार ने ब्राह्मणवादी व्यवस्था की रीढ़ तोड़ दी थी सन् 1919 के आरम्भ में शाहू जी ने एक आदेश जारी किया जिसके अनुसार कोई भी अछूत अस्पताल में ससम्मान प्रवेश पा सकता है। यदि

कोई भी कर्मचारी किसी भी रोगी के साथ जाति के आधार पर भेदभाव बरतेगा तो उसे 6 सप्ताह के भीतर नौकरी से निकाल दिया जायेगा। 15 जनवरी 1919 को एक दूसरा आदेश जारी किया गया। जिसका आशय था कि प्राइमरी स्कूलो, हाईस्कूलों और कॉलेजों के छात्रों मे जातियों के आधार पर किसी से भेदभाव न वरता जाये।

छत्रपति शाहू जी जीवन भर समस्याओं का भार उठाते रहे तथा आदर्शो की रक्षा के लिये एक सच्चे वीर पुरूष के रूप मे हर समस्या का समाधान प्रस्तुत करते रहे। शाहूजी की यह हार्दिक इच्छा थी कि यदि देश के समाज की विकृतियाँ और विसंगतियाँ समाप्त हो जाये तो सारा देश एक सच्चे राष्ट्र के रूप मे खड़ा हो सकेगा और तब विदेशी सत्ता को बाहर करने में कुछ भी समय नहीं लगेगा। और इस प्रकार सामाजिक एवं राजनैतिक आजादी एक साथ मिल जायेगी। 6 मई 1922 को लगभग 6 बजे 48 वर्ष की उम्र में शाहू जी इस संसार से चले गये।

पारिवारिक जीवन

अंग्रेजी परम्परा में पहली अप्रैल मूर्खो की तिथि मानी जाती है और संयोग देखिये 1 अप्रैल 1891 में छत्रपति शाहू जी का विवाह बड़ौदा के गुणाजीराव खानवटकट की पुत्री लक्ष्मीबाई के साथ सम्पन हुआ। लक्ष्मीबाई बड़ौदा नरेश गणपतिराव गायकवाड की बहन की पौत्री थी। गुणाजीराव बड़ौदा राज्य के एक जागीदार थे विवाह के समय महारानी लक्ष्मीबाई की आयु मात्र 11 वर्ष थी। पेशवा शासनकाल में गुणाजीराव के पूर्वज बेसिन किले के सेनानायक थे। पेशवा शासन के पतन के पश्चात खानवटकर परिवार सतारा के छत्रपति के यहाँ चला गया क्योंकि उनसे उसका रक्त का सम्बन्ध था गणपतिराव गायकवाड़ बड़ौदा नरेश सयाजीराव गायकवाड़ (ज्येष्ठ) के दामाद थे। शाहू जी के विवाह में रू0 1,44,300/– व्यय किये गये। विवाहोपरन्त शाहू जी एक सप्ताह के लिये कोल्हापुर राज्य के घाट जिले में शिकार खेलने गये और वहाँ से लौटकर लार्ड हैरिस से भेंट की जिन्होंने 20 अप्रैल 1891 में कोल्हापुर राज्य के रेलवे तथा औद्योगिक प्रदर्शिनी का उद्‌घाटन किया। 1888 के बाद यह प्रदर्शिनी मात्र यह जानने के प्रयोजन से आयोजित की गई थी कि राज्य में शिल्प उद्योग और औद्योगिक उत्पादन में कितना विकास अथवा ह्यस हुआ है। दक्षिणी मराठा राज्यों के समस्त करभारी इस प्रदर्शिनी में भाग लेने आये थे।

इसी अवधि में छत्रपति शाहू महाराज के चाचा बालासाहब घटगे तथा भाई बापू साहब घटगे का विवाह सम्पन्न हुआ था। तत्पश्चात् शाहू जी पुनः फ्रेजर महोदय के आचार्यत्व में शिक्षा प्राप्त करने लगे। शाहू जी छत्रपति का धारवाड में रहकर अध्ययन करने का यह अन्तिम सत्र था। फ्रेजर महोदय ने अपनी रिपोर्ट में लिखा है कि शाहू जी महाराज घोड़ों

कुत्तों और बन्दूक में सर्वाधिक रूचि रखते है। उनका वजन पूर्ववत है। कद की ऊँचाई अवश्य 5 फीट 9 इंच से बढ़कर 5 फीट 10 इंच हो गयी हैं। शाहू जी महाराज की रूचि पढ़ने–लिखने में बढ़ी है। प्रारम्भिक विज्ञान तथा कानून के ज्ञान में उनकी गहरी रूचि है उनमें भौतिक चिन्तन तथा अपने आप सोचने के गुण में भी आगे बढ़े है उनका लज्जालु स्वभाव नहीं। बदला। राज्य की अतुल सम्पत्ति और कोष के स्वामी होने पर भी छत्रपति शाहू जी महाराज की अनुक्ति ग्राम्य जीवन पद्धति एवं सादगी में अधिक थी। यूरोपीय संस्कृति और व्यवहार प्रणाली में उनकी न तो रूचि थी और न आस्था। सामन्ती और फैशनपरस्ती से शाहू महाराज को घोर अपत्ति थी उनमें निर्धनों असहायों और शोषितों से स्वभाविक ममता थी। शाहू जी महाराज को प्रायः एकाकी रहना पड़ा किन्तु इससे उनके चिन्तन मनन समझने परखने की शक्ति तीव्र हो गयी थी। एक बार उन्होंने पॉलिटिकल एजेन्ट कर्नल रीव्स को उत्तर दिया था, ''यदि मेरे नाखून बढ़ गये हे तो इसके लिये नाई इसलिये जिम्मेदार नहीं होता कि उसने नाखून नहीं काटे।'' इससे स्पष्ट परिचय मिलता है कि शाहू जी गरीबों को प्यार करते थे। पॉलिटिकल एजेन्ट ने दक्षिण भारत तथा लंका की यात्रा की अनुमति प्रदान कर दी 5 नवम्बर 1819 से इस यात्रा का शुभारम्भ हुआ। दक्षिण भारत के लगभग सभी प्रमुख स्थानों में वे गये और 1 दिसम्बर 1891 को धारवाड़ वापस हुए। तन्जौर में भोसलें परिवार से मिले और लंका में शिकार का आनन्द लिया। यह यात्रा भी शाहू जी के लिये अत्यन्त उपयोगी और लाभप्रद सिद्ध हुई। महारानी लक्ष्मीबाई की शिक्षा भी गवर्नर की पत्नी की देख–रेख में प्रारम्भ हुई। महारानी 4 घण्टें प्रतिदिन पढ़ती थी। श्रीमती काक्स महारानी को चित्रकला तथा कढ़ाई–बुनाई की शिक्षा देती थी। महारानी अपने पाठ स्वयं तैयार करती थी। भूगोल भी पढ़ाई

पुत्री - आकासाहब महाराज

गयी। कोल्हापुर राज्य की सभी रानियाँ राज्य में शिक्षा के प्रसार का अनुमोदन करती है।

सारे घटना प्रसंग एवं सम्पर्क के सन्दर्भ से ज्ञात होता है कि फ्रेजर महोदय छत्रपति शाहू महाराज को कोल्हापुर का आदर्श नरेश बनाना चाहते थे। विवाह के बाद फ्रेजर ने शाहू जी को परामर्श दिया कि वे बह्मचर्य का पालन तब तक करें जब तक कि उनकी नवविवाहिता पत्नी प्रौढ़ परिपक्व और पुष्ट नहीं हो जाती। दुर्बल दाम्पत्य दुर्बल सन्तानों को जन्म देता है। उन्होंने अपने परामर्श में यह भी कहा कि आत्मसंयम तथा इंद्रिय निग्रह करने से पहले तो राजवंश में स्वस्थ और हष्ट–पुष्ट उत्तराधिकारी होगें, दूसरे राजवंश का गौरव बढ़ेगा। तथा स्वर्गीय पिता की इच्छा पूर्ण होगी। फ्रेजर की यह शिक्षा और परामर्श शाहू जी को अत्यन्त रूचिकर तथा उपयोगी प्रतीत हुआ।

ब्रिटिश शासकों की छत्रपति शाहू जी के व्यक्तित्व को सर्वांगीण समर्थ बनाने की धुन थी। उन्होंने शाहू जी को इंग्लैण्ड भेजने का प्रस्ताव पुनः दोहराया। वे चाहते थे कि शाहू जी अपनी शिक्षा इंग्लैण्ड़ जाकर पूरी कर ले। उस समय महारानी की आयु 18 वर्ष थी। शाहू महाराज ने शासकों, संरक्षकों तथा शुभचिन्तकों को सभी के प्रस्ताव ठुकरा दिये और कहा कि वे कुछ वर्ष बाद इंग्लैण्ड जाने पर अधिक लाभान्वित और आनन्दित होगे। महाबलेश्वर के गवर्नर से उन्होंने यही कहा तथा एक पत्र में लिखा, "मेरी प्रजा लम्बे समय से देशी शासन की प्रतीक्षा में है। यदि मैं अभी इंग्लैण्ड जाता हूँ तो उस जनता की आशाओं मे तुषारपात हो जायेगा तथा मैं अभी अपने अनिश्चित आचरण के कारण यूरोप जाकर किसी भी भौतिक आकर्षण एवं प्रलोभन में फंस सकता हूँ।" लार्ड हेरिस ने अपने प्रत्युत्तर में लिखा कि उन्होंनें महाराज के तर्क को स्वीकार कर लिया है।

शाहू महाराज की यात्रा जारी रही। वे बड़ौदा, जोधपुर, भरतपुर, अलवर, मथुरा, इलाहाबाद आदि कई स्थानों में गये। इलाहाबाद में महाराज को आर्य समाज की ओर से अभिनन्दन पत्र भेंट किया गया। इसके अतिरिक्त सहारनपुर, हरिद्धार, अमृतसर, लाहौर, हैदराबाद, कराँची आदि अनेक स्थानो का भ्रमण किया। 24 दिसम्बर 1892 में शाहू जी महाराज अपने दल सहित धारवाड़ वापस आ गये।

छत्रपति शाहू अपने बाल्यकाल से ही अज्ञेय प्रसंगों के प्रति जिज्ञासु थे। वे असाधारण वस्तुओं और व्यक्तियों में नैसर्गिक रूचि रखते थे। दूसरे के परामर्श को वे अपने तर्क से पहले जाँचते थे और जब उनको यह विश्वास हो जाता कि परामर्श सही और ग्रहणीय है तभी वे उसे स्वीकार करते थे। अंग्रेज शासकों के अनेक सुझावों को वे रद्दी की टोकरी में डाल देते। उन्होंने अपने सम्पूर्ण जीवन में यदि किसी अंग्रेज की सलाह यथावत स्वीकार की तो वह केवल अपने गुरू मि0 फ्रेजर की। उनकी प्रतिभा को प्रायः उनका संकोच ढक लेता या फिर दबा देता, किन्तु उनका कार्यकलाप अपने सफल परिणामों से उस प्रतिभा को सदा प्रमाणित करता रहा। धैर्य, साहस, संकोच तथा मृदुलता उनके स्वभाव के बहुमूल्य अंग थे।

सार्वजनिक जीवन

किसी वस्तु का सम्पर्क–बोध मनुष्य की जिस मानसिक शक्ति के द्वारा होता है उसे बुद्धि कहते है और बुद्धि की जो शाखा किसी वस्तु अथवा कार्य के उचित या अनुचित का बोध कराती है उसे विवेक कहते है। विवेक जब परिपुष्ट होकर सत्कार्यो एवं असत्कार्यो के परिणाम से परिचित हो जाता है तो उसे ज्ञान कहते है। ज्ञान सदैव सदाचार की ओर अग्रसर करता है। सुबुद्धि विवेक से परिणति होती है और विवेक शुद्ध ज्ञान में। कुबुद्धि, कुमति का पर्याय है। वह मनुष्य को बुरे कार्यो की ओर अग्रसर करते है। परम पिता परमात्मा अथवा प्रकृति द्वारा बनाई गई इस दुनियाँ मे मनुष्य जब भेद–भाव उत्पन्न करता है विवेक से काम न लेकर कुबुद्धि के संकेत पर कार्य करता है तो वह अपने ही रचयिता का अपमान करने लगता है। इतना की नहीं दिन चाहें जितने भी लगे वह पराभाव तथा पतन को प्राप्त होता है। दुर्बल और निर्बल वर्ग की कहानी सुदूर अतीत से चली आ रही थी और आज भी उस कहानी का उपसंहार नहीं हुआ। न जाने कितने छोटे बड़े नेता इन वर्गो के भाग्य को संवारने के लिये सतत् संघर्ष करते रहे किन्तु एक तीमारदार सौ बीमार– इस राजरोग के रोगी अनगिनत थे जबकि चिकित्सक नहीं के बराबर थे। फिर भी इलाज चलता रहा। एक ओर प्रतिभाशाली, विद्वान कुशल तथा चपल बुद्धि के उच्च कुलीन व्यक्ति थे दूसरी ओर अनजान, अशिक्षित, अन्धविश्वासी तथा जड़मति निम्न वर्ग के व्यक्ति थे। जाति–व्यवस्था की जड़ैं गहरी थी और सामाजिक चेतना बहरीं थी। प्रत्येक युग के महापुरूषों की प्रवृत्तियाँ लगभग एक सी होती है। प्राकृतिक विकार सभी में एक रूप से होता हैं। किन्तु हर युग के समाज में कतिपय मनुष्य ऐसे होते है जो अपने सामान्य विकारों को नियन्त्रित करके अपने अन्तःकरण पर दबाव रखकर ऐसे

महाकृत्य सम्पादित करते है जिससे समाज के अभावग्रस्त, पीड़ित एवं शोषित जनो का कल्याण हो सके। वे अपनी इन्द्रियों, इच्छाओं का दमन करके सामान्य जनों की आकांक्षाओं, अपेक्षाओं तथा आवश्यकताओं की पूर्ति करते है। ऐसे ही लोग युग पुरूष कहलाते हैं। वे शरीर, मन और प्राण को संकट में डालकर भी दीन–दुखियों की भलाई करते है। इतना ही नहीं यदि उस भलाई के रास्ते में कोई बाधा डालकर समाज को अकारण पीड़ित करना चाहता है तो उसे साहसी युगपुरूष बलात् उसे रास्ते से हटा देते है। कितनी अन्तर्वेदना शाहू जी ने अपनी प्रजा और समाज के लिये झेली उसका वर्णन करना कठिन ही नहीं अत्यन्त दुष्कर भी है। लोक कल्याण उनका राजवृत्ति का अंग बन गया था। अपने और अपने परिवार की वेदी पर वे समाज की आवश्यकताओं को रखते थे। छत्रपति शाहू का आत्मोत्सर्ग देखने पर वास्तव में एक विचित्र करूणा का संचार होता है जिस व्यक्ति के शत्–शत् प्रयासों के बावजूद बहुरंगी लांछनों को सहने पर भी अंग्रेज सरकार भीतर से सन्तुष्ट नहीं हुई अन्य राज्यों के राजा भी भीतर से शाहू जी की प्रतिभा, योग्यता तथा लोकप्रियता देखकर ईर्ष्यालू रहते थे तथा कुछ राजा स्पर्धा रखते थे। उच्चकुलीन तन्त्रों का कोपभाजन तो वे आघान्त रहे, पारिवारिक व्याधियाँ शाहू जी का पल्ला नहीं छोड़ रही थी। एक पुत्र की दुर्घटना मे मृत्यु, राज्यव्यापी प्रभाव डालने वाले मुकदमों की उलझन, कृषकों और मजदूरों के उत्थान की समस्या आदि इन समस्त समस्याओं से भी महत्वपूर्ण एक समस्या दलितोद्धार की थी। जब तक जाति व्यवस्था समाप्त तथा समुत्थान न हो जायें तक शाहू जी को चैन नहीं था कोल्हापुर में सिंचाई की विशाल परियोजना के लिये धन की समस्या, सामाजिक विषमता की समस्या के सामने कुछ नहीं थी।

सार्वजनिक कल्याण के लिये जहाँ तक धन के संग्रह की आवश्यकता शाहू जी के सामने थी उससे अधिक समस्या जनमत के संग्रह की थी।

छत्रपति शाहू जी अछूतों के उद्धार के लिये समान धर्म के लोगों से निरन्तर सम्पर्क रखते थे। डॉ0 टी0 एम0 नायर उन दिनों इस कार्य को आगे बढ़ा रहे थे। शाहू जी ने उनके कार्य की प्रशंसा करते हुए उनको भी एक पत्र लिखा। 1919 का वर्ष कोल्हापुर के लिये सामाजिक क्रान्ति का वर्ष था। वर्ष के आरम्भ में शाहू जी एक आदेश जारी किया था जिसके अनुसार कोई व्यक्ति चाहें वह किसी भी जाति धर्म अथवा वर्ण का हो अस्पताल में ससम्मान प्रवेश पा सकता था तथा उसके साथ कर्मचारियों को सज्जनता का व्यवहार करना पड़ेगा। इसके पूर्व कोई अछूत जाति का रोगी अस्पताल में भर्ती नहीं किया जाता था। इतना नहीं इस आदेश में यह भी व्यवस्था थी कि यदि अस्पताल का कोई कर्मचारी किसी भी रोगी के साथ जाति के आधार पर भेदभाव बरतेगा तो उसे 6 सप्ताह के भीतर नौकरी से इस्तीफा देना होगा। इस आदेश की प्रतियाँ राजकीय कार्यालयों में टाँग दी गई, लेकिन सबसे आश्चर्य की बात यह है कि सचिवालय ने इस आदेश को गजट में प्रकाशित नहीं किया शाहू जी इस बात पर बहुत अधिक नाराज हुये और उन्होंने करबीर गजट के अगले अंक को प्रकाशित करने का निर्देश दिया। 15 जनवरी 1919 को एक दूसरा आदेश जारी किया गया जिसके अनुसार प्राइमरी स्कूल, हाईस्कूल तथा कॉलेजों में जातियों के आधार पर छात्रों में भेदभाव न रखा जाये। सचिवालय के कर्मचारियों ने जान–बूझकर इस आदेश की प्रति को गायब कर दिया। शाहू जी को इस पर बड़ी उलझन हुई। इसके पश्चात् तीसरा अत्यन्त महत्वपूर्ण तथा ऐतिहासिक आदेश जारी हुआ जिसके अनुसार शाहू जी ने सभी राजकीय अधिकारियों को निर्देश दिया कि वे सरकारी विभागों में

कार्य कर रहें दलित वर्ग के कर्मचारियों से शालीनता पूर्वक व्यवहार करें तथा उनके साथ छुआछूत का व्यवहार न करें जो अधिकारी उनके इस आदेश का पालन नहीं करेंगें वे उक्त राजकीय आदेश निर्गत होने के 6 मास के अन्दर ही सेवा से त्यागपत्र दे दें। वे पेंशन पाने के अधिकारी नहीं रहेंगे। शाहू जी पग–पग पर अछूतों को सम्पूर्ण सामाजिक धरातल पर प्रतिष्ठित करने के लिये कटिबद्ध थे। जब शाहू जी किसी गाँव में जाते थे, तो वहाँ के स्वर्ण लोग शाहू जी से शिकायत करते थे कि वहाँ के अछूतों ने कुएँ का पानी गन्दा कर दिया है तो शाहू जी स्वयं उस कुएँ के पानी को पी लेते थे। इस पर उच्च्व कुलीन मनोवृत्ति के वे पुरूष अपनी छुद्र मनोवृत्ति पर शर्मिन्दा होते थे। परन्तु वे शाहू जी के रसोई प्रवेश पर रसोई को प्रदूषित मानते थे। शाहू जी इस बात की परवाह किये बगैर अपने अछूतोद्वार के नियोजन को और अधिक निष्ठा तथा शक्ति के साथ सम्पादित करते थे। जाति–व्यवस्था के विरूद्ध आवाज उठाने वाले पत्र–पत्रिकाओं की भी शाहू जी भरपूर आर्थिक सहायता करते थे। शाहू जी महात्मा ज्योतिराव फूले के बाद मराठा लोगों की शिक्षा–व्यवस्था के लिये एक विशाल स्तम्भ बन गये थे।

छत्रपति शाहू जी को अमेरिकन ईसाई मिशन ने अपनी ओर से आश्वासन दिया कि यदि राजाराम कॉलेज उन्हें सौंप दिया जाये तो वे कॉलेज का सफलतापूर्वक संचालन करेगे। लेकिन शाहू जी एक विवेकशील नरेश थे। मराठा कुर्मी होने के कारण उनके अन्दर दलित शोषित वर्ग के उत्थान की उत्कट आकांक्षा तथा आतुरता थी। उनके मन में आशंका थी कि मिशन धीरे–धीरे छात्रों में ईसाई धर्म के संस्कार न पनपा दें इसलिये उन्होंने कॉलेज को आर्य प्रतिनिधि सभा बोर्ड के हाथों सौपनें का विचार किया।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि छत्रपति शाहू जी का सम्पूर्ण जीवन जितना एक नरेश का जीवन था उससे कही अधिक एक समाज सुधारक का था। कोल्हापुर का शासन और पुरोहिती अनुशासन साथ–साथ चल रहे थे। पुरोहितों ने न तो शिवाजी जैसे पराक्रमी वीर को बख्शा और न ही उन्हीं के वंशधर कुर्मी, क्षत्रिय नरेश के साथ वे षडयंत्र करने से बाज आये। क्रिया की प्रतिक्रिया होती है। यह वैज्ञानिक सिद्धान्त समाज पर भी घटित होता है। पुरोहितो प्रपंचों की कुत्सा तथा जुगुप्सापूर्ण असामाजिकता ने उनसे संघर्ष करने वाली शक्तियों को जन्म दिया। कभी वह महात्मा ज्योतिराव फूले, स्वामी दयानन्द सरस्वती तथा रामास्वामी नायकर के रूप में अविर्भूत हुए तो कभी छत्रपति शाहू जी, डॉ0 टी0 एम0 नायर और डॉ0 बी0 आर0 अम्बेडकर के रूप में। औषधियाँ आई–सामाजिक व्यवस्था की सडन की शल्य चिकित्सा भी हुई पर वह ऐसा नासूर बन गई थी कि घाव कोई चिकित्सा स्वीकार ही नहीं करता था एवं निरन्तर बहता रहता था। पर कुछ भी हो निर्बलो और पिछड़ो के उन्नयन का रथ असम्मान और अपमान की पताकाँओं की बीच से निकलता आगे बढ़ता जा रहा था।

महाराष्ट्र में छत्रपति शाहू जी तथा मद्रास में डॉ0 टी0 एम0 नायर दुर्बलों और निर्बलों के परित्राण के लिये क्षण–क्षण आकुल व्याकुल थे। डॉ0 नायर ने 1 अगस्त 1918 को ब्रिटिश संसद के सदस्यो की सभा को सम्बोधित किया जिसमें उन्होंने उच्च वर्ग के अत्याचारों तथा पिछड़े एवं निर्बल वर्गो की व्यथा कही।

इंग्लैण्ड में तिलक का अधिक दिनों तक ठहरना ब्रिटिश सरकार में भ्रम उत्पन्न करने का कारण बन गया था। इसलिये दलितों और शोषितों की समस्या को सही ढंग से प्रस्तुत करने के लिये शाहू जी अपने परम साथी भास्करराव जाधव पर दबाव डाल रहे थे। परन्तु निर्बलों के समर्थक

डॉ0 नायर का 17 जुलाई 1919 को इस नश्वर संसार से शोषितों और दलितों के भाग्य पर एक बज्रपात था और उनके उज्जवल की वेदना से शाहू जी मुक्त नहीं हो पाये थे कि डॉ0 नायर के निधन ने शाहू जी के हृदय में ताजा घाव भर दिया। कोठारी ने अपना विषाद व्यक्त करते हुए कहा कि डॉ0 नायर की मृत्यु निर्धनों के लिये अभिशाप है परन्तु उनके बताए हुए रास्ते में चलकर अब हमें अपने पैरो पर खड़े होना चाहिये।

छत्रपति शाहू कोठारी को दलितों की वकालत के लिये इंग्लैण्ड भेजना चाहते थे। इसके उन्होंने तीन हजार रूपये कोठारी को भेज दिये किन्तु कोठारी का बवासीर का ऑपरेशन होना था अतः उन्होंने अपनी असमर्थता व्यक्त करते हुए रूपये वापस भेज दिये। फ्रेजर महोदय ने शाहू द्वारा जातिगत प्रतिनिधित्व के लिये किये गये अथक प्रयासों की सराहना की और अपना प्रबल अनुमोदन भी प्रस्तुत किया। डॉ0 नायर और शाहू जी के बलिष्ठ प्रयत्न तथा सतत् संघर्ष के बाद सरकार ने जातिगत प्रतिनिधित्व पर गम्भीरता पूर्वक विचार किया। इसके परिणामस्वरूप ज्वाइन्ट सेलेक्सन कमेटी ने मद्रास प्रेसीडेंसी में 98 मे से 28 स्थान दलितों तथा शोषितों की देने की व्यवस्था की। शाहू जी के जीवन में यह अत्याधिक महत्वपूर्ण तथा ऐतिहासिक उपलब्धि थी। इसके साथ ही शाहू जी ने मुसलमानों के पिछड़ेपन तथा निर्धनता को भी दूर करने पर भी दृष्टिपात करना प्रारम्भ कर दिया था। शाहू जी का मुसलमानों के प्रति पहला सबसे महत्वपूर्ण कार्य यह था कि उन्होंने कुरान–शरीफ का मराठी अनुवाद कराने में प्रचुर धनराशि व्यय की किन्तु वह अनुवाद इसलिये अपूर्ण रह गया क्योंकि इससे पहले किसी दूसरे ने अनुवाद कर दिया था। उन्होंने थियेटर पैलेस में मुसलमानों की सभा को सम्बोधित करते हुए उनको आगे बढ़ने, मजहबी विवाद को समाप्त करने तथा शिक्षा प्राप्त करने

की प्रबल प्रेरणा दी थी। क्योंकि मानवतावादी दृष्टिकोंण रखने वाला कोई भी व्यक्ति निर्द्वेष भाव से समस्त लोक समूह उत्कर्ष पथ पर अग्रसर करने में किसी को स्वीकार नहीं कर सकता है।

जनता ने सार्वजनिक रूप से शाहू जी को राजर्षि की उपाधि से विभूषित किया था। मुसलमानों को शाहू जी इस असम्प्रदायिक भावना एवं उसके लिये किये गये सक्रिय प्रयास से बड़ी शक्ति और प्रोत्साहन मिला। शाहू जी ने अपने राज्य को समस्त पुनीत स्थानों की भूमि जो वक्फ की थी, मुहम्मइन एजूकेशन सोसाइटी को इस उद्देश्य से दे दी कि सोसाइटी मुसलमानों की हर प्रकार से मदद कर के तरक्की के मार्ग को प्रशस्त करेगी।

शाहू जी ने हर वर्ग की यातना को अपनी यातना, सबकी पीड़ा को अपनी पीड़ा समझा। उन्होंने जुलाई 1919 में तलाक कानून तथा इसी से मिलता–जुलता एक एक्ट पास किया। जिसमें अकारण किसी स्त्री को पुरूष द्वारा पीड़ित किये जाने पर दण्ड दिये जाने की व्यवस्था थी।

अगस्त 1919 के अंतिम सप्ताह में उन्होंने गोवध अथवा किसी गाय को कसाई के हाथों बेचने को कानूनी अपराध घोषित किया। इस देश का कल्याण वेदान्त के माध्यम से ही संभव है। शाहू जी ने गवर्नर को 2 अगस्त 1919 को एक पत्र द्वारा सूचित किया कि तिलक कहते है कि प्रेसीडेंट वुडुरों विल्सन ने कहा है कि भारत को आत्म निर्णय ने इंग्लैण्ड में अपने एक भाषण में जाति–व्यवस्था को अनुपयोगी तथा वर्तमान संदर्भ में अर्थहीन बताया गया है। किन्तु जब उसकी लिखित भाषण वितरित किया गया तो उसमे जाति व्यवस्था को उपयोगी ठहराया गया। इससे उनके भाषण को सुनने वाले बड़े आश्चर्य में पड़ गये। कोल्हापुर का नामी

अपराधी दामू जोशी 26 जुलाई 1919 को हिल सैनीटोरियम से अपने चार साथियों सहित चोरी से निकल भागा। इसमें भी शाहू जी को उच्च कुल का षड्यन्त्र ही मूल कारण प्रतीत हुआ। लक्षतीर्थ में इन्हीं दिनों एक भयानक बम विस्फोट हुआ किन्तु कारण या अपराधी का पता नहीं चला। कोल्हापुर में 22 अगस्त 1919 को सतारा के सभी प्रमुखों और जागीरदारों को सम्मेलन में बुलाया गया जिसकी अध्यक्षता शाहू जी ने की। महाराज बीकानेर गंगासिंह जी ने सम्मेलन में भाग लेने का निमन्त्रण अस्वीकार कर दिया था। छोटी जागीरों अथवा रियासतों के राजाओं के लिये प्रमुख शब्द का प्रयोग शाहू जी नहीं पसन्द करते थे इस पर भी सम्मेलन में चर्चा की गई। शाहू जी के अदम्य प्रयास सरकार ने सभी छोटे–बड़े राजाओं को राज्य मंडल में सम्मिलित किया जाना स्वीकार कर लिया। इस प्रकार हम बारम्बार इस तथ्य के प्रमाण पाते हैं कि शाहू जी अपने उद्देश्य में अटल और दृढ़ थे। वे तब तक संघर्ष नहीं बन्द करते थे जब तक उनका अभीष्ट पूर्ण न हो जाये। असलियत यह है कि शाहू जी इस देश की मानवता को अखण्ड रूप से एक सूत्र मे बाँधने के लिये छटपटा रहे थे। उसमें किंचित विलम्ब भी उनको असहनीय था इस देश की अतरंग सामाजिक दुर्दशा पर दृष्टिपात करने वाले सभी विवेकशील विचारक सहज ही सहमत होगें कि इसकी राजनीतिक आजादी से पूर्व सामाजिक आजादी मिल जानी चाहिये, यदि राजनीतिक आजादी देश के मुट्ठीभर उच्च वर्ग के लोगों के लिये आयी तो अस्सी प्रतिशत से ऊपर की संख्या वाले वर्गो की दशा में कोई सुधार नहीं हो सकता। गरीब, निर्धन, अछूत तथा बौद्धिक रूप से पिछड़े वर्ग राजनीतिक दासता से अधिक विकराल सामाजिक गुलामी के अब भी शिकार है। शाहू जी का इस समस्या से तादात्मय हो गया था। इसलिये 6 सितम्बर 1919 को उन्होंने आदेश जारी किया कि किसी भी सार्वजनिक

स्थान में अछूतों को जाने की स्वतन्त्रता रहेगी और जो व्यक्ति इसमें किसी प्रकार की भी आपत्ति करेगी उसे कानूनी दण्ड दिया जायेगा। कुएँ, सार्वजनिक भवन, धर्मशाला, सरकारी भवन, निःशुल्क सरकारी आवास, जल संस्थान आदि में सभी का खुला आवागच्छ हो सकेगा। जाति के आधार पर किसी को जाने से नहीं रोका जा सकेगा। इस प्रकार के नित्य नये कार्यो की जनता द्वारा शाहू जी की उन्मुक्त सराहना की गयी तथा उनके सार्वजनिक अभिनन्दन किये गये।

बाह्वय व्याधियों के साथ ही शारीरिक व्याधि भी आ गई। छत्रपति शाहू जी बम्बई से प्रस्थान करके मिराज पहुँचे जहाँ उनको अपने कारपंकिल (मेरूदंड का फोड़ा) का ऑपरेशन कराना था। दो सप्ताह का समय लग गया। इसके बाद भी स्वास्थ्य लाभ के लिये शाहू जी को कुछ अधिक समय तक मिराज में ठहरना पड़ा। शाहू जी का अनुभव बहुआयामी था। उन्होंने डी0 वी0 गुप्ले को समाचार पत्र प्रकाशित करने से यह कहकर रोका कि बिना अपेक्षित धनराशि के ऐसे पत्र जन्म लेने से पहले मर जाते है। बहरहाल यह योजना कार्यान्वित नहीं हो सकी वैसे शाहू जी लोकतन्त्रीय पत्रकारिता को बल देना चाहते थे। उनके विद्यालय का एक पुराने छात्र श्री पतिराव शिन्दे ने चमड़ा तैयार करने की ट्रेनिंग लेकर भी उस काम को नहीं किया। वे पुलिस इन्सपेक्टर के पद पर सरकारी जिले मे कार्यरत थे वे साप्ताहिक पत्र निकालने के लिये विशेष आकांक्षी थे। शाहू जी के सामाजिक न्याय के सम्बंध में जो व्यावहारिक विचार हो शिन्दे उनके कट्टर समर्थक थे। शिन्दे ने "विजय मराठा" नामक साप्ताहिक पत्र अपने मित्रों एवं शुभचिन्तकों के सहयोग से। दिसम्बर 1919 को पूना से प्रकाशित किया। श्रीपतिराव शिन्दे निर्भीक, पुरूषार्थी तथा त्यागी व्यक्ति थे। उन्होंने अपने विजय मराठा को ऐसा लोकप्रिय तथा समाजोपयोगी

बनाया कि पूना और बड़ौदा से क्रमशः निकलने वाले कोठारी और भगवन्त राव पालेकर के 'जागरूक' और 'जाग्रति' पत्र धूमिल पड़ गये।

लोकमान्य तिलक 27 नवम्बर 1919 को लन्दन से बम्बई वापस आ गये। अतिशूद्र समाज ने उनके स्वागत समारोह का विरोध किया। तिलक ने अपने मित्र सत्यमूर्ति से कहा, "समुद्र पार करने के लिये परम्परागत कोई प्रायश्चित नहीं करूँगा" परन्तु उनको प्रायश्चित की पूरी पद्धति स्वीकार करनी पड़ी और उन्होंने वैसा ही किया। शाहू जी वन्य पशुओं को पालने और शिकार करने के बहुत शौकीन थे। एक बार उन्होंने अपने पालतू चीता और चीती की अविश्वसनीय कहानी सुनाई जिसे नेचुरल हिस्ट्री सोसाइटी आफ बाम्बे को रिकार्ड करने के लिये कहा गया। शाहू जी का सम्पूर्ण जीवन वृत्त अखण्ड मानवता के आराधक की कथा है। यदि भारत के इतिहास को तथ्यों पर आधारित करके पुनः लिखा जाये तो इतिहासकारों को लिखना पड़ेगा कि शाहू जी तथा डॉ0 नायर मानव से मानव की मुक्ति के अग्रदूत थे। इतिहास और यह देश तथा दलित और शोषित सभी इन दो महापुरूषों के युग–युग तक ऋणी रहेगें।

अस्वस्थ रहते हुए भी छत्रपति शाहू जी का ध्यान सदैव गरीबों, पिछड़े तथा दलितों के अभ्युथान के लिये सतत्–सक्रिय था। वे कोई भी कार्य करते थे उसमें उद्देश्य एक ही रहता था, वह उद्देश्य उपेक्षित मानवता का सामाजिक उन्नयन था। एक क्षण के लिये भी वे इस चिन्ता से मुक्त नहीं रह सकते थे। कुलकर्णी वातन–इच्छलकरणजी का मामला, उच्च कुलीन तन्त्रों के आये दिन के षड़यन्त्र, ब्रिटिश शासन की परिस्थितिजन्य वर्जनाएं, कोल्हापुर की कृषि और उद्योग का विकास तिलक का वैट–विरोध, बीच–बीच में उठने वाली गृहस्थी की जटिलतायें एक नहीं अनेक समस्यायें थी जिनकी कटीली परिधि में शाहू जी एक नव

पादप की भाँति सुरक्षित रूप से संवर्द्धमान थे। अच्छे इंसान की जिन्दगी का सौदा है कि वह मुसीबतें सहे और समाज का कल्याण करें, अन्यथा मरने में कितनी देर लगती है। इस दुनियाँ में जीवित रहने के साधनों से मरने का साधन अधिक है। परन्तु आदर्श पुरूष अपने लक्ष्यगामी पथ से कभी भी पश्चात्पद नहीं होते। शाहू जी उन्हीं आदर्श पुरूषों में एक थे। शाहू जी के अविराम प्रयास का फल था कि सरकार ने प्रिंसेज चेम्बर (राजमंडल) के गठन की बात सिद्धान्तः स्वीकार कर ली। रवासेराव जाधव इस सन्दर्भ में पर्याप्त सहयोग कर रहे थे। उनकी पुस्तक वेक अप प्रिंसेज (राजाओं जागों) कतिपय नयें संशोधनों और संबर्द्धनों के साथ पुनः मुद्रिक होने के लिये तैयार थी। तिलक महाराज कुलकर्णी वातन को समर्थन दे रहे थे। कुलकर्णी ही क्या कोल्हापुर दरबार का विरोध कितने ही अवांछनीय व्यक्ति करने लगे, तिलक जी बिना उचित–अनुचित का विवेक किये उसका साथ देने लगते थे। शाहू जी को यह चिन्ता थी कि तिलक कुलकर्णी लोगों से मिलकर कोई न कोई षड़यन्त्र कर सकते हैं। उन्होंने रामभाऊ सैब्नीज को बम्बई सरकार के राजनैतिक सचिव राबर्टसन को इस समस्या से अवगत कराने हेतु भेजा। बड़ौदा के प्रतापसिंह शाहू जी की देख–रेख में स्वास्थ्य लाभ कर रहें थे। प्रतापसिंह शाहू जी के प्यार तथा पितृ सुलभ व्यवहार को पाकर गद्‌गद् थे। शाहू जी के मानवीय संवेदन उस समय के समाज की एक मूल्यवान उपलब्धि थी। इसलिये कभी–कभी यह सोचकर आश्चर्य होता है कि छत्रपति शाहू जैसा कृपालु, करूणाशील, राजपुरूष शिकार में जीवों का वध कैसे करता था वह मरते तड़पते, छटपटाते वन्य पशुओं की पीड़ा कैसे देखते और सहतें होंगे और वह भी अपने ही द्वारा मारे गये पशुओं की।

अगले वर्ष प्रिंस आव वेल्स के द्वारा राजमंडल का विधिवत् उद्घाटन होना था। राजमंडल के संविधान रचना से सम्बंधित कुछ सुझाव शाहू जी ने सरकार को प्रेषित किये थे। शाहू जी का यह भी मत था कि राजमंडल का उद्घाटन वायसराय करें तथा भाषा की सुगमता की दृष्टि से उसकी अध्यक्षता कोई नरेश करें। शाहू जी की यह भी प्रबल आकांक्षा थी कि कोल्हापुर राज्य को सीधे भारत सरकार से सम्बद्ध किया जाये। इसका अर्थ यह था कि शाहू जी अपने तथा सभी रियासतों के लिये अधिकाधिक स्वतन्त्रता चाहते थे। उद्देश्य एक ही था कि राज्य के शोषितों और दलितों को सामाजिक समानता दिलाने के लिये प्रवृत्त की गयी योजनायें अबोध तथा स्वतन्त्र रूप से कार्यान्वित की जा सके। दिसम्बर 1919 में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ जिसमें नेताओं ने वायसराय को वापस बुलाने का नारा अत्यन्त वांछनीय अभद्र भाषा में बुलंद किया। यहाँ तक कि ऐसी भाषा के प्रयोग पर महात्मा गाँधी ने भी आपत्ति की। शाहू जी ने इस पर कांग्रेस के नेताओं के अनुत्तर दायित्वपूर्ण व्यवहार पर अपनी आपत्तियाँ सिक्रेटरी ऑफ स्टेट फॉर इन्डिया को भी लिख भेजीं।

शाहू जी केवल दलितों और शोषितों के बीच ही नहीं, वे राजाओं के जातीय भेदभाव को भी मिटाना चाहते थे। महाराजा इन्दौर को उन्होंने बड़े साहस से लिखा कि वे अपने पुत्र की शादी मराठों में करें भले ही मराठे उनसे सम्पत्ति और वैभव में छोटे हों। शाहू जी की धारणा थी कि चूँकि हमारा धर्म छुआ–छूत सिखाता है इसीलिये दलितों और शोषित जातियों के लोग ईसाई धर्म को स्वीकार रहे हैं। संसार के अन्य किसी धर्म में छुआ–छूत अथवा जातीय श्रेष्ठता का सिद्धान्त नहीं है यह केवल हिन्दुओं में है। शाहू जी ने एक और क्रान्तिकारी कानून जारी किया। इस कानून के मुताबिक शूद्रों की कोई अवैध सन्तान वंश की सम्पत्ति के उत्तराधिकारी

से वंचित नहीं रह सकती थी। यह हिन्दू कानून 17 जनवरी 1920 को जारी किया गया। इतना ही नहीं उस हिन्दू कानून में यह भी व्यवस्था थी कि उत्तराधिकारी की यह कानूनी व्यवस्था लड़कियों में प्रवृत्त होगी चाहे वे जोगिनी हो अथवा देवदासी। 'यूनाइटेड इन्डिया तथा इन्डियन स्टेट्स' नामक पत्रों ने इस हिन्दू कानून के बनाने पर शाहू जी को हार्दिक बधाई दी और ब्रिटिश सरकार से अनुरोध किया कि वे भी इस कानून को यथावत् लागू करें। उच्च समाज शाहू जी के पीछे पड़ा था। उच्च कुल के व्यक्तियों के द्वारा प्रकाशित पत्रों में शाहू जी का प्रचार तेज कर दिया। उधर शाहू जी इस प्रयास में थे कि किसी प्रकार प्रतिष्ठित समाचार पत्रों द्वारा उच्च कुलीन व्यक्तियों का कठोरता से विरोध हो। इसके लिये वे सुयोग्य सम्पादकों को आर्थिक सहायता करके उनको अपने पक्ष में ला रहे थे।

भारत में बोल्शेविक गतिविधियाँ बढ़ रही थी। सरकार ने इस सम्बन्ध में शाहू जी को सूचित और सावधान किया था। मध्य एशिया में बोल्शेविक विचारधारा के लोग व्यापारी बनकर अपनी कार्यवाहियाँ निरन्तर बढ़ा रहे थे। सरकार उनके लिखे साहित्य पर हर प्रकार का प्रतिबन्ध लगाने की बात कर रही थी। शाहू जी के गुरू फ्रेजर अवकाश प्राप्त करके 3 फरवरी 1920 को कोल्हापुर भ्रमणार्थ पधारे। शाहू उनके स्वागत के लिये मिराज तक गये। अधिकारी और कर्मचारियों द्वारा फ्रेजर के स्वागत में फल और फूल भेंट किये गये। शाहू जी ने फ्रेजर के आगमन पर उनसे हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त की। फ्रेजर के पूर्वागमन के समय से अब कोल्हापुर में बहुमुखी परिवर्तन हो चुके थे। उन्होंने फ्रेजर से सविनय कहा कि आप यहाँ आकर उन परिणामों से अवगत होंगे जो आपके मार्ग निर्देशन में आपके शिष्य से सफलीभूत किये है। आपकी साधना आपके परामर्श तथा

आपकी तपस्या कोल्हापुर में साकार हुई है। मैंने कोल्हापुर में तथा कोल्हापुर के लिये जो कुछ भी किया है वह उनके सहयोग से ही, जो सारे कार्यक्रमों में मेरे सहभागी रहें हैं। विशेष रूप से मेरे भ्राता बापू साहब जिनकी कृपा और सहायता के बिना मेरे लिये कुछ करना सम्भव नहीं था। मैं गिरे हुओ को उठाने में ईसाई मिशनरियों का भरपूर सहयोग पाता रहा हूँ– मैं उनका भी हृदय से आभारी हूँ। भारत के लिये आज सर्वाधिक आवश्यकता है व्यापक शिक्षा–व्यवस्था की। फ्रेजर महोदय ने प्रत्युत्तर में कहा कि शाहू जी ने कोल्हापुर राज्य की शिक्षा तथा दलितों और शोषितों के उन्नयन का अत्यन्त सराहनीय कार्य किया है। यहाँ तक कि मुसलमानों के कल्याण के लिये भी शाहू जी ने भरसक प्रयास किया है। वस्तुतः हिन्दू मुसलमानों, ईसाई इनमें सभी वर्गों और जातियों के लोगों के शाहू जी एक स्नेही पिता है और आदर्श पिता के रूप में उन्होंने निर्बलों की अधिक सहायता की है उन्हें शिक्षित बनाया है, उनको काम में लगाया है। भारत की सामाजिक व्यवस्था में जड़े परम्पराओं तथा रूढ़ियों के बद्धमूल और व्याप्त होने के कारण यह कार्य अत्यन्त दुश्कर था जिसे शाहू जी ने नाना प्रकार के संकट भोग कर भी सम्पन्न किया। फ्रेजर महोदय ने कोल्हापुर की जनता से अनुरोध किया कि ऐसे लोकनिष्ठ शासक छत्रपति शाहू जी को हर प्रकार से सहयोग प्रदान करे। शाहू जी ने फ्रेजर की स्मृति को चिरस्थायी करने के लिये उनके नाम से उनकी उपस्थिति में एक मार्केट का 3 फरवरी 1920 को शाहूपुरी मे शिलान्यास किया। शाहू जी एक नरेश होने के साथ–साथ आदर्श मानव भी थे। वे अपने सामान्य लोगो के प्रति निष्ठापूर्ण व्यवहार करते थे। फ्रेजर को वे अपना सच्चा हितैषी गुरू मानते थे। इच्छलकरण जी का मामला अब भी शाहू जी के मन को कचोट रहा था। वे सरकार से चाहते थे कि इसके लिये आरबिट्रेशन की व्यवस्था करे।

उनका कहना था कि यह मामला राज्य का भीतरी मामला है। सरकार का इसमें हस्तक्षेप करना शोभा नहीं देता। आरबिट्रेशन ही सरकार और राज्य के बीच किसी मामले की सुनवाई कर सकता है। उसका निर्णय दोनों पक्षों को मान्य होना चाहिये। यदि सरकार ऐसा नहीं करती तो इसे सरकार द्वारा अवांछनीय हस्तक्षेप समझा जायेगा। राष्ट्रीयता तथा देश की स्वतन्त्रता के नाम पर तिलक एक ओर मनुवादी व्यवस्था का सक्रिय पोषण कर रहे थे, दूसरी ओर पूना की सभा में घोषणा की कि जो भारत को आजादी दिलायेगा, मैं उसके साथ बैठकर भोजन कर सकता हूँ वह चाहे जिस जाति का हो। अछूतों के साथ बैठकर भी खाने मे मुझे कोई आपत्ति नहीं होगी। तिलक की सार्वजनिक घोषणा से निम्न वर्ग के लोगों को कुछ राहत मिली, कुछ साहस भी बढ़ा। उन्होंने इसे तिलक की कमजोरी मानकर अपना आन्दोलन और तेज कर दिया। शिक्षा को अनिवार्य करने का अनुमोदन करने के लिये 8 फरवरी 1920 को पूना में एक सभा बुलाई गयी जिसमें तिलक ने कहा कि बालिकाओं का अनिवार्य शिक्षा योजना से मुक्त रखना चाहिये। सभा में लोगों ने तिलक की अवमानना कर दी। इन दिनों तिलक की स्थिति शोचनीय थी। उनके इन दिनों के प्रगतिवादी विचारों पर कोई विश्वास नहीं करता था। सम्पूर्ण जीवन तो उन्होंने सामाजिक न्याय और सामाजिक सुधारों का विरोध किया था, अब वे प्रगतिवादी कैसे हो गये ? लोगों को यह समझ में नहीं आता था। गवर्नर की पत्नी ने बाल–कल्याण के चन्दे के लिये शाहू जी से अनुरोध किया तो अपनी सहज उदारतावश उन्होंने पाँच मोती दान किये जिनकी उस समय रू0 5000/– कीमत थी। श्रीमती गवर्नर ने इसके लिये उनको हार्दिक धन्यवाद दिया। उधर तिलक के अनुयायियों द्वारा कोई न मिथ्या अभियोग

तथा आरोप शाहू जी पर लगाया गया, शाहू जी हर विरोध की काट करते रहे।

7 मार्च 1920 को भावनगर में आर्य समाज की सभा हुई जिसकी अध्यक्षता शाहू जी ने की। उन्होंने इस सभा में ललकार कर कहा कि हिन्दू समाज में बाल–विवाह, बेमेल–विवाह, बहु–विवाह, पुरोहित प्रपंच शिक्षा का अभाव, वर्णाश्रम पद्धति, अनेक घातक सामाजिक रूढ़िया, आत्मघाती परम्पराएँ आदि ऐसी अनेक व्याधियाँ है जिन्होंने हिन्दू समाज को जर्जर कर दिया। आगे शाहू जी ने कहा कि स्वामी दयानन्द सरस्वती ने इन बुराइयों के खिलाफ बहादुरी से जेहाद छेड़ा है। मेरी मान्यता है कि एक वैदिक धर्म विश्व धर्म में परिणत होगा। अतः सभी आर्य बन्धुओं को चाहिये कि वे सक्रिय होकर सहयोग दें। स्वामी दयानन्द ने समुद्री यात्राओं के निषेध, जाति–पाँति अछूत जैसी कुरीतियों का कठोरता से खंडन किया था। शाहू जी ने अपने व्याख्यान में स्वामी दयानन्द तथा 'सत्यशोधक समाज' की भूरि–भूरि प्रशंसा की।

तिलक के दोहरे व्यक्तित्व तथा दोहरी नीतियों की सार्वजनिक निन्दा होने लगी। 'दि सर्वेन्ट्स आफ इन्डिया' समाचार पत्र ने तिलक के सम्बंध में अपने 18 मार्च 1920 के अंक में लिखा कि तिलक अपने भाषण में तो कहते है कि मुझे बड़ा सुख मिलेगा यदि राजसत्ता अकेले निम्न वर्ग के व्यक्तियों के हाथों में सौंप दी जाये। व्यंग्य करते हुए पत्र में लिखा– इस प्रकार की उल्टी–सीधी बातों को केवल तिलक से ही आशा की जा सकती है। 'हिन्दू मिशनरी' पत्र के सम्पादक गजानन राव वैध ने तिलक की तीखी आलोचना अपने पत्र के माध्यम से की। शाहू जी ने तिलक द्वारा प्रदर्शित की गयी गैर ब्राह्मणों के प्रति किसी भी सद्भावना पर कभी विश्वास नहीं किया। उन्होंने तिलक और निम्न वर्ग के सम्बंधो पर टिप्पणी

करते हुए कहा कि मनुवादी शक्तियाँ अथवा तिलक निम्न वर्ग के व्यक्तियों का नेतृत्व नहीं कर सकते। कसाई भेड़ों का नेतृत्व नहीं कर सकता। शाहू जी ने समूचे महाराष्ट्र में एक गरीब परिवार सामाजिक न्याय के लिये निरन्तर संघर्ष करने वाले महापुरूष के रूप में प्रतिष्ठित हो रहे थे। सर्वत्र शाहू जी की प्रशंसा होने लगी। 1920 के प्रारम्भ मे शाहू जी ने पत्रकार, कवि, लेखक तथा अछूतों के नेता डी0 ए0 गवाई को कोल्हापुर बुलाया और सामाजिक न्याय के लिये निर्भय हो कार्य करने लिखने पढ़ने की प्रेरणा तथा प्रोत्साहन दिया।

दलितों और शोषितों के उद्धार कर भावी सूत्र अपने दोनों छोरो से दो महापुरूषों के हाथों में लिपटना चाहता था। उनमें एक थे राजर्षि छत्रपति शाहू जी दूसरे थे बाबा साहब भीमराव अम्बेडकर। शाहू जी के एक परम स्नेही और भक्त दत्तोबा पवार जो चमार जाति के थे– चाहते थे कि डॉ0 अम्बेडकर का परिचय शाहू जी से हो। पवार मे दोनों विभूतियों को मिलाने का अवसर निकाल ही लिया। शाहू जी और डॉ0 अम्बेडकर मिलने पर एक दूसरे से अत्यन्त प्रभावित हुए जो कार्य मनुष्य के द्वारा सम्भव नहीं होते उन्हें नियति स्वयं अपने हाथ में लेकर उसे पूरा करती है। अभी हम कह चुके हैं, कि शाहूजी एक प्रखर बुद्धि वाले युग की हर धड़कन को पहचानने वाले नरेश थे। इसीलिये वे भली–भाँति समझते थे कि यदि किसी भी विचारधारा को प्रचारित और प्रसारित करना हो तो उसके लिये सर्वाधिक उपयोगी माध्यम समाचार पत्र है। शायद इसी प्रयोजन से उनकी विचारधारा के अनुरूप जो पत्र होते थे वे उनकी भरपूर आर्थिक सहायता करते थे। डॉ0 अम्बेडकर को पत्र प्रकाशन की सलाह देकर उनको आर्थिक सहयोग भी प्रदान किया। 31 जनवरी 1920 को 'मूकनायक' नामक साप्ताहिक पत्र डॉ0 अम्बेडकर ने प्रारम्भ किया।

डॉ0 अम्बेडकर ने 28 मार्च 1920 को दक्षिण दलित शोषित वर्गों के एक सम्मेलन की अध्यक्षता की जो कागल जागीर इलाके के मनगाँव नामक ग्राम में सम्पन्न हुआ। सम्मेलन में डॉ0 अम्बेडकर की सामाजिक न्याय की योजनाबद्ध कार्यवाहियों की भूरि–भूरि प्रशंसा की गई।

मनगाँव के सम्मेलन में शाहू जी भी उपस्थिति हुए तथा उसका उद्घाटन किया। शाहू जी ने अपने व्याख्यान में अछूतों और पिछड़ों की समस्याओं तथा उनके समाधान के लिये किये गये उपायों की विस्तार से चर्चा की। उन्होंने उन सभी भारत के प्रसिद्ध नेताओं को मंच से खुले ललकारा–धिक्कारा जो अस्पृश्यता के समर्थक थे तथा वर्ण व्यवस्था के अलमवरदार थे। उन्होंने सत्यशोधक समाज, आर्यसमाज तथा अमेरिकन मिशन की मुक्त कंठ से सराहना की जिन्होंने इस देश की खण्डित मानवता को अखंड सूत्र में बाँधने के पोषक तथा सक्रिय सहयोगी थे। शाहू जी ने उन राजनीतिज्ञों की भी चर्चा जो पूछते थे कि राजनीति के अछूतोंद्धार से क्या लेना देना ? शाहू जी ने उनसे पूछा कि ऐसी राजनीति से क्या लाभ होगा जो मानव को मानव न समझे और उसे एक पशु तथा तुच्छ कृमि कीटों जैसा समझे और उससे वैसा ही व्यवहार करें। शाहू जी ने कहा कि हमें ऐसे राजनेताओं की आवश्यकता है जिनकी कथनी और करनी में कोई भेद नहीं है। आगे उन्होंने कहा कि मैं अब तक जिन डॉ0 अम्बेडकर से विरक्त था, वह तो वास्तव में विस्तृत समाज के आभूषण है। शाहू जी ने अन्त में डॉ0 अम्बेडकर को सम्बोधित करते हुए उनसे कामना की कि वे कोल्हापुर से प्रस्थान करने के पूर्व मेरे साथ मेरे राजपूतवाडी कैम्प में चलकर हमारे सहभोग में सम्मिलित हों। अपने व्याख्यान के निष्कर्ष में उन्होंने कहा, "आप सबने डॉ0 अम्बेडकर में अपना सच्चा हितैषी, सच्चा संरक्षक पा लिया है। मेरा ध्रुव विश्वास है कि बेड़िया काट

देगें। इतना ही नहीं, एक समय आयेगा जब डॉ0 अम्बेडकर अगली पंक्ति के नेता बनकर चमकेगें तथा भारत प्रसिद्धि तथा प्रभाव के व्याक्ति होगे।" कभी–कभी लोकप्रियता और लोक प्रभाव की रक्षा में मनुष्य अपने उन सिद्धान्तों से भी पश्चात्पद हो जाता है जिनके कारण ही उसकी प्रतिष्ठा और प्रभाव होतें है। जिस समय शाहू जी जैसे अखंड मानवता के पुजारी भारत के दलितों, शोषितों के उन्नयन तथा सामाजिक समीकरण का उद्गम प्रयास कर रहे थें, उस समय तिलक और गाँधी इस संदर्भ में अपनी–अपनी सफाई दे रहे थे। तिलक सभाओं में सामाजिक न्याय का समर्थन करते थे और अखबारों में वर्णव्यवस्था तथा जातिव्यवस्था का लिखित पोषण करते थे। इस बिन्दु और विषय पर उनकी दोहरी नीति समाज में खुले तौर पर उपहासास्पद बन गयी थी। गाँधी जी ऊँच–नीच और छूत–अछूत की भावना को अतीव जघन्य मानते थे, परन्तु जाति प्रथा और वर्णव्यवस्था का प्रबल अनुमोदन करते थे। गाँधी जी की मान्यता थी कि हिन्दू समाज जाति व्यवस्था के बिना नहीं चल सकता। जाति प्रथा को समाप्त करने के लिये जो आन्दोलन उन दिनों चल रहे थे उस समय गाँधी जी ने यहाँ तक कहा कि जाति प्रथा हिन्दू समाज की एक शक्ति तथा हिन्दुत्व का रहस्य है। जाति व्यवस्था अपने मूल में एक समग्र व्यवस्था है तथा राष्ट्रीय समृद्धि के लिये आवश्यक है, अपने में एक अन्धविश्वास है जिसे पश्चिम से उधार लिया गया है।

छत्रपति शाहू जी राजाराम स्कूल तथा कॉलेज की आर्य समाज के हाथों प्रगति को देखकर अत्यधिक प्रसन्न हुए। उधर ब्रिटिश सरकार के रेजीडेट आर्य समाज की गतिविधियों पर दृष्टि रख रहे थे जबकि शाहू जी उनसे कहते थे कि पुरोहिती संकीर्णता को खंडित करने के लिये आर्यसमाज एक जबावी संस्था है। फ्रेजर महोदय ने शाहू जी को परामर्श

दिया कि वे सार्वजनिक रूप से मनुष्य विरोधी विचार न व्यक्त करें अन्यथा उनको कोल्हापुर का एक वर्गीय शासक समझा जायेगा। बम्बई में शाहू जी को जमुनादास द्वारकादास ने बताया कि गाँधी तथा जमुनादास तिलक की पार्टी के विरूद्ध है। यह सुनकर शाहू जी को परम सन्तोष मिला। इसी सप्ताह शाहू जी ने चिकित्सों को सलाह की उपेक्षा करके एक हवाई जहाज में बैठकर बम्बई के आस–पास चक्कर लगाया। जब लौटे तो उनका बुखार ठीक हो गया। इच्छलकरणजी तथा तजौर का मामला अब भी शाहू जी के मन को अटकायें हुए था। दीवान सैब्नीज द्वारा निरन्तर प्रयास जारी था। शाहू जी बीकानेर के महाराज गंगासिंह को कोल्हापुर अथवा दिल्ली में मानपत्र भेंट करना चाहते थे किन्तु समय और तिथि के निश्चित हो जाने के बावजूद गंगा सिंह ने इस कार्यक्रम को करने से मनाकर दिया। गंगासिंह को सरकार ने विशेष सम्मान पत्र प्रदान किया था। इसी उपलक्ष्य में शाहू जी यह अभिनन्दन समारोह करना चाहते थे।

कोल्हापुर नरेश के अविराम परिश्रम का फल यह हुआ कि सत्यशोधक समाज में नासिक में अपना केन्द्र बनाकर निम्न वर्ग में शिक्षा और सामाजिक न्याय की भावना का तेजी से प्रचार प्रारम्भ कर दिया। आर्य समाज का समस्त कार्य कलाप शूद्रों और अतिशूद्रों को शिक्षित बनाने तक सीमित था और वह भी कोल्हापुर नगर तक। उन दिनों 'सत्य शोधक समाज' के सक्रिय युवा नेताओं में डी0 आर0 भोसलें, गनपतराव मोरे, राव साहब थोराट पाटिल वानिकर आदि प्रमुख थे। शाहू जी को नासिक के इन युवा नेताओं द्वारा 'सत्य शोधक समाज' की कार्यप्रणाली का बोध हो गया था। वे इनसे इतना प्रभावित थे कि 15 अप्रैल 1920 में नासिक गये तथा वहाँ श्री अदाजी मराठा विद्यार्थी छात्रावास का शिलान्यास किया। वहाँ पर अपने विचार व्यक्त करते हुए निम्नवर्ग को सावधान किया। जातीय

सम्मेलनों को जाति व्यवस्था को सुदृढ़ करने का माध्यम नहीं प्रत्युत जाति व्यवस्था को समाप्त करने का साधन मानना चाहिये। जातिगत दुश्मनी ने इस देश को बड़ा आघात पहुँचाया है। उच्च कुलीन तन्त्रों ने तो छत्रपति शिवा जैसे वीर पुरूष तथा अन्याय मराठा युद्ध वीरों को शूद्र माना। देश के उज्जवल भविष्य के लिये जातिप्रथा समाप्त होनी चाहिये। मैं जाति व्यवस्था का खुला विरोधी हूँ वैसे मैं उच्च जाति के लोगों का विरोधी नहीं हूँ। मैं उनके प्रति सद्भाव रखता हूँ किन्तु चूँकि उच्च लोग ही जाति–व्यवस्था के जनक है, वही उसके पोषक और संचालक है इसलिये वैचारिक मतभेद के कारण की मैं उच्च कुल का विरोधी माना जाता हूँ। मैं उच्च कुल से द्वेष नहीं रखता। द्वेष सदैव द्वेष उत्पन्न करता है और प्रेम हमेशा प्रेम का संचार करता है। उन्होंने कहा कि मैं गाँधीजी श्रद्धानन्द तथा किचलू के प्रति हार्दिक सम्मान का भाव रखता हूँ किन्तु मेरी दृष्टि में सच्चे महात्मा सम्राट अकबर थे। शाहू जी पेशवा शासन के विरूद्ध थे। उच्च कुल के हाथ यदि सत्ता आयी तो निम्न वर्ग का युगों तक उद्धार नहीं हो सकता बम्बई प्रेसीडेन्सी में लगभग 26,000 गाँव थे जिनमें 16 हजार गाँवों में कोई स्कूल नहीं था, फिर भी 'केसरी' नगर में शिक्षा प्रसार का ही सदैव प्रतिपादन करता रहता था। शाहू जी समानुपातिक जातिगत प्रतिनिधित्व की लगातार माँग कर रहे थे। तिलक ने जो वक्तव्य दिये थे उनकी शाहू जी ने कटु भर्त्सना की। माण्टेग्यू–चेम्सफोर्ड सुधार की कतिपय प्रस्तावनाओं से शाहू जी घोर असहमत थे। वे यह मानते थे कि अभी भारत की सामाजिक स्थिति ऐसी नहीं है कि शासन आंशिक रूप से ही सही भारतीयों के हाथ में सौपा जाये। बिना जातिगत प्रतिनिधित्व का सिद्धान्त लागू किये सत्ता के हस्तान्तरण का अर्थ होगा इस देश में उच्च वर्ग के हाथ सौपना जो यहाँ के निम्नवर्ग के लिये भयानक अभिशाप सिद्ध

होगा। आगे शाहू जी ने कहा जो मेरे विरूद्ध कुछ समाचार पत्रों ने यह अभिशाप लगाया है कि मैं इस देश स्वायत्व शासन नहीं चाहता और यह भी कि मैं इस देश की स्वतन्त्रता के विरूद्ध हूँ, इस प्रकार का भ्रामक समाचार एक कपोल कल्पित असत्य है। वस्तुतः मैंने कहा है कि भारत में स्वायत्त शासन से पहले शिक्षा के व्यापक सार्वजनिक प्रयास की आवश्यकता है जिससे वे अपने नागरिक अधिकारों को ठीक–ठीक समझ सकें। शाहू जी ने सूक्ति के रूप में कहा, "जहाँ तक इस समस्या का प्रश्न है कि सामाजिक सुधारों से पहलें राजनैतिक अधिकार दिये जायें इस विवाद में दाह अधिक है प्रकाश कम। राजनैतिक सुधार तथा सामाजिक सुधारों से पहले राजनैतिक सुधार तथा सामाजिक सुधार एक ही गाड़ी के दो पहियों के समान है जिनमें से एक के बिना मात्र दूसरे पहियों पर गाड़ी नहीं चल सकती। दोनो की समान आवश्यकता है जो लोग केवल राजनैतिक सुधारों की बात करते है तथा सामाजिक सुधारों को नकारते है उनकी नीचता पर सन्देह उत्पन्न होने के लिये पर्याप्त अवकाश है। अन्त में शाहू जी ने भारत के राजनेताओं से अपील की कि वे राजनैतिक आजादी का उपयोग समाज के उन दलितों एवं शोषितों के उद्धार में करें। जिनको शताब्दियों से उन्हानें गुलाम बना रखा है। सभी देशवासी समान सामाजिक धरातल पर प्रतिष्ठा के अधिकारी है। सम्मान तथा प्रतिष्ठा का आधार व्यक्ति की योग्यता होना चाहिये उसका जन्म नहीं।" भाव यह है कि कोई कितनी ही ऊँची जाति में क्यों न पैदा हुआ हो और कोई व्यक्ति कितनी ही नीची जाति में क्यों न जन्मा हो, दोनों ही योग्यता के आधार पर समान प्रतिष्ठा के अधिकारी है। कोई व्यक्ति किस जाति में जन्मा है इसे उसकी योग्यता–अयोग्ता की कसौटी नहीं माना जाना चाहिये। नासिक में शिलान्यास के दूसरे दिन शाहू जी ने निराश्रित सोमवंशीय

समाज की सभा में भी इसी प्रकार का व्याख्यान दिया। सभा के बीच में खुले मंच पर उन्होंने चमार जाति के एक व्यक्ति के हाथ से चाय लेकर पिया। उस सभा में शाहू जी ने पुनः दोहराया कि गाँधी, श्रद्धानन्द तथा विसंट के प्रति मैं आदर भाव रखता हूँ परन्तु यह लोग सीधे ईश्वर के अवतार ही क्यों न हों किन्तु मनुष्य होने के नाते इनसे भी भूल हो सकती है। सामाजिक एकता के बिना स्वतन्त्र शासन सफलतापूर्वक चल नहीं सकता। जातियों में विभक्त समाज को सर्वप्रथम जातियों को समाप्त करके स्नेह के एक सूत्र में बांधना परम आवश्यक है। मैं उच्च वर्ग का शत्रु नहीं हूँ अपने राज्य में मैंने अनेक उच्च वर्ग के अधिकारी नियुक्त कर रखे है। मैं राज्य के उच्च वर्ग के व्यक्तियों की भी देखरेख रखता हूँ बहुत उच्च वर्ग के व्यक्तियों को मैने इनामी भूमि दे रखी है। उन्होंने तिलक के उस वक्तव्य की समीक्षा करते हुए कहा कि यदि अछूत लोग विदेशी शासन से स्वराज्य दिला दे तो मैं उनके साथ बैठकर भोजन कर सकता हूँ आश्चर्य है! कि तिलक जैसा विद्वान बाह्मण सामान्य मानवीय व्यवहार के लिये स्वराज्य दिला देने की शर्त क्यों प्रस्तुत करता है।

तिलक ने अपने पत्र 'केसरी' के 16 मार्च 1920 के सम्पादकीय मे लिखा था कि जिस व्यक्ति ने अपना सम्पूर्ण जीवन देश की आजादी के लिये समर्पित किया हो वह किसी भी वर्ग अथवा जाति का हो उसे उच्च वर्ग का ही माना जाना चाहिये। शाहू जी ने कहा कि जब सभी का मत है कि जाति विहीन समाज बने तो फिर हिन्दू जातियों को समाप्त करने के बजाय यदि व्यवस्था के समाप्त होने की प्रतीक्षा करे तो यह ठीक वैसा ही होगा जैसे कोई व्यक्ति नदी पार करना चाहता है और उसके तट पर बैठ कर उसके सूख जाने की प्रतीक्षा करे। यद्यपि तिलक विद्वान थे किन्तु शाहू जी ने कदम–कदम पर तिलक के तर्कों और कुतर्कों का सटीक

उत्तर दिया। उन्होंने सामाजिक एकता को अपने जीवन का लक्ष्य बना रखा था और उसी के लिये जिये। शाहू जी की निष्ठा और सहानुभूति यदि सामाजिक एकीकरण के प्रति सर्वाधिक थी तो संगत समुचित ही थी। शाहू जी सार्वजनिक रूप से माँगों, महारों तथा चमारों के हाथ का पानी पी लेते थे, उनके साथ बैठकर खाना खा लेते थे इसके एक ही नहीं अनेक सन्दर्भ प्राप्त होते है। नासिक मे दिये गये शाहू जी के व्याख्यानों पर उच्च कुलीन तन्त्रों ने करूण क्रंदन किया तथा शूद्रो तथा अतिशूद्रों ने उनका अभिनन्दन। उनके इन व्याख्यानों की अखबार कटिंग्स इग्लैड के पार्लियामेंट के मेम्बर्स के पास भेजी गयी। दलितों और शोषितों की सुविधा के लिये व्याख्यानों के प्रस्तुतीकरण में अपनी हरकतों से बाज नहीं आया। 'टाइम्स आफ इंडिया' (बम्बई का समाचार पत्र) ने शाहू जी के उन व्याख्यानों को अत्यन्त प्रभावशाली उपयोगी तथा सार्वभौम बताया। इंग्लैण्ड के पत्रों में भी शाहूजी के नासिक में दिये गये व्याख्यानों का प्रशंसापूर्ण प्रकाशन हुआ।

भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलनों में भाग लेने वाले महाराष्ट्र के प्रायः उच्च वर्ग के व्यक्ति थे जो एक ओर ब्रिटिश सरकार से राष्ट्रीय सरकार की स्थापना की लड़ाई लड़ रहे थे दूसरी ओर देश के भीतर शूद्रो तथा अतिशूद्रों से उनको नीच और अछूत बनाये रखने का संग्राम कर रहे थे। वहाँ के उच्च वर्ग के व्यक्ति लोकतन्त्र की बातें करते थे पर अपना अलोकतन्त्र सारे देश में फैलाये थे। जब कि शाहू जी अपने राज्य में सिंचाई की समुचित व्यवस्था, सहकारी समितियों का गठन, पंचायत की स्थापना, स्थान–स्थान पर शिक्षा संस्थाये, अछूतोद्वार तथा कला और साहित्य का विस्तार लोक कल्याण के लिये कर रखा था।

शाहू जी के राजनैतिक कार्य

कठिनाइयाँ और व्यवधान व्यक्ति की लक्ष्य सिद्धि को महत्वपूर्ण बना देते है। बिना किसी प्रयास और अड़चनों के प्राप्त की गई सफलता का महत्व नहीं होता। किन्तु व्यक्ति प्रयास और परेशानी के बावजूद भी सिद्धि न प्राप्त कर सके तो उसके पुरूषार्थ और प्रयत्न का महत्व कभी–कभी सिद्धि से अधिक प्रभावशाली होता है। महाराणा प्रतापसिंह और शिवाजी एक लम्बी अवधि तक संघर्ष करते रहे किन्तु दोनों में से एक भी मुगलों को पराजित नहीं कर सका। इसका अर्थ यह नहीं है कि उन्होंने मुगलों से हार मान ली अन्त तक युद्ध करते रहे। सफलता मिलती थी, किन्तु कुछ ही समय में वह असफलता मे परिणत हो जाती थी। संघर्ष में हार–जीत का महत्व नहीं होता, संघर्ष का महत्व होता है। इतिहास ने अकबर की अपेक्षा महाराणा तथा औरंगजेब से अधिक शिवाजी गौरव गाथा गायी है। शिवाजी और महाराणा प्रताप के नामों से वीरता, धैर्य और बलिदान का बोध होता है– सत्य एवं न्याय में निष्ठा का परिचय मिलता है जबकि अकबर और औरंगजेब के नामों से साधन सम्पन्नता तथा साम्राज्यवादी लिप्सा का परिचय मिलता है। इसी वैचारिक भूमिका में छत्रपति शाहू जी द्वारा प्रस्तुत किये आदर्शो के लिये किये गये सतत् प्रयत्न पर दृष्टिपात करना न्यायसंगत होगा। सफलता, असफलता महापुरूष की रचना नहीं करते–प्रत्युत् अभीष्ट आदर्श की प्राप्ति के लिये किया गय संघर्ष ही महापुरूष का सृजन करता है।

छत्रपति शाहू जी की महती आकांक्षा अपने राज्य की व्यवस्था द्वारा सम्पूर्ण प्रजा के लिये आदर्श शासन करने की थी। इसके लिये वे अनेक विघ्नों और विपत्तियों का सामना करके भी गंतव्य की ओर बढ़ते गये।

वस्तुतः वे शासन में सुयोग्य और राजभक्त अधिकारी नियुक्त करना चाहते थे। सुयोग्य अधिकारी ब्राह्मणों में तथा यूरोपियन्स में उपलब्ध थे, किन्तु वे राज्य के प्रति और राजा के प्रति बफादार नहीं थे। इसके अतिरिक्त शाहू जी यह भी चाहते थे। शासन में सभी वर्गो और जातियों का हिस्सा रहे किसी एक जाति के लोगों का शासन प्रजा की वास्तविक भावना और आकाक्षां का प्रतिनिधित्व नहीं करता। इसी दृष्टिकोण से शाहू जी निम्न वर्ग के लोगों तथा गैर ब्राह्मण जाति के लोगों को सरकारी पदों पर नियुक्त करते गये। यह बात ब्राह्मणों और यूरोपियन्स दोनों को कष्टदायी लगी। उधर शाहू जी गैर बाह्मण मराठा स्नातकों को सरकारी पदों पर नियुक्त करने का संकल्प ले चुके थे।

दीवान तारपोरवाला ने शाहू जी को चेतावनी दी कि उनकी नीति भले ही अपने में आदर्श और जनकल्याण कारी हो किन्तु सरकारी पदों पर नियुक्तियों की यही नीति रही तो सारे बाह्मण और युरोपियन्स लोग ईर्ष्यालु और प्रतिकूल हो जायेगें। उधर उच्च शिक्षित लोगों में शाहू जी के सम्बन्ध में यह दुष्प्रसिद्धि फैल रही थी कि शाहू जी अनुभव रहित तथा अक्षम लोगों को सरकारी पदों पर भर्ती कर रहें हैं। किन्तु छत्रपति शाहू जी को पक्का विश्वास था कि विश्वासपात्र अधिकारी अनुभव न करने पर भी अविश्वसनीय अनुभव सम्पन्न अधिकारी से कही श्रेष्ठ है इसी दृढ़ता और विश्वास से उन्होंने आर0, बी0, सेब्निस को 24 जून 1896 को मुख्य राजस्व अधिकारी के पद पर प्रोन्नति दे दी। छत्रपति शाहू जी ने अनुभव किया था कि सभी विचारधारा के लोगों को संतुष्ट करना सम्भव नहीं अतः उन्होंने स्पष्ट कहा था,"कुछ लोगों की इच्छा के विरूद्ध आचरण करने के लिये मुझे अपने हिस्से में पड़ने वाले कलंक को भोगने के लिये

सदैव तत्पर रहना चाहिये। जैसी वस्तु स्थिति है उसमें सभी यूरोपियन्स लोगों को संतुष्ट रखना लगभग असम्भव है।"

सार्वजनिक निर्माण विभाग के मुख्य अधिकारी आर0, जे0, शैनन जब हुजूर कार्यालय के एक अधिकारी ने किसी अनुमानित व्यय के सम्बन्ध में पूछताछ की तो शैनन महाराज के क्रोध की सीमा न रही। वे सीधे छत्रपति शाहू जी के पास शिकायत करने गये। इस पर शाहू जी ने कहा कि आपके दिये गये एस्टीमेट से मैं स्वयं असन्तुष्ट हूँ तथा इस सम्बन्ध में मैंने ही स्पष्टीकरण माँगा था। शाहू जी की लोकतान्त्रिक विपत्तियों से भ्रष्ट अधिकारी और कर्मचारी करवट बदलने लगे, त्यागपत्र देने लगे विरोध करने लगे। श्रीमती साइकीस जो राज्य की नर्स थी वे असन्तुष्ट होकर 1 जनवरी 1896 में त्यागपत्र दे दिया। कुमारी लिटिल जी महिला शिक्षा विभाग में अधीक्षिका के पद पर कार्य कर रही थी वे पहले ही त्यागपत्र दे चुकी थी। उनके स्थान पर डॉ0 कृष्णा दादा जी केलोकर की पत्नी राधाबाई कृष्णाजी केलोकर को 1 सितम्बर 1895 को महिला अधिकारी के पद पर नियुक्त किया गया। शैनन नाराज होकर छुट्टी पर चले गये और सितम्बर 1896 में वापस आये। किन्तु कुछ घरेलू अड़चनों के कारण शैनन को उसी महीने के अन्त में अपने पद से त्यागपत्र दे देना पड़ा। विचारे को उसी पद पर नियुक्त किया गया जिस पर कार्यवाहक पॉलिटिकल एजेन्ट कर्नल रे की अनुकूल प्रतिक्रिया नहीं हुई।

कुछ सामाचार पत्रों ने भी इस सन्दर्भ में छत्रपति शाहू जी की आलोचना प्रकाशित की।

छत्रपति शाहू अश्वारोहण तथा निशानेबाजी में अपने समय में अद्वितीय थे। एक बार उन्होंने एक चीते पर गोली चलाई किन्तु उस गोली

से चीता बच गया और महाराज पर खीजकर झपटने का प्रयास किया। वे पास के एक छोटे से पेड़ को उछलकर लांघ गये ओर पुनः चीते पर निशाना साधा। इस बार की गोली से चीता वही ढेर हो गया। शाहू जी की निर्भीकता, निशानेबाजी और बहादुरी की पूरे राज्य में प्रशंसा हुई। भावपुर के भावसिंह ने पत्र द्वारा महाराज को अपनी इस बहादुरी पर बधाई भेजी। सन् 1896 के अप्रैल महीने में शाहू जी ने सह्यद्रि के जंगल में जाकर वहाँ के लोगों की दशा स्वयं देखनी चाही और जानना चाहा कि जंगल में रहने वाले सम्बंधी कानून से सन्तुष्ट क्यों नहीं है। कर्नल रे को इस सम्बंध में एक पत्र लिखा कि सारी भूमि ही महाजनों के हाथों में हैं और रैयत कर्ज के बोझ से तबाह है। मैं इस दिशा में विचार कर रहा हूँ कि उनकी सहायता के लिये कौन से कदम उठाये जा सकते है। छत्रपति की उत्कट इच्छा थी कि शिक्षा का प्रसार छोटी जातियों एवं वर्गों के बीच किया जाये जिससे उनको अपने अधिकारों का सही ज्ञान हो सके। उन्होंने प्राइमरी स्कूलों को देखा। वे कर्नाटक क्षेत्र से मिले हुए कटकोल गाँव गये। वहाँ अभी तक नहीं तय हो पाया था कि शिक्षा का माध्यम मराठी भाषा रखी जाये अथवा कन्नड़। शाहू जी ने इस समस्या का सुन्दर हल दिया। उन्होंने निर्देश दिया कि मराठी चूँकि राज भाषा है अतः पाठ्यक्रम के पढ़ने का माध्यम मराठी को रखा जाये तथा व्यावहारिक कामकाज के लिये कन्नड़ सिखाई जाये।[1] शाहू जी लगातार दौरा करते रहे। और उन गाँवों में भी गये जहाँ पर केवल ऊँट और घोड़े पर चढ़कर जाया जा सकता था। इस बार उन्होंने साथ में राजकीय परिवार (नौकर–चाकर) अधिक नहीं लिया। वहाँ की स्थिति देखने के पश्चात् शाहू जी ने ब्रिटिश सरकार को उच्च न्यायालय के अधिकार कोल्हापुर राज्य को देने में बड़ी

---

[1] छत्रपति शाहू– भावना प्रकाशन

सतर्कता और सावधानी बरत रही थी। इसी अवधि में 1896 में कोल्हापुर के कुछ क्षेत्रों में अकाल पड़ गया। महाराज अपने साथ अधिकारी और इन्जीनियरों को लेकर उन क्षेत्रों में स्वयं गये। अकाल से पीड़ित लोगों की सहायता पर विचार किया। निर्धन जनों के भवन निर्माण के कार्य को सरकारी परियोजना में सम्मिलित कर लिया गया।

कर्नल जे0 डब्लू0 रे को 18 जनवरी 1897 में राज्य का पॉलिटिकल एजेन्ट नियुक्त किया गया। कर्नल रे अभी युवक और अनुभवहीन थे। छत्रपति शाहू से उनकी आपसदारी थी। किन्तु रे की कार्यपद्धति से विरोध बढ़ने लगा। बैरिस्टर ने इसके सम्बंध में दरबार से शिकायत की। प्रिंसपल कैंडी से भी रे का मतभेद हो गया। कैंडी की हरकतें सीमा पार कर गयी। इस पर छत्रपति शाहू ने गवर्नर की परिषद के एक सदस्य नूजेंट को पत्र प्रेरित किया कि अच्छा हो कि प्रिंसपल कैंडी को कॉलेज से हटा लिया जाये, जिसके लिये वे कैंडी को 6 महीने का वेतन नियमानुसार दे देंगे यदि गवर्नर उन्हें तुरन्त हटा दें। कैंडी के दरबार के खिलाफ शिकायतें गवर्नर के पास भेजवाई किन्तु अन्ततोगत्वा कैंडी को न केवल राजाराम कॉलेज प्रस्तुत कोल्हापुर भी छोड़ना पड़ा। वे बरार में जाकर रहने लगे। 1896 में सूखे और अकाल के कारण अकस्मात् बम्बई में प्लेग की महामारी शुरू हो गयी। वह महामारी, कराँची, भिवन्डी और पूना तक फैल गयी। महारानी विक्टोरिंया के सिंहासनारोहण की 60 वी वर्षगांठ 1897 की 21 और 22 जून को मनायी गई। ब्रिटिश भारत यद्यपि सूखे से ग्रस्त था किन्तु महारानी विक्टोरिया इस वर्षगांठ के अवसर पर 'भारत की सम्राज्ञी' के राजपद से विभूषित की गयी। इधर 21 जून को ही छत्रपति ने दरबार में हीरक जयन्ती मनायी जिसमें सभी ताल्लुकेदार सरदार तथा सामन्त उपस्थित हुए। महारानी विक्टोरिया को बधाई संदेश भेजा गया। प्रातः 21

तोपों तथा 101 तोपों की सलामी और शाम को 60 तोपों की सलामी दी गयी। 34 भले कैदियों को उस दिन मुक्त किया गया तथा 76 कैदियों की सजा कम कर दी गयी। महारानी विक्टोरिया के शासन काल की उपलब्धियों तथा जन–हितकारी योजनाओं की प्रशंसा में बम्बई गर्वनर के माध्यम से शाहू जी ने महारानी विक्टोरिया से अपने पिता के समय के अच्छे सम्बंध पुनः स्थापित कर लिये। प्रत्युत्तर में ब्रिटिश सरकार ने महारानी की ओर से शाहू जी को धन्यवाद ज्ञापित किया।

महारानी विक्टोरिया को भेजे गये इस प्रकार के प्रशंसा–पत्र और बधाइयाँ यद्यपि राजा की अधीनता को पुरस्सर करते थे, किन्तु ऐसा केवल छत्रपति शाहू जी ने नहीं किया। सभी राजे ऐसा करने को विवशता का अनुभव करते थे। यहाँ तक कि महात्मा गाँधी ने महारानी विक्टोरिया को निजी बधाई पत्र डरबन से भेजा था जिसमें उन्होंने महारानी के शासन को गौरवपूर्ण काल कहकर उनकी प्रशंसा लिख भेजी थी। कोल्हापुर राज्य में विक्टोरिया शासन के अभिनन्दन हेतु हीरक जयन्ती समारोह आयोजित हुआ तथा 22 जून 1897 को रे के द्वारा विक्टोरिया हीरक जयन्ती कुष्ठ चिकित्सालय खोला गया जिसका शिलान्यास स्वयं छत्रपति शाहू ने किया।

विक्टोरिया शासन के प्रति सदभाव व्यंजक कार्यक्रमों का सिलसिला चल रहा था और इसी बीच छत्रपति शाहू जी के जीवन की पुण्य घड़ी उपस्थित हुई। 31 जुलाई 1897 को शाहू जी के पुत्र रत्न लाभ हुआ। सम्पूर्ण कोल्हापुर राज्य में उत्सवों का ताँता बंध गया और महारानी लक्ष्मीबाई और शाहू जी को बेशुमार बधाइयाँ। जन्म के 16 दिन पश्चात् यह पहला अवसर था जबकि राज परिवार में उत्तराधिकार की सीधी परम्परा में पुत्र का जन्म हुआ। वस्तुतः कोल्हापुर के राजवंश के लिये यह अत्यन्त महत्वपूर्ण ऐतिहासिक क्षण था। पुत्र रत्न लाभ की खुशी में छत्रपति

शाहू ने 12 कैदियों को मुक्त कर दिया तथा निर्धनों और गरजमन्द लोगों में उपहार तथा भोजन आदि का वितरण किया। एक बार कोल्हापुर के मुसलमानों ने शिकायत की कि हिन्दुओं ने उसकी मस्जिद पर अवैध कब्जा लिया है। छत्रपति शाहू ने तुरन्त इसकी जाँच करायी तथा विवाद को कौशल और धैर्य से सुलझा दिया छत्रपति ने कई बार जनता के विवादों को शान्तिपूर्वक निपटाया इसी कारण उनकी लोकप्रियता तथा आर्दश शासन हर तरह से उनके पूर्वज छत्रपति शिवाजी की धार्मिक सहिष्णुता का परम्परागत उदाहरण बन गये थे। सरकारी पदों पर अधिकारियों की नियुक्ति को लेकर राज्य के दीवान तारपोरवाल तथा दरबार के बीच कतिपय नियुक्तियों को लेकर गम्भीर मतभेद उत्पन्न हो गया। फलस्वरूप तारपोरवाल 5 सितम्बर 1898 को अपनी सेवा अवधि से पूर्व एक वर्ष के अवकाश पर चले गये। सैब्निस को दीवान नियुक्त किया गया। नूजेंट महोदय जो छत्रपति और रे दोनों के बीच सम्बन्ध को सामान्य बनाने की चेष्टा कर रहे थे। परन्तु टुटे से फिर न जुरै–गुरै गाँठि परिजाय जैसी उक्ति ही चारितार्थ हुई।

छत्रपति शाहू जी चाहते थे कि उनके राज्य में एक आर्दश शासन की स्थापना हो किन्तु अच्छे कार्यो में विध्नों की संख्या बढ़ ही जाती है। फरवरी 1899 में छत्रपति शाहू जी अपने पुत्र राजाराम को साथ में लेकर कागल गये, जहाँ जनता द्वारा उनका भव्य स्वागत किया गया। छत्रपति ने वहाँ जाकर कोल्हापुर और शाहूपुर के बारे में जानकारी ली इसी बीच कोलहापुर अवर्पण तथा प्लेग का शिकार हो गया। छत्रपति ने भास्कर राव जाधव को 4 सितम्बर 1899 को सहायक प्लेग कमिश्नर के पद पर नियुक्त किया। छत्रपति एक सुशिक्षित नरेश होने के नाते वैज्ञानिक तथा आधुनिक वस्तुओं का उपयोग सदैव करते थे। उन्होंने पन्हाला के अपने

राजमहल तथा कोल्हापुर के राजमहल और रेजीडेन्सी को टेलीफोन से जुड़वा दिया। छत्रपति ने प्लेग और सूखे के लिये कई कदम उठाये। जिन पशुओं को उनके स्वामी चारा नहीं दे सकते थे उनके लिये राज्य की ओर से चारो ओर घास के वितरण की व्यवस्था करायी। किसानों से लगान वसूली स्थगित कर दी। छत्रपति शाहू ने 25 नवम्बर 1899 को पन्हाला से रे को एक पत्र द्वारा सूचित किया, "मुझे इसका अत्यन्त खेद है कि मैं पहले की तरह इन दिनों कोटितीर्थ के प्लेग अस्पताल तथा शिविर को प्रतिदिन नहीं देख सकता। यद्यपि मैं कोल्हापुर प्रायः जाता रहता हूँ तथा नगर में घूम–घूमकर आवश्यक निर्देश देता रहता हूँ यह चिन्ता का विषय है कि पुराना और नया दोनो ही राजमहल प्लेग से संक्रमित हो रहे है। यहाँ मरे हुए चूहे देखने को मिलते है, उनको संक्रमण से बचाने के उपाय किये जा रहे है। मैं जल्दी ही अभाव व अकालग्रस्त क्षेत्रों का दौरा करने जा रहा हूँ क्योंकि इस समय वहाँ के लोग अब तक अपनी फसल को इकट्ठा करने में लगे है। तथा खेती के लिये मजदूरों की अब भी वहाँ आवश्यकता है।"

सन् 1899 में लिखे गये एक पत्र में शाहू जी ने लिखा,"वस्तुतः मैं पन्हाला में केवल सोता भर हूँ, अन्यथा पूरे दिन वहाँ पर स्थित अपने कार्यालय में काम करता हूँ। कुछ ही दिनों पहले मैने 40 मील घोड़े पर चढ़कर दौरा किया तथा खाद्यन्न की उपज की स्थिति को स्वयं देखा। मैनें केवल एक घोड़े का प्रयोग किया तथा तीन मील प्रति घन्टे ही चला क्योंकि मुझे वहाँ की वास्तविक स्थिति का पता लगाना था– इससे अवश्य ही मैं बहुत थक गया"।

सामाजिक क्रान्ति के सूत्रधार – भावना प्रकाशन कानपुर

6 जून 1898 को प्रकाशित किये गये समाचार में 'समर्थ' के सम्पादक प्रोफेसर विजयपुरकर ने अपने पत्र में महाराज को बधाई दी तथा उनके इस आदेश की भूरि–भूरि प्रशंसा की कि जो लोग अपने जानवरों को चारा आदि नहीं दे सकते वे उनको सरकारी घाटों में छोड़ जायें और जब जब उनको पुनः सुविधा हो तो वे अपने जानवर वापस ले जाये।

छत्रपति शाहू और रे के बीच दिनों दिन तनाव बढ़ता गया। मिस्टर रे को बेनाम पत्र मिला जिसमें लिखा था कि डी0 सी0 फर्नेडीज ने रे को भोजन के साथ विष देने का षडयंत्र रचा है। गवर्नर की कौंसिल के एक सदस्य मि0 जेम्स के सम्मान में नये राजमहल के दरबार हाल में दिये जाने वाले भोज में यह क्रिया सम्पन्न होगी। इस भोज की व्यवस्था 5 अगस्त 1899 को मि0 रे और उनकी पत्नी द्वारा की जानी थी। इसमें पूर्व सन् 1898 ई0 से प्रारम्भ में एक बार रे महोदय ने फर्नेडीज का वकालत का प्रमाणपत्र रद्द कर दिया था और दरबार पर भी यह दबाव डाला कि फर्नेडीज को दरबारी अदालत में वकालत करने से वंचित किया जाये। इस पत्र की जानकारी जब छत्रपति शाहू जी को हुई तो उन्होंने आदेश दिया कि या तो पूरे कार्यक्रम से भोज को निरस्त कर दिया जाये या फिर हाल में पुलिस तैनात की जाये जो भोज की व्यवस्था पर कठोर निगरानी रखे। रे ने शाहू जी द्वारा प्रस्तुत किये गये वो विकल्पों में एक भी स्वीकार नहीं। किया। उन्होंने अपने पुराने घरेलू नौकर फिलिप जो स्टोर क़ीपर के पद पर प्रोन्नति पा गया था, को भोज में अपने लिये खाना अलग बनाकर देने को कह दिया। भोज तो बिना किसी दुर्घटना के समाप्त हो गया किन्तु जो डबलरोटी के रोल रे को दिये जाने थे उनकी परीक्षा करने पर उसके एक टुकड़े में काँच का एक टुकड़ा तथा कुछ बारीक कण निकले। छत्रपति शाहू जी ने इस मामले की जाँच करानी चाही किन्तु रे ने यह कहकर मना

किया कि इस मामले को यही समाप्त किया जाये। जाँच कराने से तिल का ताड़ बनेगा तथा दारबार पर कलंक लगेगा किन्तु शाहू जी इससे संतुष्ट नहीं थे। उन्होंने मि0 रे को एक पत्र मे लिखा, ''यह आपकी महती कृपा है। आपने दरबार को कलंक से बचाने के लिये इसकी जाँच न करने का मनोभाव प्रकट किया है किन्तु मैं समझता हूँ कि दरबार में लगने वाले लांक्षन को बरदाश्त कर लेना चाहिये। परन्तु जाँच अवश्य करायी जाये ताकि भविष्य में इस प्रकार का कुचक्र न रचा जा सके। ऐसा न करने पर दुष्टों का साहस बढ़ जायेगा और कभी भी कोई दुर्घटना हो सकती है। अतः यदि आपकी अनुमति हो तो इस मामले को पुलिस के हवाले कर दिया जाये।'' इस पर रे ने जब तक अपने मित्रों से परामर्श लिया तब तक छत्रपति शाहू जी ने बम्बई सरकार को एक सुयोग्य सरकार एक सुयोग्य जाँच अधिकारी तथा आवश्यकता पड़ने पर एक सत्र–न्यायाधीश की नियुक्ति के लिये पत्र लिख दिया। उसी समय रे की स्वीकृत से शिरगाँवकर जो मुख्य राजस्व अधिकारी थे, को जाँच अधिकारी नियुक्त कर दिया गया। वे चाहते थे कि सर्वप्रथम पत्र लिखने वाले सज्जन को गिरफ्तार किया जाय। किन्तु न तो जाँच अधिकारी ने और न दीवान ने ही फर्नेडीज की गिरफ्तारी की अनुमति दी। इसी बीच बम्बई सरकार द्वारा नियुक्त किये गये पुलिस इंस्पेक्टर मि0 गैनन भी आ गये। रे ने पुलिस इंस्पेक्टर से भी फर्नेडीज को गिरफ्तार करने का आग्रह किया, किन्तु सुदृढ़ साक्ष्य के अभाव में उसने भी इंकार कर दिया।

मि0 रे इस पर उत्तेजित हो गये और दरबार को लिखा कि फर्नेडीज को गिरफ्तार न किये जाने से मेरे मन में यह संदेह उत्पन्न हो गया है कि हो न हो इस दुष्कृत्य में दरबार का भी हाथ है। रे ने दरबार के विरूद्ध आयोग बैठाने की धमकी दी और याद दिलाया कि ठीक इसी

प्रकार की घटना का परिणाम महाराज मल्हारराव गायकवाड़ को गद्दी खोकर भोगना पड़ा था। रे ने दरबार पर पुनः प्रभाव डाला कि बिना कानूनी जटिलता का ध्यान दिये फर्नेंडीज को गिरफ्तार किया जाये। दबाव प्रभावी हुआ फर्नेंडीज गिरफ्तार कर लिया गया। रे के ही जोर देने पर एक दो अन्य अधिकारियों को सेवाओं से दिखावें में निलम्बित कर दिया गया। कोल्हापुर राज्य में इस मामलें को लेकर अभी खलबली समाप्त नहीं हुई थी कि रे को एक दूसरा पत्र मिला कि कुछ मराठा अधिकारी सरदार तथा बापू साब घटगें के सम्मिलित प्रयत्न से रे की हत्या के लिये बात चला रहे है।

छत्रपति शाहू द्वारा दूसरी बार अनुरोध किये जाने पर जाँच के लिये एक प्रसिद्ध कुशल जाँच अधिकारी के रूप में मि0 ब्रेविन भेजे गये। रे जज की नियुक्ति के विरोध में यह कह रहे थे कि महाराजा शाहू को क्या अपने राज्य के जजों पर विश्वास नहीं है, परन्तु छत्रपति ने किसी भी दशा में रे की बात नहीं मानी। रे चाहते थे कि इसके पहले की ब्रेविन मामले को अपने हाथ में लें–मामले को रफा–दफा कर दिया जाये किन्तु छत्रपति ने ब्रेविन के द्वारा मामले को हाथ में लिये जाने तक केस को स्थगित कर दिया। ब्रेवन ने 6 अक्टूबर 1899 से मामले की जाँच प्रारम्भ की। इस संसार में यह देखा गया है कि सत्य पर असत्य बहुत दिन तक हावी रहता है किन्तु नियति की चुनौती स्वीकार करके तथा परिस्थितियों को चुनौती देकर सत्य अन्ततोगत्वा विजयी होता है। असत्य का चमत्कार पहले हर एक व्यक्ति के लिये कभी लुभावना और कभी डरावना प्रतीत होता है। परन्तु सत्य के प्रकट होते ही असत्य अनस्तित्व में विलीन हो जाता है। देखिये रे और छत्रपति शाहू के इस औपन्यासिक विवाद की इति कहाँ और कैसी होती है अपनी स्थापित प्रतिष्ठा एवं गौरव के अनुरूप

भी ब्रेविन ने जाँच का कार्य स्वतन्त्र रूप से प्रारम्भ किया। उन्होंने रे की इच्छा और अपेक्षा का किंचित ध्यान नहीं रखा। मामले की सुनवाई करने पर ब्रेविन ने स्पष्ट करते हुए अपना निर्णय दिया कि उपयुक्त साक्ष्य के अभाव में मामला किसी प्रकार आगे नहीं बढ़ाया जा सकता। केस उन्होंने वापस ले लिया तथा फर्नेडीज को मुक्त कर दिया गया। सन् 1899 के नवम्बर मास के द्वितीय सप्ताह में ब्रेविन ने मामले के सम्बन्ध में अपनी विस्तृत रिपोर्ट बम्बई सरकार को भेज दी। रिपोर्ट में स्पष्ट रूप से प्रस्तुत किया गया कि रे की हत्या के लिये कोई षडयन्त्र नहीं किया गया। प्रत्युत फर्नेडीज को कोल्हापुर से हटाने के लिये यह कुचक्र रचा गया जिसमें फिलिप नामक स्टोर कीपर का हाथ था। स्टोर कीपर फिलिप को उस स्थान से हटा दिया गया छत्रपति शाहू ने बम्बई जाकर सरकार से रे की धूर्तता और प्रपंची स्वभाव की शिकायत की जिस पर सरकार ने अनुकूल प्रतिक्रिया व्यक्त की। 9 मार्च 1900 ई0 को रे सालाना छुट्टी पर अपने देश चले गये। जाते–जाते रे ने छत्रपति को पत्र लिखा जिसमें उन्होंने छद्म सद्भावना तथा स्नेहभाव छत्रपति के प्रति प्रकट किया तथा उनके सौजन्य के लिये धन्यवाद दिया। रे के जाने के बाद कोल्हापुर राज्य मे पॉलिटिकल एजेन्ट की तानाशाही स्वच्छन्द आचरण का अन्त होगा जो पिछली तीन पीढ़ियों से राज्य को परेशान किये था। कहना पड़ेगा कि छत्रपति शाहू का साहस बुद्धि तथा दृढ़ता ने रे की प्रपंचपूर्ण नीतियों को ध्वस्त कर दिया।

लगभग 8 महीने पश्चात् रे अपना अल्पकालिक अवकाश समाप्त करके जब पुनः वापस आये तो उनका स्थानान्तरण 22 नवम्बर 1900 ई0 को सामन्तवाड़ी के लिये कर दिया गया। उधर जहर देने वाले कांड का सम्पूर्ण विवरण बम्बई के हाउस आफ इंडिया पत्र में प्रकाशित कराया गया

जिसके लिये कोल्हापुर राज्य की ओर से रू0 89/– बम्बई सरकार को भेजे गये। कुछ दिनों वे बाद रे महोदय ने छत्रपति शाहू जी के सामने घुटने टेक दिये और प्रार्थना की कि सरकार कृपा कर उनकी पेंशन के लिये एक वर्ष की सेवा को जोड़ लें। यहाँ एक बात विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है कि उस जहर वाली अघटित घटना में शाहू छत्रपति के विदेशी मित्र कर्नल हैराल्ड उनके साथ थे, परन्तु कोल्हापुर के ब्रह्मणों ने छत्रपति शाहू का विरोध किया। डी0 सी0 फर्नेंडीज ने कोल्हापुर दरबार पर निरपराध जेल भेजने के लिये मानहानि केस दायर किया। इसके लिये उन्होंने बम्बई सरकार की भी अपनी प्रार्थना प्रेषित की। किन्तु इसके बदले में बम्बई सरकार ने फर्नेंडीज को सरकारी सेवा में नियुक्ति प्रदान कर दी। रे के स्थान पर ए0 एम0 टी0 जैक्सन कोल्हापुर के पॉलिटिकल ऐजेंन्ट नियुक्त किये गये। किन्तु केवल जून तक कार्य करने के पश्चात् उनके स्थान पर सी0 डब्लू0 एस0 सीली को स्थान दिया गया।

महापुरूषों के जीवन में संघर्ष न तो स्वयं दम लेते है और न उस महापुरूष को दम लेने देते है। सतही तौर पर हम सामान्य व्यक्ति सोच सकते है कि क्या आवश्यकता है कि कोई ऐसे कार्य करें जिससे संघर्ष उत्पन्न हो–क्यों न शान्तिपूर्ण सुखी जीवन बिताया जाये? परन्तु नियति एक ओर महापुरूष को जन–हितकारी कार्यों के लिये छिपे–छिपे प्रबल प्रेरणा देती रहती है दूसरी ओर इतिहास ऐसे महापुरूष के संघर्ष प्रसवी कार्य कलाप को अक्षरबद्ध करने की प्रतीक्षा करता रहता है। इस प्रकार अदृष्ट के अभीष्ट और इतिहास की आवश्यकता की पूर्ति के लिये महान के लिये महान कृत्यों मे प्रवृत्व होने के लिये विवश हो जाता है तथा मार्ग में पड़ने वाले अवरोधक संघर्षो के उद्वेलित नदी–नालों को लांघता चलता

है। छत्रपति शाहू नियति एवं इतिहास के ऐसे ही जागृत मानस महापुरूष थे।

जहर देने की घटना का जहर अब भी शान्त नहीं हुआ था। रे चुप हो गये किन्तु कोल्हापुर का 'शिवाजी क्लब' इस घटना को अब भी उबारने में लगा था। शाहू जी के पूर्वज शिवाजी के नाम का क्लब उन्हीं के वंशावतंस को पीड़ित करने को उद्यत हो जायें यह एक आश्चर्यजनक प्रसंग है। हनुमंतराव कुलकर्णी उर्फ मर्की भावेकर जी कोल्हापुर निवासी थे, उन्होंने शिवाजी क्लब की स्थापना 1893 में की थी। इस क्लब में बाल गोबध विरोधी संघ के सदस्य भी सम्मिलित थे जिसकी स्थापना हनुमंतराव ने की थी तथा बालमित्र समाज की स्थापना दत्तोबा लेले ने की थी जो राजाराम हाईस्कूल के अध्यापक थे। हनुमंतराव संचालित आतंकवादी आन्दोलन से सम्बद्ध हो गये थे। ये दोनो ही व्यक्ति पूना के चापेकर क्लब के सदस्य थे। शिवाजी क्लब के प्रायः सभी सदस्य प्रशिक्षित तरूण थे। यह युवक तलवार और कृपाण के प्रचालन में दक्ष थे। तलवार और कृपाण के प्रशिक्षण को 'दण्डपट्ट' के नाम से जाना था, जिसका अभ्यास पंच गंगा नदी तट पर कराया जाता था। शिवाजी क्लब की समस्त गतिविधियों की सूचना गुप्त रूप से बी० जी० तिलक को कुलकर्णी द्वारा पहुँचा दी जाती थी।

औरंगाबाद जिले के भीर नामक स्थान में 14 अप्रैल 1889 को एक विद्रोह हुआ जिसकी आर्थिक व्यवस्था की जिम्मेदारी शिवाजी क्लब के सदस्यों पर थी, किन्तु थोड़े संघर्ष के पश्चात् ही वह विद्रोह विफल हो गया। इस विद्रोह के सभी नेता बेलापुर स्वामी मठ के नेता माने जाते थे। भाऊ साहब लिमये इसका नेतृत्व कर रहे थे जो कभी बाबा, कभी आबा साहब रामचन्द्र और कभी राव साहब के विभिन्न नामों से काम करते थे।

उनकी धारणा थी कि यदि ब्राह्मण राज्य की पुनः स्थापना हो जाये तो पूरे हिन्दू समाज को सुखी और समृद्ध बनाया जा सकता है। इस संदर्भ में इतना और जान लेना चाहिये कि इन सभी घटनाओं की जानकारी तिलक को रहती होगी, पर यह कल्पना करना कि वे उस विद्रोह अथवा आन्दोलन के पुराकर्ता थे– सर्वथा निराधार है। यों तो दुरारूढ़ अर्थ लगाने वाले इस विद्रोह से छत्रपति शाहू जी का नाम भी जोड़ देते है। किन्तु इतिहास तथ्यों का संग्रह होता है – गल्प का नहीं। प्रारम्भ में शिवाजी क्लब के कार्यक्रमों में शाहू जी भले ही रूचि रखते रहें हो वह भी इसलिये कि उनके महानपूर्वज के नाम से क्लब चल रहा था किन्तु परिवर्ती गतिविधियों को देखकर उन्होंने उसके प्रति तटस्थता और असन्धि अख्तियार कर ली। शिवाजी क्लब के सदस्य अस्त्र–शस्त्र इकट्ठा करने लगे। फलस्वरूप कई सदस्यों को जेल जाना पड़ा। कोल्हापुर के प्लेग के दिनों में 1899 में शिवाजी क्लब के कुछ सदस्यों ने एक मकान में सेंध लगाई जिसका भंडाफोड़ होने पर बन्दी बनाये गये तथा दण्डित हुए। अनेक प्रकार के लांछनों और प्रवादो का छत्रपति शाहू जी ने डटकर मुकाबला किया। 24 अक्टूबर 1900 को महारानी विक्टोरिया ने शाहू जी के शासन की सफलताओं के उपलक्ष्य में उनको विधिवत् 'महाराजा' की उपाधि से विभूषित किया। इस समय तक जो छत्रपति शाहू जी अपनी जनता के बीच महाराजा के रूप में प्रतिष्ठित थे वे अब ब्रिटिश शासन के अभिलेखों में भी 'महाराजा' की उपाधि से अभिहित हुए। निःसंदेह छत्रपति शाहू जी को जो मान्यता सम्मान और प्रतिष्ठा मिली वह उनके पूर्वज शासकों में किसी को नहीं मिली थी। दुर्भिक्ष और प्लेग ने राज्य के कुछ क्षेत्रों को तबाह कर रखा था शाहू जी महाराज पीड़ित जनता की सुविधा के लिये तथा राज्याधिकारियों से ताजा सम्पर्क बनाये रखने के लिये

पन्हाला में ठहर गये। वहाँ उन्होंने निर्धनों के लिये मकानों, अन्न वितरण भंडारों, औषधियों के वितरण के लिये शिविरों की अविलम्ब व्यवस्था की। तीर्थ यात्राओं पर प्रतिबन्ध लगा दिया। प्लेग और अकाल क्षेत्रों में प्रतिदिन की जानकारी के लिये शिविर स्थापित किये। प्लेग की रिपोर्ट देने वालों को पुरस्कार बँटवाए। इनकी इस नीति एवं पुरूषार्थ से प्रसन्न होकर पॉलिटिकल ऐजेंट ए0 एम0 टी0 जैक्सन ने शाहू जी को अप्रैल 1900 ई0 में एक पत्र में लिखा,''अकाल और प्लेग में जिस व्यक्तिगत सावधानी और पुरूषार्थ से आपने काम लिया है, उनके लिये आप मुझे बधाई देने की अनुमति दें, आपके प्रयास सफलतावादी है।'' छत्रपति शाहू महाराज की शासकीय कुशलता और सफलता का अनुमान मात्र हमारे हृदय में उनके प्रति समादर एवं श्रद्धा का भाव उत्पन्न कर देता है। फिर उनके समयुगीन जन तो यह सब प्रत्यक्ष देखकर निश्चय ही आनन्द से अभिभूत होकर महाराज को अपने श्रद्धा संबलित भाव अर्पित करने के लिये विवश हो जाते होगे। सत्कर्म और दुष्कर्म दोनों ही मनुष्य के इसी जीवन में अपना परिणाम प्रस्तुत कर देते है। महाराज को 15 अप्रैल 1899 में दूसरे पुत्र रत्न का लाभ हुआ। जिसका नाम शिवा जी रखा गया। इस प्रकार दो पुत्र एक पुत्री के पिता होने का गौरव और सुख महाराज को प्राप्त हुआ।

छत्रपति शाहू महाराज की प्रतिभा, कुशाग्रता और शक्ति वैभव का चित्रण करते हुए समाचार पत्र में लिखा था,''ऊँचा कद, हृदय–पुष्ट शरीर युवादर्शी छत्रपति शाहू का व्यक्तित्व अत्यन्त आकर्षक और सुन्दर प्रतीत होता था। किसी भी अपरिचित व्यक्ति के समक्ष महाराज की अपरिहार्य लजीली मुद्रा प्रथम दृष्टि मे उनके गुणों के सही मूल्यांकन में बाधक थी।'' पत्र में उनको सीधा–सादा तीव्र बुद्धि कोमलचित्त वाले व्यक्ति के रूप में चित्रित करते हुए लिखा था कि महाराजा दूसरों की भावनाओं के प्रति

आदर भाव रखने के कारण सम्पर्क में आने वाले प्रत्येक व्यक्ति के लिये आदरणीय बन जाते थे। उस पत्र ने प्रशंसा का उपसंहार करते हुए लिखा था,"उदारमना स्वामी अपने सेवकों का प्रिय बन जाता है। परन्तु शाहू जी महाराज केवल उदार हृदय नहीं थे। वे अपने निकटवर्ती व्यक्तियों की समस्याओं में व्यक्तिगत रूचि लेते थे। यही कारण था कि कोल्हापुर के सभी राज्य कर्मचारी महाराज के प्रति गहरा स्नेह भाव रखते थे।" छत्रपति शाहू जी अपने सद्व्यवहार से अपनी जनता के हृदय में शासन के प्रति रूचि उत्पन्न कर देते थे। अभाव से पीड़ित ब्राह्मणो, विधवाओं, छात्रों को जातीय भेदभाव से मुक्त होकर वृत्तियाँ देने मात्र से ही नहीं बल्कि राज्य के निर्धन जनों के संरक्षक और हितैषी होने के कारण छत्रपति शाहू जी अत्यन्त लोकप्रिय हो गये थे।

छत्रपति का वह भव्य आकर्षक व्यक्तित्व, कृतज्ञता का भाव, निजी जीवन की सादगी, पारिवारिक आनन्द, सामान्य जनों के प्रति हितैषरत तथा अनुशासनपूर्ण शासन, सबने मिलकर जनता के हृदय को शाहू जी के प्रति कृतज्ञता और विनम्रता के भाव से आव्याचित कर दिया था। इस समग्र विभव और ऐश्वर्य के लिये छत्रपति की जन्मजात अर्न्तदृष्टि तथा मेधा को श्रेय था। सचमुच महात्मा ज्योतिराव फूले ने जिस आदर्श शासक की कल्पना की थी तथा इसके लिये शासक ने जिस प्रतिभा, विवेक दृढ़ता, कर्मठता तथा चारित्रय की अपेक्षा का अनुभव किया था वे सभी विशेषतायें राजर्षि छत्रपति शाहू जी महाराज के व्यक्तित्व में एकीभूत हो गयी थी। मराठा कुर्मी वंश तथा शिवाजी के राजवंश में जन्म लेने के कारण ही छत्रपति के राजवंश में जन्म लेने के कारण की छत्रपति शाहू जी में कर्मशीलता और निर्भीकता एक साथ समाविष्ट हो गई थी। शिक्षा संस्कृति तथा व्यवहार के सभी ऊँचे मानदंड छत्रपति जैसे कूर्म वंशावतंस के

व्यक्तित्व में परिभाषित होकर धन्य हो गये थे। ऐसे प्रजावत्सल राजा की यशोगाथा सुनकर शिक्षित और अबोध दोनों प्रकार के व्यक्ति उसमें औपन्यासिक कल्पना का आरोप कर सकते है। समझदार और विवेकशील उसे सुनकर परमात्मा से प्रार्थना करने लगेगें कि ऐसा आदर्श शासक हर युग और हर देश को प्राप्त हो।

शाहू जी का आर्थिक चिन्तन

कोल्हापुर राज्य में सामाजिक विषमता के निवारण हेतु तीव्र भावना जाग्रत हो रही थी। ब्राह्मण अपनी श्रेष्ठता के मद में चूर कोल्हापुर दरबार से मोर्चे ले रहे थे। छत्रपति शाहू जी ब्राह्मणों के मोर्च के सामने एक बार भी नहीं झुके और न असफल हुए। राज्य इन दिनों ब्राह्मणों और अब्राह्मणों के द्वन्द का केन्द्र बन गया था। इस तूफानी आन्दोलन ने समूचे महाराष्ट्र को हिला दिया था। छत्रपति शाहू जी सवर्णो शूद्रों तथा अतिशूद्रों का मानवी समीकरण चाहते थे। वे सभी की आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति में समानता के आकांक्षी थे। किन्तु ब्राह्मणों का दुर्भाव शिखर पर था। वे मात्र अपने सम्पन्न और शिक्षित होने से संतुष्ट नहीं थे प्रत्युत वे यह भी चाहते थे कि अब्राह्मण आर्थिक, बौद्धिक और शैक्षिक दृष्टि से कभी आगे न बढ़ सकें। इसके लिये उनको हर कुर्बानी स्वीकार थी।

छत्रपति शाहू द्वारा संचालित समस्त सामान्य जनकल्याण योजनाओं में ब्राह्मणों द्वारा प्रतिरोध करने पर अंग्रेजी शासन छत्रपति को अप्रत्याशित सहयोग देता था। अंग्रेजी शासन के सभी कार्यवाहक छत्रपति की ईमानदारी, चारित्रिक सौन्दर्य तथा निष्कलुष जीवन पद्धति से अत्यन्त प्रभावित थे। शोषित दलित मानवता के त्राण और कल्याण के सन्दर्भों में अंग्रेजी शासन खुले रूप में ब्राह्मणों की संकीर्णता एवं जड़ता का विरोधी था। छत्रपति शाहू अपने सार्वजनिक सत्कार्यो में जब भी संकट और बाधा का अनुभव करते तो अंगेजी शासन तुरन्त उनको प्रोत्साहन और सच्चा सहयोग देता था। ब्राह्मणों का कोप तथा षड़यन्त्र लगातार जारी था। उधर छत्रपति शाहू जी उनके हर कदम–हर चाल को विफल कर देते थे। 13 सितम्बर 1903 को तीन ब्राह्मणों विष्णु भट्ट देवधर, बालक भट्ट

परगाँवकर तथा वासुदेव भट्ट पोरे ने एक सम्मिलित प्रार्थना पत्र शंकराचार्य श्री विद्याशंकर भारती के यहाँ इस स्पष्टीकरण तथा निर्णय के लिये भेजा कि छत्रपति शाहू जी क्षत्रिय है या नहीं तथा वे वेदोक्त के अधिकारी है अथवा नहीं। उन्होंने अपने प्रार्थना पत्र में अपनी दोहरी मजबूती का चित्रण किया था। उनका कहना था कि यदि वे महाराज का धार्मिक कार्य वेदोक्त पद्धति से नहीं कराते तो नौकरी से हाथ धो बैठेगें और यदि कराते है तो ब्राह्मणों द्वारा जाति से बहिष्कृत कर दिये जायेगें। इधर बम्बई के गवर्नर ने 16 अक्टूबर 1903 को राजोपाध्याय के मामले में अपना निर्णय सुनाया कि कोल्हापुर की मंत्रिपरिषद का निर्णय सर्वथा न्याय संगत है इससे शाहू जी को बड़ी राहत मिली। बम्बई सरकार के इस निर्णय का सभी ब्राह्मण वकीलों तथा ब्राह्मणी समाचार पत्रों ने खुला विरोध किया और सरकारी निर्णय को अनुचित तथा असंगत घोषित किया। छत्रपति इस मामले को लेकर कई दिनों तक घोर मानसिक अशान्ति का शिकार हो गये थे। बम्बई सरकार के निर्णय से उनको परम शान्ति मिली। छत्रपति शाहू जी के मित्रों तथा फेरीज ने शाहू जी को यह कहकर सांत्वना दी कि अब वेदोक्त प्रकरण स्वतः समाप्त हो जायेगा।

ब्राह्मणी गुरूता और प्रभुता का दुस्सह भार न केवल कोल्हापुर अथवा महाराष्ट्र की अब्राह्मण जनता पर था प्रत्युत्त सम्पूर्ण भारतवर्ष में व्याप्त था। इनकी भेदभाव जाति–पाँति, ऊँच–नीच की दुर्भावना पूरा नंगा नाच कर रही थी। असंतोष का ज्वालामुखी महाराष्ट्र में उग्र था। महात्मा ज्योतिराव फूले का सत्य शोधक समाज, छत्रपति शाहू का आन्दोलन, पेरियार का संघर्ष तथा डॉ0 भीमराव अम्बेडकर का अभियान सब इसी ब्राह्मणवादी कठोर संकीर्ण व्यवस्था के प्रति तीव्र प्रतिक्रिया स्वरूप ही थे। इस देश के मानव–मानव में भेद की दुर्लभ प्राचीर धीरे–धीरे धसक रही थी

तथा आज ध्वस्त होने के कगार पर खड़ी थी। कष्ट तो यह सोचकर होता है कि छत्रपति शाहू जैसे उज्जवल चरित्र के नरेश का वह महत्वपूर्ण समय और शक्ति ब्राह्मणों के वेदोक्त प्रकरण में नष्ट हुआ। कोल्हापुर ही क्या समग्र महाराष्ट्र की नव रचना और निर्माण में लगते न जाने किसी धनराशि ब्राह्मण के अत्याचारों, अनाचारों तथा दुर्व्यवहारों को नियन्त्रित करने में व्यय हो गयी। कभी ब्रिटिश शासन को सन्तुष्ट करके उसका समर्थन प्राप्त करने में छत्रपति लगते तो कभी ब्राह्मणों की अपीलों को निपटाने में संलग्न होते और कभी ब्राह्मणों के षडयन्त्रों एवं कुचक्रों को ध्वस्त करने में व्यस्त होते। चिन्ता, उद्विग्नता, क्लांति और जन कल्याण के लिये टीस में ही छत्रपति डूबे रहते।

समस्या मूलक प्रतिरोधी परिस्थितियों का अपने पौरूष, विवेक और साहस से भले ही छत्रपति ने अपने अनुकूल बना लिया था, किन्तु ब्राह्मणों द्वारा उठाये गये वेदोक्त प्रकरण का जटिल बोझा छत्रपति के मानस में निरन्तर कोलाहल करता रहता था। इसी ऊहापोह में उन्होंने 22 फरवरी सन् 1904 को अपने मित्र एडगर्ले को लिखा कि "हम लोगों के मन में एक विचार आता है कि क्यों न हम ब्राह्मण पुरोहितों के स्थान पर अपने ही वर्ग के पुजारी नियुक्त करे, जैसा कि स्वर्णकारों तथा शेनवी लोगों ने किया है। उनका सारा कार्य बिना ब्राह्मणों के सफलतापूर्वक चल रहा है।"

धीरे–धीरे छत्रपति शाहू जी की सुपुत्री राजकुमारी राधाबाई आकासाहब के विवाह की बात चलने लगी। इसके लिये केवल तीन ही राज्य कुर्मी वंश के थे देवास, धाड़ और बड़ौदा। बड़ौदा के युवराज तुकोजीराव पवार से सम्बन्ध निश्चित हुआ। दहेज में 1 लाख रूपया तथा

अन्य उपहार दिये गये। 1904 ई0 में सगाई तथा 1908 में विवाह सम्पन्न हुआ।

छत्रपति की सज्जनता, विवेक और दृढ़ता का अंग्रेजी सरकार पर गहरा प्रभाव था। इसीलिये जो भी प्रस्ताव अथवा निवेदन वे सरकार से करते उसे ब्रिटिश सरकार तुरन्त स्वीकार कर लेती थी। पशुओं की नस्ल सुधारने, पशु पालन, वृक्षारोपण आदि में छत्रपति की रूचि देखकर ब्रिटिश सरकार और भी प्रसन्न होती थी।

मनुष्य के जीवन और पुरूषार्थ को धन्य बनाने के लिये ही परमात्मा ने अनेक प्रकार की समस्यायें इस जगत में उत्पन्न की है। इन समस्याओं से कोई व्यक्ति मुक्त नहीं है। साधारण व्यक्ति समस्याओं को विपत्तियाँ मान बैठते है और कभी–कभी समस्या के समाधान का बिना प्रयास किये ही हारकर बैठ जाते हैं। परन्तु संकल्प शक्ति वाले व्यक्ति को किसी भी समस्या में परेशानी का अनुभव नहीं होता। छत्रपति शाहू जी का सम्पूर्ण जीवन जैसे विपुल समस्याओं का संग्रह है। एक समस्या के बाद दूसरी समस्या और कभी–कभी समस्या ही समस्या। छत्रपति शाहू जी ने हर समस्या को दुलराया, उसको प्यार किया उससे संघर्ष किया उससे क्रुद्ध और परिश्रांत भी हुए पर समाधान तो वे खोज ही लेते थे।

महात्मा ज्योतिराव फूले जो सामाजिक विषमता को ध्वस्त के लिये आजीवन संघर्ष किया, आन्दोलन चलाया तथा ब्राह्मणवादी व्यवस्था के विरूद्ध लड़ते रहे– ने 1873 ई0 में स्पष्ट रूप से अपनी पुस्तक 'गुलामी' में कहा था कि हम पूर्ण रूप से समझते हैं कि ब्राह्मण अपने द्वारा ही निर्मित उच्चस्तर से कभी नीचे उतरकर अपने पड़ोसी कुनबी भाइयों अथवा अन्य ब्राह्मणेत्तर जातियों के लोगों से कभी नहीं मिल सकते।

छत्रपति शाहूजी ने सामाजिक समानता का जब प्रश्न रखा तो ब्राह्मणों ने इसे किसी रूप में स्वीकार नहीं किया। शाहू जी ब्राह्मणेत्तर जातियों को सामाजिक न्याय देने दिलाने के लिये जी जान से लगे थे। उन्होंने मराठा छात्रों को प्रेरित किया कि जाति–पाँति का भाव समाप्त करके मराठों और मुसलमानों को भी अपने साथ छात्रावास में रखे। यदि ध्यान से देखा जाये तो छत्रपति जातियों और वर्णो मे सदस्त्रधा खण्डित भारत को सामाजिक समानता तथा भेदभाव रहित अखण्ड राष्ट्रीयता के सूत्र मे बाँधना चाहते थे। जबकि ब्राह्मण देश को अनेक प्रकार से खण्डित करके अपनी श्रेष्ठता कायम रखने के लिये सदैव कटिबद्ध थे। छत्रपति शाहू जी ने अपनी राजगद्दी के मोह और लोभ का सर्वथा त्याग करके महाराष्ट्र में महात्मा फूले के संघर्ष सूत्र को बहुत आगे बढ़ाया था। कहने को छत्रपति सामाजिक समानता के स्थापनार्थ सारा संघर्ष कर रहे थे, परन्तु यह चेतना ही भारत की भावी राष्ट्रीय एकता का मूलाधार बनी। भारत यद्यपि आज भी सामाजिक समानता के संदर्भ में मनोवैज्ञानिक दुर्बलता का शिकार बना हुआ है, परन्तु ज्वाला दहक रही है लपटों का बाहर आना मात्र बाकी है। सहज ही आशा की जा सकती है कि महापुरूषों के स्वप्न पूरे होगें।

अध्याय - 3

- शाहूजी का जीवन दर्शन।
- जीवन दर्शन को प्रभावित करने वाली परिस्थितियाँ।
- दार्शनिक चिन्तन में सामाजिकता का समावेश।

शाहू जी का जीवन दर्शन

दर्शन सत्य की खोज है, उसका अर्थ निर्णय है। इस सत्य की खोज में जिस मूल बिन्दु ने आदिकाल से दार्शनिकों का ध्यान आकृष्ट किया है वह है ईश्वर की संकल्पना। इस संकल्पना पर सृष्टि और उसके विकास सम्बन्धी अनेक प्रश्नों का समाधान निर्भर करता है। मनुष्य क्या है? इसका उत्तर भी इस बात पर निर्भर करता है कि ईश्वर में विश्वास होगा तो जीवन का सत्य आध्यात्मिक होगा यदि ईश्वर में विश्वास नहीं होगा और प्रकृति अथवा भौतिक जगत को प्रधानता दी जायेगी तो सत्य का स्वरूप प्रकृतिवादी अथवा भौतिकवादी होगा।

छत्रपति शाहू जी का जन्म मराठा कुर्मी परिवार में हुआ था। हिन्दू धर्म तथा ईश्वर दोनों में ही उनका अटूट विश्वास था। राम–नाम के जप रूपी अमोध शक्ति का बीजारोपण उनके मन में बचपन में ही हो गया था। छत्रपति शाहू जी का मन श्रद्धा प्रधान था। यह अनेकों उद्धरणों से प्रकट होता है किन्तु उनमें अन्धविश्वासों के प्रति न तो निष्ठा थी और न रूचि। मन्दिरों की अनीति को कथाओं के कारण छत्रपति शाहू जी का मन मन्दिरों में नहीं लगा परन्तु ईश्वर के प्रति अटूट विश्वास की अभिव्यक्ति शाहू जी के प्रसंगों से मिलती है।

धर्मशास्त्र की दुनिया के धर्मों की थोड़ी जानकारी तो हुई पर उतना ही ज्ञान मनुष्य के बचाव के लिए काफी सिद्ध नहीं होता। आपत्ति काल में जो वस्तु बचाती है, उसका उस समय उसे न भान होता है न ही ज्ञान। नास्तिक बच जाने पर कहता है कि में संयोगवश बच गया, आस्तिक ऐसे अवसर पर कहेगा कि मुझे ईश्वर ने बचाया। परिणाम के उपरान्त वह जान लेगा कि धर्मों के अभ्यास से अथवा संयम से ईश्वर उसके हृदय प्रकट

होता है। ऐसे मानने का अधिकार उसे हैं पर बचते समय वह यह नहीं जानता कि उसका संयम बचाता है कि कोई और जिसे अपने संयम के बल का अभिमान रहता है उसके संयम को मिट्टी में मिलते किसने नहीं देखा है ? शास्त्र ज्ञान तो ऐसे अवसर पर खोखला सिद्ध होता है।

शाहू जी का कहना था कि–"ईश्वर ने उबार" इस वाक्य का अर्थ में बहुत अच्छी तरह समझता हूँ, पर साथ ही यह भी जानता हूँ वह अनुभव से ही आँकी जा सकती है पर अनेक आध्यात्मिक प्रसंगों में संस्थायें चलाने में, राजनीति में, सामाजिक कार्यों में मुझे ईश्वर ने बचाया है। यह कह सकता हूँ मेंने देखा है कि जब सारी आशा जवाब दे जाती है कुछ करते नहीं बनता तब कहीं से मदद आ पहुँचती है। स्तुती, उपासना, प्रार्थना वहम नहीं है, बल्कि हमारा खाना–पीना, चलना, बैठना, आदि जितना सत्य है उससे भी ये चीज़े अधिक सत्य है। यह कहने में अतिश्योक्ति नहीं कि यही सत्य है, और सब मिथ्या है।

शाहू जी के जीवन दर्शन का मूल्य आधार ईश्वर की संकल्पना थी किन्तु इससे यह न समझना चाहिये कि शाहू जी की ईश्वर की सकल्पना मन्दिरों, मस्जिदों, गिरजाघरों पर आधारित थी। शाहू जी का ईश्वर एक अमूर्त, निराकार, सर्वोच्च आध्यात्मिक शक्ति के रूप में हैं जो समस्त सृष्टि और सम्पूर्ण मानव जीवन को नियंत्रित करती हैं। इस संकल्पना का आधार, मनुष्य के मन की श्रृद्धा है वह बुद्धिगम्य नहीं है। बार–बार वे अपने को ईश्वर के प्रति समर्पित करते हुए सब कुछ उसी का प्रसाद मानते हैं।

छत्रपति शाहू जी एकेश्वर वादी थे और गीता तथा उपनिषदों में प्रतिपादित अदैत के प्रति आस्थावान थे। उन्होंने कहा—मैं ईश्वर की अखण्ड एकता में विश्वास करता हूँ। हम शरीर से अनेक है लेकिन इससे क्या अन्तर पड़ता है ? हमारी आत्मा तो एक है, हमारे शरीर के अन्दर बहने वाला रक्त तो एक है।

शाहू जी की ईश्वर की संकल्पना एक शाश्वत सत्य, शाश्वत मंगल, स्वरूप की थी। शाहू जी भाग्यवाद के विरोधी थे। वे कर्म पर विश्वास करते थे। वे मनुष्य को स्वंय अपने भाग्य का निर्माता मानते थे परन्तु दूसरी ओर वे मानव मुक्ति एवं उसकी पूर्णतः के लिए ईश्वर की अनुकम्पा एवं शरणागति को ही अनिवार्य मानते थे।

अनेक महान ग्रन्थों के स्वाध्याय से शाहू जी ने यह निष्कर्ष निकाला कि प्रत्येक धर्म में ऐसे सुन्दर—सुन्दर उपदेश हैं, जिनके आधार पर हम सच्चे धार्मिक जीवन का निर्माण कर सकते हैं। सभी धर्मों के प्रवर्तकों और आचार्यों के प्रति उन्हे आदर भाव था। उनके अनुसार वे सभी ईश्वर के द्वारा भेजे हुए दिव्य दूत थे। इसी कारण शाहू जी ने कुरान—ए—शरीफ का अनुवाद हिन्दी भाषा में कराने के लिए धन दिया।

छत्रपति शाहू जी महाराज तर्कवाद एवं मानवता के पुजारी थे। धर्म हमारी रक्षा और कल्याण के लिए हैं। अगर वह हमारी आत्मा को शांति और देह को सुख नहीं प्रदान कर सकता तो उसे पुराने कोट की भांति उतार फेंकना और जो धर्म हमारी आत्मा का बंधन हो जाये उससे जितनी जल्दी अपना गला छुड़ा लें उतना ही अच्छा, ऐसा उनका दृष्टिकोण था।

सन् 1899 में क्रान्ति धर्मी छत्रपति शाहू जी अपने मित्रों के साथ स्नान करने को गये थे। वहाँ की परम्परा के अनुसार वेद मंत्र पढ़ाने वाले पंडा को भी स्नान किये हुए होना चाहिये था। लेकिन शाहू जी को आशीर्वाद देने तथा मत्रोंच्चार करने के लिए वह पंडा पैरों में जूते पहने हुए, बिना स्नान किये हुए ही आ गया। इस पर शाहू जी द्वारा आपत्ति की गयी। साथ ही साथ इस बात पर भी आपत्ति की गयी कि वह वेद मंत्रों के आधार पर पौराणिक मंत्रों का उपयोग क्यों कर रहा है। इसके जवाब में पण्डे ने कहा वेदमंत्र पढ़ने के लिए स्नान करना आवश्यक है ,जबकि पौराणिक मंत्रो को पढ़ने के लिए स्नान करना आवश्यक नहीं हैं, इससे भी अधिक अपमान जनक बात उस पण्डे ने कही कि चूंकि छत्रपति शूद्र है, इसलिए उनके लिए वैदिक मंत्रों का पढ़ना जरूरी नहीं हैं और न स्नान करना। छत्रपति शाहू जी महाराज के यह कहने पर कि हम छत्रपति शिवाजी के वंशज हैं और क्षत्रिय हैं तो पण्डे ने जवाब दिया कि चूंकि छत्रपति शिवाजी कुनवी (शूद्र) थे और आप भी शूद्र हैं जब हम आपको क्षत्रिय न माने आप क्षत्रिय नहीं हो सकते हैं। इस तरह के अपमान जनक वाक्य सुनकर महाराज ने उस पुरोहित को उसके पद से हटा दिया

महाराष्ट्र के अन्य पुरोहितों ने महाराज को सूचित किया कि यदि वे क्षत्रिय कहलाना चाहते हैं तो उन्हे चाहिये कि वे दक्षिण भारत समेंत कोल्हापुर के पुरोहितों से क्षत्रिय होने की सामूहिक घोषणा करायें। यह भी व्यवस्था दी गई कि उक्त घोषणा को मान्यता प्राप्त करने के लिए संकेश्वर के शंकराचार्य की सहमति अनिवार्य होगी।

उन्होंने तुरन्त 1902 में जाति प्रथा तथा छुआ–छूत के विरोधक आर्य धर्म का अंगीकार किया। वे सभी लोगों को वेद, मूर्तिपूजा, चातुर्वय व्यवस्था से जल्द से जल्द छुटकारा पाने को प्रोत्साहित किया करते थे। नदी स्नान

की घटना और बाद के वाद–विवाद का छत्रपति शाहू जी पर गहरा प्रभाव पड़ा था उन्होंने उच्चकुलीन व्यवस्थाओं से संघर्ष करने का संकल्प कर लिया। इस उद्देश्य से उन्होंने शंकराचार्य के मठ की गतिविधियों का सूक्ष्म अध्ययन किया और इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि मठ के कार्य पक्षपात पूर्ण है, इनसे निम्न जातियों का भला होना तो दूर की बात है उल्टा अहित होता है। अतः उन्होंने 1903 में मठ की सम्पूर्ण सम्पत्ति को जप्त कर लिया और इस सम्पत्ति को सामान्य जन कल्याण योजनाओं में लगा दिया। यही नहीं इसी वर्ष एक आज्ञा प्रसारित करके मठ के मुख्य प्रशासनिक अधिकारी के सभी अधिकार समाप्त कर दिये। 1904 में इन्होंने यहाँ तक सोंच डाला कि उच्च कुल के पुरोहितों के स्थान पर दलित वर्गों के पुरोहित बनाये जायेगें।

छत्रपति शाहू जी सभी धर्मों का आदर करते थे अपने रियासत में साम्प्रदायिक सद्भाव बढ़ाने में सदैव तत्पर रहते थे। अपने पुराने महल में एक जीर्ण–शीर्ण मस्जिद में कुछ मुसलमान पुनः नमाज पढ़ना शुरू करना चाहते थे, लेकिन धार्मिक उग्रता से साम्प्रदायिक अशान्ति की सम्भावना का अनुमान लगाकर छत्रपति शाहू जी ने नगर के एक दूसरे रिक्त स्थान पर मस्जिद का निर्माण करा दिया और मुसलमानों की सहमति से मस्जिद निर्माण हेतु प्रचुर धन दिया।

1906 में छत्रपति शाहू जी ने अपने सच्चे मानवतावादी दृष्टिकोण का परिचय देते हुए मुसलमानों के बच्चों के लिए एक नया छात्रावास भी निर्मित कराया और मुसलमानों में शिक्षा को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से छात्रावास हेतु प्रतिमाह आर्थिक सहायता भी देते रहे।

छत्रपति शाहू जी के अनुसार नैतिकता हमारे जीवन का आधार है। व्यक्ति और समाज का सम्पूर्ण अस्तित्व नैतिकता पर ही है। यही हमारे अन्दर संघर्ष तथा संहार की भावनाओं को दबाकर परोपकार, शान्ति, सुख और सामंजस्य को प्रोत्साहित करती हैं। इसलिए नैतिकता का सदैव अतिजीवता मूल्य है। नीतिशास्त्र मनुष्य के कर्तव्य और अकर्तव्य का विचार करता है। वह नैतिकता का विज्ञान है जैसा कि गाँधी जी ने भी कहा है– **"भगवान से मेरी प्रार्थना है और मैं तो आशा करूँगा कि आप भी मेरी प्रार्थना में साथ दें, ताकि मुझे अपने जीवन दर्शन के अनुकूल चलने की शक्ति प्रदान करें। आचरण के बिना दर्शन ठीक उसी प्रकार है जैसे प्राण के बिना शरीर।"**

छत्रपति शाहू जी कर्मवाद पर ही विश्वास करते थे और एक अच्छे नैतिक जीवन के लिए इससे प्रेरणा ग्रहण करते थे। इसी कारण वे कर्मफल की वासना से अनुद्विग्न होकर सदैव "कर्तव्य के लिए कर्म" करते थे।

भारतीय विचारकों में इस बात पर प्रायः सहमति है कि एक सम्पूर्ण नैतिकतापूर्ण जीवन जीने के लिए अहिंसा, सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह और ब्रहचर्य जैसे सद्‌गुणों को हमें अपने जीवन में अवश्य स्थान देना चाहिये। ये पाँच महावृत उपनिष्द, बौद्ध, जैन आदि प्रायः सभी को स्वीकार्य है। छत्रपति शाहू जी ने भी परम्परागत सद्‌गुणों को स्वीकार करते हुए अपने अध्ययन एवं अनुभव के अनुसार उसकी व्याख्या की है, ताकि देशकाल और परिस्थिति के अनुसार उसका जीवन में व्यवहार हो सके। टालस्टाय द्वारा प्रदत्त बाईबिल के धर्मदेशों की व्याख्या ने शाहू जी को बहुत प्रभावित किया। ये महाव्रत निम्न है –

अहिंसा :

अहिंसा सबसे बड़ा धर्म और सबसे बड़ी नैतिकता है। ईश्वर अथवा सत्य को प्राप्त करने का सर्वोत्तम साधन अहिंसा ही है। शाहू जी के लिए अहिंसा की संकल्पना यही तक सीमित नहीं थी। उन्होंने अहिंसा केवल व्यक्तिगत सम्बन्धों में प्रतिपादित नहीं की बल्कि उसे पूरे सामाजिक जीवन में राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक रूप में अवतरित करने का प्रयास किया। ऐसा नहीं है कि शाहू जी यह नहीं समझते थे कि अहिंसा व्रत एक कठिन व्रत है और वे मनुष्य की सीमायें एवं क्षमतायें भी समझते थे। शाहू जी यह भी जानते थे कि सामाजिक एवं शैक्षिक क्रान्ति के लिए व्यवहारिक दृष्टि से कोई दूसरा मार्ग अथवा हिंसा का मार्ग श्रेयस्कर नहीं हो सकता था इसलिए कठिनाईयों के बावजूद उन्होंने अहिंसा को अपनाया। शाहू जी का कहना था– "अहिंसा मेंरे लिए एक विश्वास है, मेंरे जीवन की सांस है किन्तु मैंने सिवाय आकस्मिक, अनौपचारिक वार्ता के समय किसी के सामने इसे आस्था या विश्वास के रूप में प्रस्तुत नहीं किया"[1]।

अहिंसा का अर्थ शाहू जी के शब्दकोश में कायरता नहीं थी। कायरता की अपेक्षा वे हिंसा को अधिक श्रेयस्कर समझते थे। अहिंसा को परिभाषित करते हुए राजर्षि छत्रपति शाहू जी कहते हैं– "मुझे कहना है कि यदि तुम ऐसी स्थिति में हों कि तुम्हे किसी दुष्ट से किसी स्त्री की शारीरिक शक्ति से रक्षा करनी हो या उसे भाग्य पर छोड़कर भागने की बात हो तो तुम वहीं रहो और उस दुष्ट को अपना भाई समझकर और उसके विरूद्ध किसी शक्ति का प्रयोग न कर मृत्यपर्यन्त सत्याग्रह करके उसका विरोध करते रहो। सत्याग्रह का मार्ग कायरों के लिए नहीं हैं। जब

---

[1] सेठी जे0 डी0 1968 पृष्ठ 22– विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा0 लि0 नई दिल्ली

मनुष्य अपनी कायरता से मुक्त हो जाता है, तभी वह अहिंसा का मार्ग अपनाने के योग्य प्रतीत होता है।''[2]

अहिंसा के उपयुर्क्त स्वरूप से यह नहीं समझना चाहिये कि अहिंसा शाहू जी महाराज जी के लिए शाश्वत सिद्धान्त नहीं था। यह बात उनके इस वक्तव्य से और भी अधिक स्पष्ट हो जाती है जिसमें उन्होंने कहा था कि वे 'अहिंसा' को 'प्रेम' भी कहते हैं। जहाँ प्रेम होगा वहाँ हिंसा नहीं हो सकती है। अपने आचरण और उपदेशों के द्वारा उन्होंने अहिंसा की कल्पना में बुद्ध की मैत्री और करूणा तथा ईसा मसीह की ''शत्रुओं से प्यार'' बुराई के बदले भलाई तथा घृणा के बदले प्यार करने की भावनाओं का सम्मिश्रण कर दिया गया। भावात्मक अर्थ में अहिंसा, गीता और अन्य भारतीय शास्त्रों में बार–बार वर्गीत आत्मवत् सर्वभूतेषु के सिद्धान्त पर आधारित है। यदि कुरान की सही व्याख्या हो तो उसमें भी अहिंसा का तत्व मिलेगा। इस प्रकार उन्हें सभी महान धर्मो के सार तत्वों की जानकारी हुई।

सत्य :

अहिंसा के बाद सत्य पर ही छत्रपति शाहू जी जोर देते थे। छत्रपति शाहू जी महाराज के लिए विचार के क्षेत्र में सत्य का अर्थ तथ्यों के प्रति आदर भाव है। यह किसी निर्णय पर पहुँचने से पूर्व उनके सत्य या असत्य के अन्वेषण के प्रति उत्कट जिज्ञासा ही है।

उन्होंने अपने व्यक्तिगत और सार्वजनिक जीवन में सत्य के साथ निरंतर प्रयोग के रूप में अन्वेषण किया। सत्य के विषय में उन्होंने कहा,

---

[2] हिन्दू धर्म ओरियन्ट पेपर वैन्स 1968 पृष्ठ 145

"स्वभाव से ही सत्य स्वयं प्रकाश्य है, जैसे ही अविधारूणी आवरण हट जायेगा वैसे ही सत्य रूपी सूर्य पुनः प्रकाशित हो उठेगा।"[3]

प्राचीन हिन्दू नीति शास्त्र का आश्रय लेकर वे कहते हैं कि "व्यक्ति जब तक काम, क्रोध, मोह, लोभ, मन और माया इन षठरिपुओं के प्रभाव में रहेगा, वह सत्य के दर्शन नहीं कर सकता है।"[4]

इस प्रकार शाहू जी के विचार में सत्य निष्ठा पर आरूढ़ रहने के लिए अपेक्षित शक्ति उन्हें अपनी नैतिक शुद्धता तथा काम, क्रोध आदि भयंकर शत्रुओं को अपने से दूर रखने में ही मिली। वे इसी सत्य के बल पर अपनी भूलों तथा असफलताओं की घोषणा भी सार्वजनिक रूप से कर देते थे। इन्हीं गुणों के कारण वे अपने समय में नैतिक संग्राम के सर्वश्रेष्ठ नायक बन गये थे। भारतीय नीति वेत्ताओं के समान शाहू जी भी मानते थे कि सत्य से प्रेम भी निःसृत होता है। इस प्रकार सत्य की आधार भूत श्रेष्ठता के प्रति आंतरिक आस्था छत्रपति शाहू जी महाराज के सम्पूर्ण जीवन में प्रकट होती थी। चाहे उनकी बातचीत हो या लेख हो या पत्रकारिता, हर जगह उन्होंने अतिश्योक्ति, कठोरता और सस्ती सफलता के लिए अनुचित उद्धिग्नता को अपने से दूर रखा। उन्होंने जीवन के क्षेत्र में मृदु और प्रभावकारी सत्यवादिता का जो आदर्श प्रस्तुत किया वह इतिहास में अत्यन्त दुर्लभ है।

अस्तेय :

अस्तेय का अर्थ है "चोरी न करना"। छत्रपति श्री शाहू जी महाराज के अनुसार चोरी करना खराब काम है, क्योंकि इससे दूसरों को कष्ट

---

[3] यंग इंन्डिया 27–5–1926

[4] हरिजन 15–9–1940

पहुँचता है। इस व्यापक दृष्टि से विचार करने पर अस्तेय व्रत के पालन के लिए प्रचलित रूप ये बाह्य अथवा शारीरिक चोरियों का ही नहीं, बल्कि दूसरों का काम कीमतों पर होने वाले समस्त शोषणों का अन्त होना चाहिये चाहें वह पूँजीपतियों के द्वारा श्रमिकों के श्रम का शोषण हो या अन्य कोई शोषण इन सभी प्रकार के शोषण में भी हिंसा का वास रहता है।

अस्तेय व्रत की अपनी व्याख्या में छत्रपति श्री शाहू जी का कहना था कि अनावश्यक रूप से कोई वस्तु लेना या रखना भी चोरी हो सकती है, इसलिए हमें अनावश्यक रूप से कोई वस्तु नहीं रखनी चाहिये।

अपरिग्रह :

अपरिग्रह को अस्तेय से ही सम्बद्ध समझना चाहिये। अतः व्यवहारिक अर्थ में अनावश्यक संग्रह चोरी की ही चीज़ हो जाती है, इसलिए अनावश्यक वस्तु का हम परिग्रह न करें। आवश्यकता की कोई सीमा नहीं है। अतः विभिन्न स्थितियों में परिग्रह की विभिन्न सीमायें निर्धारित की गयी है।

शाहू जी महाराज के अनुसार आदर्श दैनिक जीवन में उपयोग की जाने वाली वस्तुओं का अनुचित संग्रह रोकना भी व्रत का महत्वपूर्ण भाग है। आज की जो जरूरत है, उतना ही संग्रह करना चाहिये।

ब्रहमचर्य :

मूल रूप में ब्रहमचर्य सर्वेन्दिय–संयम का द्योतक है। किन्तु मनु ने ब्रहमचर्य आश्रम की अवधि में विद्यार्थियों के लिए जनेन्द्रिय संयम को आवश्यक माना है ग्रहस्थ जीवन में संयमित विवाहित जीवन को भी मनु ने

ब्रहमचर्य का ही द्योतक माना है। छत्रपति श्री शाहू जी महाराज के द्वारा ब्रहमचर्य की संकल्पना इन्हीं प्राचीन आदर्शों तथा अनुभवों पर आधारित थी। वस्तुतः वे अपनी सम्पूर्ण शक्ति सामाजिक एवं राजनीतिक कार्यों में लगाना चाहते थे इसके लिए उन्होंने संग्रह एवं इन्द्रिय संयम को अति आवश्यक माना।

इस आदर्श का पालन करने के लिए छत्रपति श्री शाहू जी महाराज शक्ति एवं संकल्प से प्रयत्न करते रहे। उनका मानना था कि जब तक मन वाणी और कार्य से परिपूर्ण संयम हमारे जीवन में नहीं आ जाता तब तक हम इन्द्रिय संयम भी नहीं कर सकते हैं। उन्होंने कहा कि, ''ब्रहमचर्य केवल यांत्रिक संयम ही नहीं है सभी इन्द्रियों पर पूर्ण संयम ब्रहमचर्य है। उससे सभी वासनाओं से पूर्ण मुक्ति होती है और मन वचन तथा कर्म के पाप से भी''[5] एक अन्य स्थान पर ब्रहमचर्य की व्याख्या निम्न प्रकार से भी की है। ''सभी इन्द्रियों पर पूर्ण संयम तथा मन वचन और कर्म में वासना से मुक्ति ही ब्रहमचर्य है।''[6]

इस प्रकार छत्रपति श्री शाहू जी महाराज ने इन पांच महाव्रतों के अतिरिक्त ज्ञान, आत्म, स्वतन्त्रता, आत्म शक्ति आदि को भी नैतिक जीवन के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण माना है। उन्होंने भगवान बुद्ध की तरह यह भी माना कि नैतिक जीवन के लिए सतत् सावधानी और निरन्तर पुरूषार्थ भी आवश्यक है।

छत्रपति श्री शाहू जी महाराज को उस समय के विधि विधान आपत्तिजनक थे जिनमें अनुष्ठानों की भरमार थी। इसलिए उन्होंने प्रचलित कपोल गाथाओं को एक–एक करके नष्ट किया और वेदों की पुर्नस्थापना

---

[5] हिन्दू धर्म पृष्ठ 72

[6] हिन्दू धर्म पृष्ठ 66

करने में पहल की। हमारे पूर्वजों नें अपनी स्थिति एवं प्रकृति के मूल तत्वों को जिसे वे अपने चारों ओर अनुभव करते थे, वेदों के मंत्रों द्वारा समझाने का प्रयास किया है। उस समय ऋषियों द्वारा रूप दिये गये थे, रूप शायद मनुष्य की साहसिक मनोवृत्ति की अभिव्यक्ति थी। वेद भी मानव जाति का महत्वपूर्ण एवं मानवीय परिस्थिति को समझने की ओर पहला चरण है।

जीवन दर्शन को प्रभावित करने वाली परिस्थितियाँ

प्रगतिगामी समाज–परायणता तथा उच्च आदर्शो में आस्था रखने वाले व्यक्ति को समस्याओं एवं व्यवधानों से छुटकारा नहीं मिलता। उपस्थित समस्या का समाधान संघर्ष पूर्ण प्रयास के पश्चात् यदि उस व्यक्ति को उपलब्ध भी हो जाता है तो तुरन्त दूसरी समस्या, दूसरी बाधा सामने आकर खड़ी हो जाती है। कभी शान्ति और राहत ऐसे व्यक्ति को नहीं मिलती। सामाजिक रचना और कल्याणवाही निर्माण कर नशा उस व्यक्ति में इतना गहरा होता है कि हजार कोशिश करने पर भी वह इस नशे से मुक्त नहीं हो पाता। आपु न धावें ताहि पै, ताति तहाँ लै जाये– जैसी उक्ति ही वहाँ चरितार्थ होती है। कमली के साथ नदी में बह जाने वाले बाबा तो कमली छोड़कर नदी से बाहर आना चाहता था किन्तु कमली बाबा को नहीं छोड़ती। जल प्रवाह की तीव्रता तथा कमली का फंसाव बाबा को जल समाधि लेने के लिये विवश कर देता है। ठीक इसी प्रकार आदर्श प्रेरित पुरूष की निर्माण चेतना की कमली तथा परिस्थितियों के अनियन्त्रित प्रवाह का दबाव उस व्यक्ति को पुनः संघर्ष के गहन गर्त में लाकर डाल देता है। छत्रपति शाहू जी को कर्मठता, ईमानदारी और मानवता के उद्धार के अनुराग ने कभी उनको चैन से नहीं बैठने दिया। विभिन्न महापुरूषों का प्रभाव शाहू जी के चिन्तन पर पड़ा।

स्वामी दयानन्द सरस्वती :–

स्वामी दयानन्द जी की शिक्षण विधि एवं उनके द्वारा शिक्षा की उन्नति के लिये किये गये प्रयासों का छत्रपति श्री शाहूजी महाराज पर बहुत प्रभाव पड़ा था। स्वामी दयानन्द सरस्वती जी का कहना था कि आज की शिक्षा में ऐसे विषयों की बहुतायत है जो व्यक्ति को भौतिक

सुख–सुविधाओं की ओर तो ले जा रहें है परन्तु आत्मानुभूति जन्य आनन्द से दूर कराते जा रहें है। आवश्यकता है ऐसे शैक्षिक दर्शन की जो व्यक्ति को भौतिक एवं आध्यात्मिक दोनों विषयों का परिज्ञान करा सके तथा उसे सांसारिक और आध्यात्मिक सुख प्रदान कर सकें।

उनके शैक्षिक पहलुओ के अतिरिक्त स्वामी जी ने शिक्षण विधि के क्षेत्र में परम्परावादी दृष्टिकोण का समर्थन किया है। स्वामी जी के शिक्षण विधि की अपनी अलग महत्ता है। शैक्षणिक विधि में केन्द्रीयकरण की प्रवृत्ति की ओर इंगित करते हुए स्वामी जी कहते थे, कि बालकों की शिक्षा में केन्द्रीकरण अति आवश्यक है उसके कारण उनका ध्यान विकेन्द्रित नहीं हो पाता है और उसका ध्यान विषय में ही लगा रहता है। स्वामी जी ने क्रिया एवं व्यवहारिक शिक्षण विधियों का भी समर्थन किया है और उपदेश विधि को बहुत महत्वपूर्ण बताया। स्वामी जी द्वारा निर्धारित उपदेश विधि ही वर्तमान समय में व्याख्यान विधि के नाम से प्रचलित है। यदि उनके द्वारा स्वीकृत केन्द्रीकरण की शिक्षण विधि को अपनाया जाये तो शिक्षा सुलभ हो जायेगी। इनकी शिक्षण विधि की भी आधुनिक शिक्षा में पर्याप्त मात्रा में उपयोगिता सिद्ध है। स्वामी जी द्वारा निर्धारित शैक्षिक विचारों का उद्देश्य केवल उपने देश को ही नहीं अपितु समस्त विश्व को समस्त मानवता को अपनी परिधि में लेना है। अनुशासन की दृष्टि से भी उनका शैक्षिक दर्शन अत्युत्तम है। यह ठीक है कि बालकों को स्वतन्त्रता प्रदान करके शिक्षा कार्यक्रम को आगें बढाया जा सकता है लेकिन मतलब से अधिक स्वतन्त्रता शिक्षोन्नति पर कुठाराघात है। स्वामी जी ने अनुशासन के क्षेत्र में मध्यम मार्ग अपना अनुशासन सम्बंधी विचारों की उपयोगिता स्पष्ट कर दी है। आज छात्रों को अत्यधिक स्वतन्त्रता दिया जाना भी अनुशासन हीनता का कारण है ऐसी स्थिति में स्वामी जी के अनुशासन

सम्बन्धी विचार उपयोगी हो सकते है जिनको अपनाकर आधुनिक शिक्षा का सुव्यवस्थिति रूप प्रदान किया जा सकता है।

स्वामी ने मातृभाषा द्वारा शिक्षा प्रदान किये जाने पर बल दिया यद्यपि उन्होंने अन्य भाषाओं की अवहेलना भी नहीं की किन्तु माध्यम के रूप में मातृभाषा को अपनाये जाने को कहा। आधुनिक शैक्षिक जगत में यह बात सर्वमान्य है कि मातृभाषा द्वारा शिक्षा प्रदान किये जाने पर वह सबके लिये उपयोगी और सार्थक होगी क्योंकि शिक्षा का माध्यम ही सुदृढ़ आधार है जिस पर शिक्षा रूपी भव्य भवन का निर्माण हुआ है। स्वामी जी द्वारा शिक्षा का माध्यम मातृभाषा को बनाया जाना वर्तमान शिक्षा जगत के लिये प्रासंगिक है। स्वामी जी शिक्षक को ज्ञान का पुत्र और गुणों की खान के रूप में देखना चाहते थे और गुरू–शिष्य के सम्बन्धों के विषय में परम्परावादी दृष्टिकोण के समर्थक थे।

स्त्री शिक्षा की आवश्यकता पर बल देते हुए उन्होंने कहा कि पहले स्त्री जाति को सुशिक्षित बनाओं फिर वे स्वयं कहेगी कि उन्हें किन सुधारों की आवश्यकता है। उनके अनुसार तुम्हें उनके प्रत्येक क्षेत्र में हस्तक्षेप करने का क्या अधिकार है? स्वामी जी की यह बात आधुनिक शिक्षा में नितान्त आवश्यक है क्योंकि भारत के पतन और अवनति का प्रमुख कारण आज स्त्रियों की अशिक्षा ही है। यदि स्वामी जी के स्त्री–शिक्षा सम्बन्धी विचारों की उपयोगिता पर दृष्टिपात किया जाये तो निश्चित रूप से राष्ट्र अवनति के गर्त में जाने से बच सकता है। जनसाधारण की शिक्षा पर भी स्वामी जी ने अधिकाधिक जोर दिया क्योंकि जनसामान्य को शिक्षा देकर ही वे अविद्या, अज्ञान को दूर करना चाहते थे। अपने शैक्षिक विचारों के अन्तर्गत जनसाधारण की शिक्षा पर विचार प्रकट कर उन्होंने व्यापक रूप से जनसामान्य को शिक्षित करने के लिये कहा।

आधुनिक शिक्षा जगत में स्वामी जी के जनसाधारण शिक्षा सम्बन्धी विचारों की प्रासंगिकता इस बात से पूर्णतया स्पष्ट है कि जब तक प्रत्येक पुरूष और स्त्री को शिक्षित नहीं किया जायेगा, तब तक राष्ट्रोन्नति व शिक्षोन्नति सम्भव नहीं। धार्मिक शिक्षा के संदर्भ में भी उन्होंने प्रभावशाली विचार व्यक्त किये तथा कहा कि धार्मिक शिक्षा द्वारा नैतिक, चारित्रिक व आध्यात्मिक गुणो का विकास होना चाहिये। ये धार्मिक शिक्षा व्यक्ति को आदर्शो का पालन कर सत्य के मार्ग पर चलने के लिये अनुप्रेरित करेगी। यह स्वामी जी के शैक्षिक विचारों तथा प्रयत्नों का ही परिणाम है कि आधुनिक शिक्षा जगत में धार्मिक शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्ता अनुभव की जा रही है सह–शिक्षा के सम्बन्ध में स्वामी जी के विचार सर्वथा प्रथक है एवं क्रांन्तिकारी विचारधारा का प्रतिनिधित्व करते है आज जबकि सर्वत्र भौतिकता का समावेश है। सह–शिक्षा के सम्बन्ध में स्वामी जी द्वारा व्यक्त विचार प्राचीन सभ्यता एवं संस्कृति के परिचायक है और साथ ही साथ उनके व्यक्तिगत चिन्तन के भी। आज जबकि सह–शिक्षा से उत्पन्न नैतिक, चारित्रिक और सामाजिक कुरीतियाँ विद्यमान है ऐसी स्थिति में स्वामी जी के सह–शिक्षा सम्बन्धी विचार आधुनिक शिक्षा के लिये प्रश्न चिन्ह है।

व्यावसायिक शिक्षा के सन्दर्भ में स्वामी जी के विचार बड़े विस्तृत एवं सुलझे हुए है। उन्होंने व्यावसायिक शिक्षा के साथ ही साथ विज्ञान एवं उद्योगों की शिक्षा पर भी अपने सबल समर्थन द्वारा शिक्षा जगत को जाग्रत करने का प्रयास किया। स्वामी जी मुख्य रूप से व्यावसायिक शिक्षा के उपासक थे। व्यावसायिक शिक्षा द्वारा ही देश में व्याप्त बेरोजगारी, निर्धनता को दूर करना चाहते थे परन्तु इस व्यावसायिक शिक्षा में धर्म का परस्पर सामंजस्य एवं समन्वय हो। वर्तमान शिक्षा जगत में धर्म और विज्ञान से

ओत–प्रोत ऐसी व्यावसायिक शिक्षा की आवश्यकता है जो व्यक्ति को पूर्णरूपेण स्वावलम्बन प्रदान कर सके तथा राष्ट्र की समृद्धि एवं उन्नति में योग दे सके। स्वामी जी के व्यावसायिक शिक्षा सम्बंधी व्यापक विचार आधुनिक शिक्षा के लिये उपयोगी ही नहीं अपितु सार्थक है।

परीक्षा के संदर्भ में स्वामी जी के विचार क्रान्तिकारी है तथा साथ ही साथ व्यावहारिक तथा व्यापक भी। परीक्षा को उद्देश्य के रूप में न लेकर उन्होंने उसे शिक्षा का साधन माना है। परीक्षा को एक ऐसे रूप में स्वीकार किया है जिसके द्वारा छात्रों के बहुअंगी विकास के सम्बंध में पूर्णतया सत्य प्रमाण उपलब्ध हो। आधुनिक शिक्षा भी आज ऐसी परीक्षा की आवश्यकता महसूस करती है जिसके द्वारा व्यक्ति का चतुर्मुखी विकास हो। वर्तमान दोषपूर्ण परीक्षा पद्धति को दृष्टि में रखते हुए स्वामी जी के परीक्षा सम्बंधी विचार उपयोगी सिद्ध हो सकते है तथा परीक्षा प्रणाली में सुधार ला सकते है।

अन्त में यह कहा जा सकता है कि शिक्षा के प्रति स्वामी जी के उत्कट विचार और उनके द्वारा किये गये आवश्यक प्रयत्न उन्हें भारत के उज्जवल भविष्य के निर्माता के रूप में ला खड़ा करते है। उनके शिक्षा दर्शन को उनके जीवन दर्शन या नैतिक, सामाजिक व आर्थिक दर्शन से अलग नहीं समझा जा सकता। उनके शैक्षिक विचारों में समग्रता का समावेश है। शिक्षा को भौतिक और आध्यात्मिक दोनों प्रकार की श्री प्राप्त करने के साधन के रूप में स्वीकार करने और स्त्री–शिक्षा, जनसाधारण की शिक्षा के प्रचार एवं प्रसार करने में अपने योगदान के लिये वे सदैव स्मरण किये जायेगे। धर्म के क्षेत्र में एवं सामाजिक उत्थान के लिये तथा शिक्षा शास्त्री के रूप में स्वामी जी की प्रतिष्ठा सर्वविदित है।

भारतीय समाज में निहित बुराइयों के विरूद्ध स्वामी दयानन्द सरस्वती ने युद्ध छेड़ा उसी समय राजा राममोहन राय का ब्रह्म समाज एवं केशवचन्द्र सेन का प्रार्थना समाज पहले से ही इस क्षेत्र में सक्रिय थे। इन संस्थाओं और इनके संस्थापकों ने अच्छा काम किया था। राजा राममोहन राय सती प्रथा एवं शिशु वध के विरूद्ध निरन्तर संघर्ष कर रहे थे।

स्वामी दयानन्द सरस्वती के अनुपम प्रयास से अंधविश्वास और झगड़ो से भरे समाज के दमघोट वातावरण में जैसे ताजी हवा का झोंका आया। राष्ट्र में नवीन जीवन का संचार करने के उनके सरल और स्पष्ट नुस्खे से पराधीन लोगों की भावनाओं को प्रभावित किया। दयानन्द सरस्वती जी का कहना था–''जैसे ईश्वर ने सूर्य, चन्द्र, पृथ्वी ,वायु व अन्य चीजे सबके लिये बनायी है वैसे ईश्वर धर्म भी सबके लिये एक जैसा होना चाहिये। सब धर्मों में कुछ न कुछ सत्य है। सभी इस बात से सहमत है कि सत्य बोलना, चोरी न करना अच्छे सिद्धान्त है। यदि कोई जिज्ञासु विभिन्न धर्मों में पाये जाने ऐसे सभी सिद्धान्त एकत्र कर ले जिनसे सभी धर्म सहमत हो तो वह ईश्वरीय धर्म होगा।'' दयानन्द सरस्वती जी यह स्वीकार करते थे कि भारत के पुनरूत्थान के लिये आधुनिक शिक्षा की आवश्यकता है लेकिन उनके अनुसार यह इतना महत्वपूर्ण नहीं था। इससे अधिक आवश्यक था कि भारत की जनता को जागृत करना, वर्षों से बौद्धिक निद्रा में सोये राष्ट्र को झिंझोकर जगाना। उन्हें पूर्ण विश्वास था कि उनके देशवासियो को अपनी मूल विरासत, वेदों जैसे ग्रन्थों में निहित शाश्वत सत्य एवं आर्य पद्धति के गौरव का यदि सही पालन किया जाये, आदि के बारे में स्मरण करने की आवश्यकता है। भारत के अतीत में सरल आस्था रखते हुए भारत की विरासत पर गर्व करते हुए भी स्वामी जी का

जीवन की समस्याओं के प्रति दृष्टिकोण आधुनिक था और वे भारत के अतीत एवं वर्तमान के बीच एक बड़ा संयोजक था।

वर्तमान समय में स्वामी जी के विचारों की प्रासंगिकता बहुमूल्य है। इनके शैक्षिक विचारों की उपयोगिता इसी से सिद्ध है कि आधुनिक शिक्षा जगत एक ऐसी सुव्यवस्थित शिक्षा को अपनाना चाहता है जो कि उसे भौतिकता के साथ–साथ आध्यात्मिक की ओर भी अग्रसर करे। निश्चित रूप से स्वामी दयानन्द सरस्वती के शैक्षिक विचारों को अधिकाधिक मात्रा में आधुनिक शिक्षा जगत में अपनाकर इसकी उपयोगिता को सिद्ध किया जा सकता है। जब तक इनके शैक्षिक विचारों को अपनाया नहीं जायेगा तब तक शिक्षा बिना उद्देश्य के दिशाहीन रहेगी। शिक्षा ग्रहण करने वाला तथा शिक्षा देने वाला दोनों को ही शिक्षा के प्रति लगनशील होना चाहिये। दयानन्द सरस्वती के अनुसार– ''शिष्य उसे कहते है जो सत्य शिक्षा और विद्याा को ग्रहण करने योग्य धर्मशील हो तथा विद्या ग्रहण की इच्छा रखने वाला एवं आचार्य का प्रिय हो।''

अतः यदि शिक्षा को सुदृढ़ आधार प्रदान करना है तो स्वामी जी के विचारों को आत्मसात कर शिक्षा जगत को निर्देश देना है।

महात्मा ज्योतिराव फूलेः–

महात्मा ज्योतिराव फूले ने छोटे वर्गों के लोगों को ललकार कर जाति बन्धन को तोड़ डालने, ऊँच–नीच के भाव को समूल नष्ट करने तथा ब्राह्मणों एवं पुरोहितों के प्रपंचनापूर्ण उपदेशों से दूर रहने तथा उसके बताये गये भ्रष्ट मार्गो से हटकर चलने के लिये प्रेरित किया उन्होंने उन शूद्रों तथा अतिशूद्रों को अत्यन्त बलिष्ठ तर्कों से यह समझाने का प्रयास किया कि उच्चकुलीन वर्ग के पौराणिक आख्यान नितान्त भ्रामक है। उन

पर विश्वास करना मानवता के विरूद्ध आचरण करना है। जन्म से न तो कोई ब्राह्मणों होता है न ही शूद्र। भगवान ने अपनी ओर से सभी मनुष्यों को बराबर बनाया है। यह ऊँच–नीच, वर्ण–व्यवस्था तथा जातीय–भेदभाव उच्च कुलीन वर्ग के व्यक्तियों ने अपनी सत्ता सर्वोपरि बनाये रखने के लिये उत्पन्न किया है। भगवान की ओर से न तो कोई छोटा है और न ही बड़ा। सभी को ईश्वर ने बनाया है। सभी के अधिकार समान है यह तो पुरोहित प्रपंच का परिणाम है कि हिन्दू समाज वर्णो, जातीयों और उपजातियों, अमीरी, गरीबी के कठिन कठघरे में फँस गया है। मानव–मानव में भेद आँकना मानवता का अपमान है उसके गौरव का तिरस्कार है। ज्योतिबा ने उन शोषित, दलित जातियो के लोगों में आत्म सम्मान का भाव जागृत किया तथा नये विचारों, नयी कल्पनाओं को ग्रहण करने हेतु प्रेरित किया।

महात्मा फूले ने अपने प्रभावशाली प्रारम्भिक भाषण में ब्राह्मणों कुचक्रों से मुक्ति के लिये एक संस्था की स्थापना की आवश्यकता पर बल दिया। सभा में उपस्थित जनता में प्रबल उत्साह तथा संघर्ष करने की उमंग थी। सभी ने ज्योतिराव के विचारों से सहमत होते हुए संस्था के निर्माण का समर्थन किया। फलतः संस्था का गठन हो गया। महात्मा ज्योतिराव ने संस्था का नाम 'सत्य शोधक समाज' रखा। सत्य शोधक समाज का लक्ष्य तीन मुख्य बिन्दुओं पर केन्द्रित था।–

(1) सभी मनुष्य एक परमात्मा की संतान है और वह उनका पिता है।

(2) माता और पिता को प्रसन्न करने के लिये किसी माध्यम की आवश्यकता नहीं होती है। इसी प्रकार भगवान की पूजा में किसी पुरोहित अथवा उपदेशक आचार्य की मध्यस्थता नहीं चाहिये।

(3) समाज के सिद्धान्तों पर आचरण करने वाला प्रत्येक व्यक्ति समाज का सदस्य होने की पूर्ण अर्हता रखता है।

प्रारम्भिक दिनों में सत्य शोधक समाज की सदस्यता ब्राह्मणों, महारों, ईसाईयों, मुसलमानों सभी ने ग्रहण की। प्रत्येक रविवार को समाज की बहुमुखी कुरीतियों पर वाद–विवाद तथा विचार–विमर्श होता था। विवाह में मित्यवता, भूत–प्रेत में विश्वास न करना भविष्यवाणियों को स्थान न देना छोटी जातियों के लोगों को शिक्षा देना, उच्चवर्ग के पाखण्ड को समाज से बहिष्कृत करना, ऊँच–नीच के भाव को निरान्त आदि मुख्य विषय थे। ज्योतिबा के अनुसार जो समाज अपने पूर्वजों के महत्कार्यों का स्मरण नहीं करता उनकी कीर्ति को भुला देता है वह इतिहास की मशाल अपनी भावी संतति के हाथों नहीं सौप सकता। जो व्यक्ति अपने समाज के व्यतीत गौरव की याद नहीं करता वह भविष्य की सृजना नहीं कर सकता। सन् 1885 ई0 में पूना के हीराबाग नामक स्थान पर धन संग्रह के निमित्त एक सभा सतारा नरेश के आचार्य श्री गुरू महाराज साफल्कर की अध्यक्षता में हुई जिसमें ज्योतिराव ने भी शिवाजी के समाधि के निर्माण के लिये दान की अपील की। उस सभा में पूना के प्रायः सभी देशभक्त उपस्थित थे। सभा के विचारों से प्रभावित होकर थाना के कलेक्टर सिनक्लेयर ने शिवाजी की समाधि की मरम्मत अपने पैसो से करा दी। शासन ने भी थोड़ी बहुत सहायता की तथा 25 रूपये की लागत से समाधि के चारो ओर एक लोहे की छड़ी बाड़ा बना दिया। चार रूपया वार्षिक समाधि की मरम्मत के लिये शासन की ओर से निर्धारित किया गया। इसके पश्चात् ज्योतिराव इस सन्दर्भ में शान्त हो गये। किन्तु उनके सहयोगी तिलक आदि ने मिलकर अच्छी धनराशि संग्रह करके शिवाजी के

किले के स्तम्भ की मरम्मत कराई, उनकी स्मृति में एक मंदिर बनवाया तथा उत्सव मनाये जाने की स्थायी व्यवस्था की।

महात्मा ज्योतिराव फूले मानव जीवन की विविध समस्याओं का सर्वोत्तम समाधान शिक्षा को मानते थे। उनकी निर्भान्त धारणा थी कि निर्धन किसानों मजदूरों के अज्ञान अन्धविश्वास तथा अन्ध परम्पराओं को सर्वथा निराकृत करने का एक मात्र साधन शिक्षा है जिसका प्रचार–प्रसार छोटी जातियों में अधिकाधिक होना चाहिये। ज्योतिबा ब्रिटिश शासन की शिक्षा सम्बंधी ढुलमुल नीति की कटु आलोचना करते थे। उनका विचार था कि उच्च शिक्षा से समाज के छोटे वर्ग के लोगों को कोई लाभ नहीं। निर्धन लोग उपने बच्चों को कॉलेजो में धनाभाव के कारण नहीं भेज सकते थे। समाज के उच्च वर्ग के लोगों की शिक्षा का प्रबन्ध सरकार कर रही थी किन्तु ग्रामीण निर्धन जनता जो बाह्मणों से पीड़ित है उसके बालकों के लिये कोई ध्यान नहीं दिया जाता था। ज्योतिराव ने इस तर्क का कटुता पूर्वक खण्डन किया कि शिक्षा का आरम्भ ऊपर से होना चाहिये। वे शिक्षा को सार्वजनिक बनाने के पक्ष में समाज को कोई भी बालक अथवा बालिका अशिक्षित न रह जाये चाहे वह किसी भी जाति का हो। शिक्षा में एकरूपता होनी चाहिये। शिक्षा के सम्बन्ध में महात्मा ज्योतिराव फूले के अत्यन्त उपयोगी विचार थे। उनके विचार को हम क्रमबद्ध प्रस्तुत करना समीचीन समझते है। ज्योतिबा चाहते थे :–

(क) ग्रामीण शिक्षा के पाठ्यक्रम में मादी (गणित) और बाल बोध पुस्तकें पढ़ाई जानी चाहिये। बहीखाता, सामान्य इतिहास, सामान्य भूगोल तथा व्याकरण का प्रारम्भिक बोध छात्रों का कराया जाना चाहिये। कृषि प्राथमिक ज्ञान के लिये हर विद्यालय से एक छोटा कृषि फार्म सम्बध होना चाहिये।

(ख) प्राइमरी स्कूल तथा ऐंग्लोवर्नाक्यूलर स्कूलों की पाठ्य–पुस्तकों में दिये गये विषयों एवं सामग्री का पुनरीक्षण तथा संशोधन किया जाना चाहिये। क्योकि उनका पाठ्यक्रम छात्रों के जीवन के लिये किसी प्रकार उपयोगी अथवा लाभप्रद नहीं है। गाँव के प्राइमरी स्कूलों की फीस एक या दो आना मासिक होना चाहिये।

(ग) जहाँ तक विद्यालयों के लिये सरकारी निरीक्षण विभाग है वह दोषपूर्ण तथा अपर्याप्त है। डिप्टी इन्सपेक्टर विद्यालयों का निरीक्षण करने के लिये वर्ष में केवल एक बार जाते है जबकि हर तिमाही निरीक्षण की आवश्यकता है। निरीक्षण का समय बदल दिया जाना चाहिये तथा निरीक्षक बिना किसी पूर्व सूचना के विद्यालयों में जायें। निरीक्षण अधिकारियो को कई प्रकार के दायित्व दिये गये है जिसके कारण वो जब निरीक्षण करते अथवा परीक्षायें लेते है। तो समयाभाववश न्याय नहीं कर पाते। कभी–कभी अंग्रेज अधिकारियों को निरीक्षण के लिये जाना चाहिये। इससे अध्यापकों पर अच्छा नियन्त्रण रखा जा सकता है।

(घ) प्राइमरी स्कूलों की संख्या में तत्काल वृद्धि करनी चाहिये। इसके लिये निम्नलिखित उपाय हो सकते।

(1) गाँवो के ऐसे अध्यापकों का उपयोग किया जायें जो प्रशिक्षित है, नियमित शिक्षा प्राप्त है तथा विद्यालय चलाने की क्षमता रखते है।

(2) ग्रामीण क्षेत्र में वसूल किये गये सरकारी करों की आधी धन राशि नये प्राइमरी विद्यालय खोलने में व्यय की जाये।

(3) नगरों की म्यूनिसिपैलिटी को बाध्य किया जाये कि उनके क्षेत्र में पड़ने वाले प्राइमरी स्कूलों का रख रखाव वे करें।

(4) हर नगर की म्युनिसिपैलिटी सरकार से प्राप्त होने वाली सहायता तथा सरकारी कोष से प्राइमरी स्कूलों पर होने वाले सम्पूर्ण व्यय भार को स्वयं वहन करें किन्तु विद्यालयों का प्रबन्ध म्युनिसिपैलिटी को न सौपा जाये। विद्यालयों का निरीक्षण तथा प्रशासन शिक्षा विभाग के हाथ में होना चाहिये।

(5) जो माध्यमिक विद्यालय तथा अंग्रेजी स्कूल शिक्षा विभाग के नियमों एवं निर्धारित पद्वतियों के अनुसार चलते है उनका भी अर्थ भार म्युनिसिपैलिटी को वहन करना चाहिये। म्युनिसिपैलिटी पर यह कानूनी बाध्यता लगनी चाहिये।

(6) स्कूलों का आर्थिक हिसाब–किताब या तो सीधे शिक्षा निदेशक अथवा कलेक्टर के हाथ में होना चाहिये इसके अतिरिक्त यदि स्थानीय सुशिक्षित एवं सुयोग्य व्यक्ति उपलब्ध है तो उनके हाथों में सारे लेखा–जोखा का दायित्व दिया जा सकता है किन्तु इसका निरीक्षण शिक्षा निदेशक द्वारा ही होना चाहिये। अशिक्षित पंडित, इसका काम करने में असमर्थ और अयोग्य सिद्ध होते है।

(7) देहातों में जो थोड़ा बहुत मराठी जानने वाले बाह्मण विद्यालय खोल कर बैठ जाते है उनमें न तो योग्य अध्यापक होते है, स्कूलों में प्रशिक्षित अध्यापक नियुक्त किये जाने चाहिये तथा उनको भी पूरी आर्थिक सहायता प्रदान की जानी चाहिये।

(8) उच्च शिक्षा का प्रबन्ध सीधे सरकार के हाथ में होना चाहिये। जो उच्च विद्यालय किन्हीं उच्च वर्ग के लोगों द्वारा चलाये जाते है मात्र इसलिये उनकी सहायता नहीं बन्द की जानी चाहिये कि उनका प्रबन्ध एवं संचालन बड़े लोगों के हाथ में है। ऐसा करने से उच्च शिक्षा का प्रसार अवरूद्व हो जायेगा। इस सबका एक ही उपाय है कि समस्त उच्च शिक्षा सरकार को अपने हाथ में लेना चाहिये।

(9) प्राइमरी स्कूलों छात्रों के जीवन यापन में किसी प्रकार उपयोगी सिद्ध नहीं हो सकते है किन्तु विष्णु शास्त्री चिपलूणकर अथवा भाव द्वारा चलाये गये विद्यालयों को यदि पर्याप्त आर्थिक सहायता प्रदान की जाये तो इस दिशा में भी छात्रों के लिये अत्यन्त लाभकारी एवं उपयोगी सिद्ध हो सकते है।

(10) मिशनरी स्कूल या प्राइवेट स्कूल सरकारी हाईस्कूलों की तुलना में किसी भी दृष्टि से आकर्षक एवं उपयोगी नहीं ठहरते। उसका कारण है कि सरकारी हाईस्कूलों में अच्छे वेतन पर योग्य एवं अनुभवी अध्यापक नियुक्त किये जाते है जो प्राइवेट स्कूलों के लिये सम्भव नहीं है। इसका एक ही उपाय है कि प्राइवेट स्कूलों को पर्याप्त आर्थिक सहायता देकर वहाँ भी योग्य अध्यापको की नियुक्ति की जाये।

(11) हाई स्कूलों का पाठ्यक्रम इस प्रकार है कि उनमें शिक्षा प्राप्त करने वाले छात्रों को जीवन यापन में कोई सहायता नहीं मिलती। इन स्कूल में क्लर्क एवं अध्यापक तैयार किये जाते है वैसे अध्यापक जनसंख्या की दृष्टि से हाईस्कूलों की संख्या नगण्य है। उतने छात्र इन हाईस्कूलों में अवश्य तैयार हो जाते है जितनी कि सरकारी

नौकरियों के लिये आवश्यकता है यदि हाईस्कूल की शिक्षा का विस्तार एवं प्रसार सामान्य जनता तक किया जाता तो अवश्य ही इन स्कूलों के छात्रों की संख्या में अप्रत्याशित वृद्धि हो जाती। यह नितान्त वाँछनीय है कि हाईस्कूलों की शिक्षा भी जन सामान्य के लिये उन्मुक्त रूप से उपलब्ध करायी जानी चाहिये। इतना ही नहीं हाईस्कूलों का पाठ्यक्रम एवं पुस्तकों का प्रकाशन सरकार द्वारा किया जाना चाहिये तथा इसकी सूचना भी सरकारी गजट में प्रकाशित होनी चाहिये जैसा कि बंगाल और मद्रास में होता है।

इस प्रकार हम देखते है कि महात्मा ज्योतिराव छोटी जाति के केवल सामान्य शिक्षा प्राप्त होकर भी एक गम्भीर विचारक तथा व्यावहारिक बुद्धि रखने वाले महापुरूष थे। उनका हर विचार आचार में परिणत होता था। उन्होंने अपने जीवन में ऐसा कुछ नहीं सोचा या कहा जिसे उन्होंने करके न दिखाया हो। भाषाडम्बर से मुक्त शास्त्रीय उद्धरणों से निरपेक्ष उनके प्रखर विचारों में एक विलक्षण चुभन थी। जो उनके हर विचार को आचरण में ढाल देती थी। ज्योतिबा का मन निरन्तर सभी जातियों तथा सभी वर्गों के छात्रों को शिक्षित बनाने के लिये छटपटाता रहता था। वे चाहते थे कि ज्ञानार्जन के मौलिक मानवीय अधिकार से कोई देशवासी वंचित न रहें। उन्होंने बम्बई विश्वविद्यालय की भूरी–भूरी प्रशंसा करते हुये कहा था कि बम्बई विश्वविद्यालय के अधिकारी हमारी हार्दिक बधाई के पात्र है जिन्होंने हाईस्कूल (मेंट्रिकुलेशन अथवा एन्ट्रेन्स) की प्राइवेट परीक्षाओं को मान्यता होने के कारण आगे की उच्च कक्षाओं में प्रवेश ले सकते है। उन्होंने बम्बई विश्वविद्यालय के प्रबन्धकों से अनुरोध किया था कि एन्ट्रेन्स परीक्षा की भाँति ही वे बी0 ए0 तथा एम0 ए0 की प्राइवेट परीक्षाओं को भी मान्यता प्रदान करें जिससे कि गरीब किसानों एवं मजदूरों

के छात्रों को भी अपने घरों में तैयारी करके बी0 ए0, एम0 ए0 की मान्यता प्राप्त परीक्षाओं में सम्मिलित होने कर अवसर मिल सके। ऐसा न होने से एक निर्धन वर्ग उच्च शिक्षा से सदा–सदा के लिये वंचित रह जाता है– इससे सामान्य जनता को उच्च शिक्षा पर होने व्यय भार से मुक्ति भी मिल जायेगी। इसी प्रकार सरकारी छात्रवृत्ति दिये जाने पर भी गरीब छात्रों अथवा उनके परिवारों में उच्च शिक्षा के प्रति कोई आकर्षण नहीं उत्पन्न हो पाता। अतः इसके लिये आवश्यक है कि कुछ वजीफे ऐसे भी होने चाहिये जिनका आधार केवल निर्धनता हो तथा प्रतियोगिता की उनके लिये कोई आवश्यकता न हो। प्रतियोगिता मुक्ति छात्रवृत्तियों के अभाव में उच्च शिक्षा का सामान्य जनता में प्रसार नहीं हो पाता और समाज एक का बहुत बड़ा भाग उच्च शिक्षा प्राप्त करने से वंचित रह जाता है। ज्योतिबा ने अपने सार्वजनिक जीवन के आरम्भ से ही शिक्षा की समस्या पर गहन चिन्तन किया था। वे देश के जन मन को शिक्षा के माध्यम से मानसिक दास्ता से मुक्त कराने के पक्ष में थे। अपने शिक्षा सम्बन्धी विचारों का उपसंहार करते हुए ज्योतिबा ने शिक्षा आयोग से प्रार्थना की थी कि वह बालिकाओं की शिक्षा के लिये उदार पद्धति से प्राइमरी स्कूलों में ऐसी व्यवस्था करें जिसमें अमीर गरीब सभी वर्गो की बालिकाएं प्राइमरी स्कूलों में से शिक्षा ग्रहण कर सकें। ज्योतिबा ने अपनी पुस्तक 'कलटीवेटर्स हिप कार्ड' (किसानों का कोडा) में शिक्षा के सम्बंध में सरकार द्वारा गठित हण्टर कमीशन की आलोचना करते हुए लिखा है कि हण्टर कमीशन की रिपोर्ट से गरीब जनता का कोई कल्याण नहीं होने का। अशिक्षित, नादान, अज्ञान, भोली– भाली जनता की इस कमीशन ने सर्वथा उपेक्षा की है।

पूना म्युनिसिपैलिटी लगातार ज्योतिराव के विचारों प्रस्तावों तथा सुझावों से आन्दोलित रही। कहना चाहिये कि सदस्य के रूप में पूना

म्युनिसिपैलिटी में ज्योतिबा की उपस्थित तथा परामर्श से उसके प्रत्येक कार्यक्रम में तत्परता, सक्रियता तथा तीव्रता बनी रही। 30 अक्टूबर 1882 ई0 को म्यूनिसिपैलिटी में एक प्रस्ताव पशु चिकित्सा विज्ञान के लिये एक कॉलेज खेलने के लिये आया जिसका समर्थन करते हुए ज्योतिषा ने यह संशोधन प्रस्तुत किया कि सर्वप्रथम मद्रास म्यूनिसिपैलिटी से इस सम्बंध में परामर्श कर लिया जाये कि इस प्रकार के कॉलेज में कितना धन व्यय होगा क्या व्यवस्था होगी। ज्योतिबा का संशोधन स्वीकार कर लिया गया। इसी प्रकार प्राईमरी स्कूलों में छात्रवृत्ति में वृद्धि करने का प्रस्ताव आया उसमें भी एक संशोधन पेश हुआ जिसका ज्योतिबा ने पूर्ण समर्थन किया। म्यूनिसिपैलिटी में निमार्ण के लिये 3 लाख पच्चीस हजार रुपये से निर्मित होने वाले एक बाजार का प्रस्ताव आया किन्तु हरिराव जी चिपलूणकर तथा ज्योतिबा ने इस प्रस्ताव के संशोधन में कहा कि इतना धन मार्केट में बनाने में नहीं खर्च किया जाना चाहिये। एक लाख रुपया इसके लिये पर्याप्त है, शेष धन को गरीबों की शिक्षा पर व्यय किया जाना चाहिये। वाद विवाद के बाद दो लाख रुपया खर्च करने का प्रस्ताव बहुमत से पारित हो गया। केसरी पत्र ने ऐसे व्यय साध्य मार्केट बनाने का घोर विरोध किया किन्तु 1885 ई0 में देश के विशालतम बाजारों में एक पूना मार्केट बन गया। उसी समय प्रथम अंग्रेज कैथेलिक लार्ड रिपन भारत के नये वायसराय होकर आये। उन्होंने आते ही कई क्षेत्रों में व्यवस्था परिवर्तन के लिये नये सुधारात्मक ऐक्ट पास किये। इसी के साथ 28 मार्च 1883 ई0 को पूना म्युनिसिपैलिटी के निर्वाचन सम्पन्न हुए किन्तु ज्योतिबा ने इसमें भाग नहीं लिया। कुछ उच्च जाति के प्रपंचियों के सुझावों से ज्योतिषा के चुनाव क्षेत्र का ऐसा परिसीमन कर दिया गया कि वहा से चुनाव जीत ही नहीं सकते थे। महाराष्ट्र का दुर्भाग्य था कि निर्धन पीड़ितों

तथा दीन–हीनों का ताँता चुनाव में भाग ले सकें कुछ भी हो ज्योतिबा का तन इन समस्याओं में निरन्तर उलझा रहा। उसका नतीजा भी हुआ। हमारे आधुनिक पाठक देखेगें कि जो समाज सुधार तथा समाज कल्याण के कार्यक्रम ज्योतिबा द्वारा पूना तथा महाराष्ट्र की सीमा के भीतर संचालित हुए वहीं आगे चलकर समूचे देश के बहुआयामी कार्यक्रम का मेरूदण्ड बने तथा देश के बहुमुखी परिवर्तनों का मूलाधार भी प्रमाणित हुए।

महात्मा ज्योतिराव फूले ने 19वीं शताब्दी में उन महत्कार्यो कल्याणकारी आन्दोलनों का सृजनात्मक सूत्रपात किया जो कालान्तर में उस देश के सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक उन्नयन की प्रथम पीठिका बने। भारत के उपेक्षित, शोषित और दलित समाज के उत्थान जाति प्रथा की समाप्ति, शिक्षा के सम्यक प्रसार तथा किसानों मजदूरों की निर्धनता के निवारण के लिये उन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन ही अर्पित कर दिया।

छत्रपति शाहू जी महाराज के विचारों पर दयानन्द सरस्वती तथा महात्मा ज्योतिराव फूले के विचारों का प्रभाव पड़ा। शाहू जी महाराज ने ज्योतिराव फूले के 'सत्यशोधक समाज' तथा दयानन्द सरस्वती के आर्य समाज के सिद्धान्तों को आगे बढाने का कार्य किया।

दार्शनिक चिन्तन में सामाजिकता का समावेश

शाहू महाराज महात्मा फूले के सत्य शोधक समाज और आर्य समाज के मत प्रणाली के अनुसार प्रस्थापित सामाजिक ढाँचे में आमूल–चूल परिवर्तन लाना चाहते थे। अलगाव की भावना और अपने आपको दूसरों से श्रेष्ठ समझना यही जाति की भावना है। उसकी जगह समानता का भाव होना चाहिये। आँखें बंद करके धार्मिक पुस्तकों पर विश्वास का भाव न होकर उसका स्थान विचार स्वांतत्रय को मिलना चाहिये। भाग्य या कर्म को सर्वोपरि मानकर असहाय नहीं बनते, भाग्यविधाता का स्थान नैतिक शक्ति से आस्था को मिलना चाहिये। उसी तरह यह धारणा कि मनुष्य जीवन एक सपना है, माया है जिसके करण हमें इस संसार की बुराइयाँ गरीबी अत्याचार आदि सहन करना पड़ता है। इस धारणा का स्थान इस विचार को मिलना चाहिये कि मानव जीवन और गौरवपूर्ण है तथा मनुष्य जाति का भविष्य उज्जवल है अतः सभी लोगों को मानवता के सभी निसर्गदत्त अधिकार प्राप्त करने का पूरा हक है। अपने समाज की विकृत को त्यागने का केवल एक ही उपाय है हम इन वंचित विचारों के अनुसार अपने आप को ढालें और स्वयं प्रकाशित हों। समाजिक संस्थाओं को केवल से ही सुधार करने की आवश्यकता है कि वे पुराने विचारों के प्रभाव को निस्प्रभ कर नए विचारों और नई प्रवत्तियों की वृद्धिनुसार समाज परिवर्तन करें। संक्षेप में शाहू महाराज इन विचारों के अनुसार मनुष्य की बुद्धि को स्वतन्त्र कर और उसके सिद्धान्तों के स्तर को ऊँचा उटाकर उसे नया रूप देना, उसे पवित्र करना और उसे पूर्ण मनुष्य बनाना चाहते थे। यह शाहू जी का लक्ष्य, डा0 बाबा साहब भीमराव अम्बेडकर के 'एक व्यक्ति एक मूल्य' सिद्धान्त से मेंल खाता है।

बहुजन समाज के सर्व क्षेत्रीय उन्नति के लिए अपना लक्ष्य स्पष्ट करते हुए शाहूजी ने 1920 में कहा, ''महाराष्ट्र के अछूतों के साथ–साथ सभी पिछड़े हुए बहुजन समाज की उन्नति मेरा पवित्र जीवित कार्य है। इन लाखों किसान मजदूर भाइयों की सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक स्थिति में सुधार न होते, सरकार के राजनीतिक हक की भाषा का कौन सा प्रावधान है? और उसका अशिक्षित बहुजनों का क्या अर्थ समझ में आएगा, और उसका उपयोग भी क्या होगा। सरकार मुझे पदच्युत करने की धमकी दे रही है और किसकी कार्यवाही है यह मुझे मालूम है। मैं पदच्युत होने से पहले मेरे पद का इस्तीफा देकर अपने युवराज को तुरन्त उस पद पर बैठाऊँगा। लेकिन एक बार मैंने मेरा जीवित कार्य समझकर लिया हुआ बहुजन समाज के उत्थान का क्रान्ति आन्दोलन मेंरे प्राण जाने तक यह शाहू छोड़ेगा नहीं।'' अपने हृदय पूर्ति के दृष्टिकोण को स्पष्ट करते हुए उन्होंने आगे कहा, ''पीड़ितों को मदद अछूतों को सहायता और मराठा के पिछड़े हुए बहुजन समाज की उन्नति के लिये शक्तिपात होने पर मुझे निश्चित रूप से न्याय मिलेगा।''

महात्मा फूले ने कहा–महार, माँग, चमार आदि इनके पुरखे तथा हमारे पुरखे एक ही है। उन्हें समानता और मानवता का अधिकार देने से ही समाज और राष्ट्र का कल्याण हो सकता है। इन विचारों का समर्थन करते हुए शाहू जी ने 16–4–1920 को नासिक में दिये गये एक भाषण में कहा–हिन्दू धर्म में नहीं में जाति भेद के कारण जो विषमता आयी है इस प्रकार की जन्म से ही विषमता संसार में या अन्य किसी भी धर्म में नहीं है। इस जाति भेद का बहुत ही भद्दा स्वरूप यदि कही दिखायी देता होगा तो वह अन्य जाति के लोग अछूतो से जिस प्रकार व्यवहार किया करते है। उसमें दिखाई देता है। हमारे भाई होकर भी हम उन्हें अछूत

समझकर बिल्ली, कुत्ता, सुअर आदि से बदतर नीचता पूर्ण व्यवहार किया करते है यह शर्मनाक बात है। यह अछूत्ता अभी–अभी घोषित की है ऐसा दिखाई देता है। क्योकि नासिक जैसे पूज्य पवित्र स्थल में अनादि काल से ही महार लोगों का स्नान कुण्ड अन्य जातियों के कुडों के बीच में है। अर्थात वह जगत स्पशास्पर्श विधिनिषध रहना असम्भव है।

शाहू जी न केवल अपने विचार ही प्रदर्शित करते रहे बल्कि उन्होंने अपने रियासत में अछूत्ता का पालन दण्डनीय अपराध जैसा घोषित किया और उसका कड़ाई से पालन करने का निम्न आदेश जारी किया।

All officers of state revenue, judicial and general departments must treat the untouchables who entered the state service with kindnesas and equality. If any state officer has any objection to treat the untouchable according to the above order he will have to give notice of resaignation with in six weeks from the receipt of this order and resign the post.

शासकीय कार्यालयों के अतिरिक्त सार्वजनिक जगह और विशेष रूप से शिक्षा संस्थानों में जिसमें अछूतों की शिक्षा बिना कठिनाइयों से प्राप्त करना आसन हो इसलिये अस्प्रश्यता का पालन प्रणाली शासन के नियम के विपरीत या दुर्व्यव्हार घोषित करते हुए शाहू महाराज ने अपने 15 जनवरी 1919 के आदेश में तो करबीर सरकार के गजट पृष्ठ 46 दिनांक 23 अगस्त 1919 में प्रकाशित हुआ है आदेश देते है– शिक्षा विभाग और निजी संस्थानों या सरकारी संस्थानों को इमारत खेल के मैदान की मदद ग्रांट के रूप में की जाती थी वहा के लोगों का उच्चवर्णीय हिन्दूओं से भी ज्यादा अछूतों के साथ ममता और आदरयुक्त व्यवहार करना चाहिये। अछूतों को यह असाध्य होने से बचने का कोई रास्ता नहीं है। यदि अछूतों के साथ समानता का व्यवहार नहीं किया गया तो शिक्षा विभाग का प्राचार्य

या नीचे दर्जे का पाठक इन्हें स्पष्टीकरण देने का बाध्य होगा और जो निजी संस्थानों को रियासत में अधिक मदद दी जाती है वह बंद की जायेगी। उच्च वर्ग के व्यक्तियों में मनुस्मृति एवं अन्य धर्मग्रन्थों की रचना का अपने स्वार्थ के लिये समाज की परवाह कभी नहीं की जो तन्त्र एक ही वर्ग का स्वार्थ सिद्ध करने के लिये खड़ा किया गया हो वह अच्छा हो ही नहीं सकता है। यह शाहू जी महाराज पूर्ण रूप से जानते थे अतः वो मनुप्रणीत समाज व्यवस्था के कड़े विराधी थे और महात्मा फूले की जो समाज व्यवस्था अभिप्रेत थी वह प्रस्थापित करना चाहते थे। शाहू महाराज ने 20 मई 1920 को अखिल भारतीय बहिष्कृत समाज को सम्बोधित करते हुए कहा इस देश के मनुधर्म शासन के अनुसार एक ही जाति के प्राबल्य को स्थापित करने के कानूनों को नष्ट करना चाहिये और सभी लोंगो में समर समानता के अधिकारों को निर्मित करना अति आवश्यक है। सब लोगों के हक समान है सबके लिये एक जैसे ही कानून रहने चाहिये। जिसमें जाति के अनुसार कम ज्यादा दंड निर्धारित करना ऐसा अन्याय न हो।

महाराष्ट्र के वतनदार महारों का स्वरूप बन्धुवा मजदूरों जैसे था। इसके फलस्वरूप वे अपनी किसी भी प्रकार उन्नति नहीं कर सकते थे। अतः शाहू जी महाराज के अनुसार इन वतनों को जितनी जल्दी नष्ट किया जाये उतना ही आवश्यक समझते थे। इसलिये उन्होंने 1 अगस्त 1918 को एक अध्यादेश जारी कर दिया जिसमें उन्होंने कहा– **"यदि महार लोग अपने वतन रियासत में सम्मिलित करने के लिये आवेदन पत्र की तिथि से वतन से मजदूरी नहीं ली जायेगी। यदि कोई अपने बल पर इन लोगों से जबरन वतन मजदूरी लेगा उसे बिना पेन्शन सरकारी काम से मुक्त कर दिया जायेगा।"** शाहू महाराज महारों की दास्ता केवल इसी

प्रकार से नष्ट करने से सन्तुष्ट नहीं थे। उनहोंने दिनांक 18 सितम्बर 1918 को महारों को अपनी वतनी जमीन उन्हीं के नाम पर उन्हें दान स्वरूप दे दी और इस प्रकार महारों की दास्ता पूर्णतया नष्ट की लेकिन भारत सरकार ने 1976 में बंधुआ मजदूरी गैर कानूनी घोषित करने के पश्चात भी कोई ठोस कदम नहीं उठाये जबकि आज भी करोड़ों बन्धुआ मजदूर भारत में है स्त्रियों को मनुस्मृति के अनुसार एक योग की वस्तु समझकर उससे व्यवहार किया जाता था। केवल इतना ही नहीं उसका गुलामों जैसा कृय–विकृय भी किया जाता था और समाज में उसका स्थान पशु से भी निकृष्ट रखा गया था। उन्हें धर्मशास्त्रों के अनुसार चार अक्षर पढ़ने की अनुमति नहीं थी। लेकिन महात्मा फूले के क्रान्ति आन्दोलन से स्त्रियों को शिक्षा देना प्रारम्भ हुआ। अमानवीय व्यवहारों पर प्रतिबन्ध लगाने और उन्हें मानवता के अधिकार देने हेतु शाहू महाराज ने 22 अक्टूबर 1920 को उचित कानून बनाकर कार्यान्वित किया है। जिसमें हिन्दू विरासत अधिकार हिन्दू विवाह का कानून अविभक्त हिन्दू परिवार कानून हिन्दू सम्पत्ति का कानून आदि सम्मिलित है। उन्होंने स्त्रियों के संरक्षार्थ 29 जुलाई 1919 को तलाक सम्बंधी कानून जारी किया जिसे **"State Divorce Act of 1919"** कहा जाता था।

हिन्दू समाज की टूटन और असमानता के मूक्त में कतिपय ऐसे नियम और सिद्धान्त मनुवादी व्यवस्था के संचालन हेतु उच्च कुलीन वर्ग द्वारा स्थापित किये गये जो विश्व मानवता कोश में घोर अपराध और अन्याय रूप में परिभाषित होगें। उनमें से कुछ प्रमुख निम्न हैः–

1– ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र चार वर्गो में शूद्र पिछड़ी जातियों को माना गया। एक पॉचवा वर्ग भी है जिसे अतिशूद्र (अछूत) माना गया तथा वे किसी भी वर्ग में नही रखे गये अर्थात वे अवर्ण माने गये।

2— सभी जातियों और वर्णों में क्रमशः भेद रखा गया शूद्र से ऊँचा वैश्य, वैश्य से ऊँचा क्षत्रिय, क्षत्रिय से ऊँचा ब्राह्मण, बेचारा शूद्र सबसे नीचा माना गया।

3— शूद्र और अतिशूद्र सदैव ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य के दास रहेगें तथा उनकी सेवा करते रहेगें। गुलामी से इंकार करने पर कठोर दण्ड के पात्र होगे।

4— यदि उच्च कुल का व्यक्ति किसी शूद्र की स्त्री के साथ व्यभिचार करें तो उसे क्षमा कर दिया जायेगा यानि कोई दण्ड नहीं दिया जायेगा। किन्तु यदि भूल से किसी शूद्र का उच्च कुलीन स्त्री से अवैध सम्बंध हो तो उसे मृत्युदण्ड दिया जायेगा।

5— शूद्र और अतिशूद्रों किसी भी प्रकार के अस्त्र—शस्त्र नहीं रख सकेगें परन्तु यदि कभी देखने में आये तो वह दण्ड का पात्र होगा।

6— शूद्रों और अति शूद्र एवं सम्पूर्ण नारी समाज को वेद पठन श्रवण तथा शिक्षा से वंचित रहना होगा। यदि किसी शूद्र ने इस नियम का उल्लघन किया तो वह दण्नीय होगा।

7— शूद्र और अति शूद्र को किसी भी प्रकार की कोई सम्पत्ति रखने का अधिकार नहीं होगा। यदि कोई शूद्र ऐसा करता है तो उसकी जायदाद ऊँची जाति के द्वारा छीन ली जायेगी।

8 — यदि उच्च जाति का कोई भी व्यक्ति किसी शूद्र के मुहल्ले से होकर गुजरे तो शूद्र अपने दरवाजे पर जब तक खड़ा रहेगा जब तक वह व्यक्ति वहाँ से निकल न जाये।

9– यदि शूद्र या अतिशूद्र वेद पठन या श्रवण करते पायें जायेगें तो उसकी जीभ कटवा दी जायेगी। श्रवण करने पर कान में रांगा तपाकर डाला जायेगा ताकि वह भविष्य में कभी कुछ भी पढ़ न सकें न ही सुन सकें।

इन्हीं सभी घृणास्पद एवं अमानुषिक परम्पराओं में जकड़ें हुए हिन्दू समाज को परिवर्तन के लिये शाहू जी ने प्रेरित किया। उनके अनुसार द्वेष और घृणा के स्थान पर दोनों पक्षों के लिये स्नेह कल्याणकारी है। शाहू जी के अनुसार इस सृष्टि में अपने को ऊँचा और दुसरे को नीचा बनाने के उदेश्य से मानव–मानव में भेद करना किसी के लिये भी अक्षम्य नैतिक अपराध है।

अध्याय - 4

- शाहू जी महाराज का शिक्षा दर्शन।
- शिक्षा का अर्थ एवं स्वरूप।
- शिक्षा का उद्देश्य।
- शिक्षा एवं पाठ्यक्रम।
- शिक्षण पद्धति।
- शैक्षिक प्रशासन।

शाहू जी महाराज का शिक्षा दर्शन

छत्रपति शाहू जी की दृष्टि में गाँव और नगर में कोई अन्तर न था। उनके चिन्तन का लक्ष्य बड़े–बड़े नगरों को भी ग्रामीण जीवन के अनुरुप बनाना था। शाहू शिक्षा–दर्शन किसी सीमित क्षेत्र में था किसी सीमित वर्ग तक लागू होने का दर्शन नही है। इस प्रश्न पर पहले भी कई बार विचार हो चुका है और निर्णय यही हुआ है कि व्यापक रूप में उनके शैक्षिक दर्शन को अपनाया जाये।

अनुशासन की प्राप्ति के लिये अध्यापको को सचेत कर शाहू जी ने सबका मार्ग दर्शन किया है। आधुनिक शिक्षा–विद भी इस बात से सहमत है कि जब तक अध्यापक का चरित्र उज्जवल नही होगा और उनमें आत्म बल का विकास नही होगा तब तक वे बच्चों को अनुशासित नहीं कर सकते। बच्चों के साथ प्रेमपूर्ण और सहानुभूति का व्यवहार तो हर स्थिति में आवश्यक है ही, अध्यापक के विषय में शाहू जी का यह विचार मान्य है कि अध्यापकों को पूर्ण–निष्ठा के साथ एक समाज सेवक के रुप में कार्य करना चाहिये। गुरु–शिष्य के सम्बंध के विषय में भी उनके विचार सर्वथा सदपयोगी है। उन्होंने गुरु–शिष्य के सम्बंधों को मधुर स्नेहासिक्त विनम्र सौहार्दयुक्त एवं उदार बनाने की बात कही। आधुनिक शिक्षा में शाहू के इन विचारों को स्थान प्रदान कर शिक्षा जगत को उनके विचारो से लाभान्वित किया जा सकता है। आज जब कि सर्वत्र अनुशासन–हीनता व्याप्त है, गुरु–शिष्य के सम्बन्धों में प्रेम एवं सहानुभूति का अभाव है, अध्यापक अपने कार्य को मात्र आर्थिक स्वावलम्बन का आधार मान रहा है ऐसी स्थिति में शाहू जी के विचार आधुनिक शिक्षा के लिये उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं। यदि उन पर उचित–दृष्टिपात किया जाये और तदनुरुप

उनका क्रियान्वयन भी। पाठ्यचर्या में मातृभाषा को शिक्षा का माध्यम बना शाहू जी ने सोये भारत की आँखें खोल दी। आज यदि शिक्षा प्रशासकों एवं शैक्षिक नीति निर्धारकों ने मातृभाषा के महत्व को न समझा तो जन शिक्षा की कल्पना साकार नहीं कर सकते। अतएवं दिन–प्रतिदिन की पाश्चात्य शिक्षा की और बढ़ती हुई भारतीय शिक्षा के लिये शिक्षा का माध्यम मातृभाषा को मानना अति आवश्यक है। ताकि जन–जन का शिक्षा का प्रचार एवं प्रसार हो सके। शिक्षा के क्षेत्र में बच्चों को व्याक्तिगत रुचि, रुझान और योग्यताओं का आदर कर शाहू ने व्यापक दृष्टिकोण का परिचय दिया है। व्यक्ति और समाज दोनों के हितों का समान आदर आधुनिक शिक्षा के संदर्भ में अत्यन्त प्रासंगिक है क्योंकि जब तक उन दोनो के हितो का समान आदर न होगा तब तक शिक्षा प्रक्रिया सुचारु रुप से संचालित न होगी।

स्त्री–शिक्षा जन साधारण की शिक्षा, धार्मिक शिक्षा, सह–शिक्षा के संदर्भ में शाहू जी के विचार बहुत सुलझे हुए हैं। उनका यह विचार आधुनिक शिक्षा के सन्दर्भ में भी पूर्ण रुपेण प्रासंगिक है कि अशिक्षा ही कष्टों का कारण है और उसे दूर करने के लिये जन शिक्षा की आवश्यकता है। स्त्रियों को समाज में पुरुषों के बराबर स्थान देकर उनकी शिक्षा की व्यवस्था कर साथ ही साथ सह–शिक्षा का भी समर्थन कर शाहू जी ने समाज का बड़ा उपकार किया और अज्ञानता की ओर उन्मुख भारत को अवनति के गर्त से बचाया। आधुनिक शिक्षा में स्त्रियों को पूर्ण शिक्षित होने का अधिकार है और स्त्री शिक्षा को इस युग में बढ़ावा मिला है। आर्थिक अभाव के कारण सह–शिक्षा का समर्थन किया जा रहा है। अतएव शाहू जी के इन शैक्षिक विचारों की आधुनिक शिक्षा में प्रासंगिकता स्वतः सिद्ध हैं। धर्म विशेष की शिक्षा को पाठ्यचर्या से पूर्ण रुप से अलग किये

जाने के संदर्भ में शाहू जी के विचार बड़े समीचीन है। यह बात दूसरी है कि आज पुनः धार्मिक शिक्षा की बात सोची जाने लगी परन्तु आज भी शाहू जी के इन विचार को पूर्ण सहमति प्राप्त है कि मानव की सेवा ही सच्ची धार्मिक शिक्षा है। अतः यदि वर्तमान शिक्षा द्वारा को मनुष्य की सेवा के लिये तैयार किया जाये तो शिक्षा का उद्देश्य सार्थक हो सकता है। परन्तु यह बात भी सत्य है कि मनुष्य को मनुष्य की सेवा के लिये तैयार करने के लिये एक निश्चित विचारधारा देनी होगी और यह विचारधारा धर्म ही दे सकता है। शाहू जी शिक्षा के क्षेत्र में बालक के सामाजिक और पारिवारिक परिवेश को महत्व प्रदान करते हुए उसे हर स्थिति में ऐसे विद्यालयों में प्रवेश करने की अनुमति दी कि वह हस्तशिल्प द्वारा ही शिक्षा ग्रहण करे चाहें वह जिस परिवेश से सम्बन्ध रखता हो। परीक्षा पद्धति के संदर्भ में उन्होंने वर्तमान परीक्षा प्रणाली की आलोचना की और आन्तरिक परीक्षा का समर्थन किया तथा कहा कि विद्यार्थी की परीक्षा तो क्षण प्रतिक्षण होती रहती हैं। उसके लिये किसी बाहय परीक्षा ,मासिक परीक्षा की आवश्यकता नहीं। वर्तमान शिक्षा में शाहू जी के प्रवेश से सम्बन्धित नियमों को पूर्ण रुपेण मान्यता नहीं दी जा रही है तथापि यदि बेरोजगारी की समस्या का समाधान करना है तो हस्तशिल्प का आश्रय ले। इस समस्या से त्राण पाया जा सकता है। वर्तमान परीक्षा छात्रों की मात्र रटने और लिखने की शक्ति का मापन करती है, यदि आधुनिक शिक्षा–व्यवस्था शाहू की परीक्षा पद्धति का समर्थन करे तो अनेक समस्याओं का निदान, पा सकती है। अतएव प्रवेश एवं परीक्षा के संदर्भ में शाहू के विचार कुछ हद तक आधुनिक शिक्षा के लिये उपयोगी हो सकते है।

अन्त में यह कहना पर्याप्त होगा कि शाहू जी का शिक्षा दर्शन, उनके जीवन–दर्शन या नैतिक समाजिक और आर्थिक दर्शन से अलग

नहीं समझा जा सकता। जिस प्रकार जीवन के विभिन्न क्रिया—कलापों को विभाजित नहीं किया जा सकता उसी प्रकार उनके शिक्षा दर्शन को जीवन—दर्शन से अलग नही किया जा सकता। यही एक मूल बात ऐसी है जो शाहू जी को अन्य महापुरुषों से प्रथक रखती है क्योंकि जिस समग्रता से शाहू जी ने जीवन को देखा उस समग्रता से अन्य किसी ने नहीं। गाँधी, अरविन्द, टैगोर, दयानन्द, ये सभी महापुरुष अपने में महान थे किन्तु जीवन की व्यापकता और समस्त मानवता को अपनी दृष्टि में रखने में शाहू जी बेजोड़ थे। पाश्चात्य जगत में प्राचीन काल से लेकर आज तक अनेक दार्शनिको ने शिक्षा का दर्शन किया शैक्षिक विचारों को प्रसारित किया किन्तु ये सब अपनी परिस्थितियों और सीमाओं से जुड़े हुए थे और समाज को शाश्वत मूल्यो पर आधारित और यदि शाश्वत मूल्यों का उल्लेख न किया जाये तो सर्वभोम मानव—मूल्यों पर आधारित शिक्षा दर्शन न दे सकें। सुकरात, प्लेटो, अरस्तू, फ्रायड, डारविन ये सब ऐसे महापुरुष थे जिन्होंने जीवन दर्शन पर आधारित शैक्षिक विचार देने का प्रयास किया इसमें से कई लोगों ने यातनाये भी सहीं किन्तु शैक्षिक विचारो को जीवन दर्शन व्यावहारिक रूप अथवा क्रियात्मक रूप न दे सकें। अर्थात अपने जीवन दर्शन को अपने आचरण में उस सीमा तक अवतरित न कर सके जिस सीमा तक शाहू जी ने किया था।

सत्य और अंहिसा पर आधारित समाज रचना शिक्षा के द्वारा ही सम्भव है। शिक्षा आजीवन चलने वाली प्रक्रिया है। इसलिये मनुष्य के पूरे व्यक्तित्व और समाज से एक रूप हो जाती है। पूरा समाज शिक्षा पर केन्द्रित है और शिक्षा समाज पर। इस आदर्श को प्राप्त करना कठिन है यह शाहू जी भी जानते थे किन्तु वे बार—बार यही कहते थे कि मनुष्य इस जगत में पूर्णतौर से पूर्णतः को प्राप्त नही कर सकता किन्तु अपूर्णता से

पूर्णता की और अग्रसर होने का प्रयास छोड़ा नही जाना चाहिये। शाहू जी के शैक्षिक विचारों को सार रूप में यदि देखा जाये तो यह शरीरिक रूप पर आधारित एवं सरल और सारे जीवन के निर्माण की प्रक्रिया है। राजनैतिक अर्थ और नैतिकता की दृष्टि से उसका आधार अर्थशास्त्र नहीं है। शाहू जी के शैक्षिक विचार मन, वचन और आवरण का समन्वय है, उसमें व्यक्ति और समाज का समन्वय है, उसमे अन्त और बाह्य जगत का एकीकरण है, उसमे धर्म की सच्ची परिभाषा है। समाजोपयोगी लाभ से रहित उत्पादक कार्य में हर व्यक्ति को लगना, हर व्यक्ति को उत्पादक और उपभोक्ता बनना यह शाहू जी के शैक्षिक विचारों का प्रमुख सूत्र है। यह समझना भूल होगी कि काम का समन्वय जीवन और शिक्षा से होना अप्रासंगिक है।

प्रत्येक दर्शन में भविष्य की दृष्टि होती है। जब शाहू जी जीवन–दर्शन या शिक्षा–दर्शन की बात सोचते थे तो वर्तमान की वास्तविकता और भविष्य का स्वप्न दोनों ही उनके सामने रहते थें शिक्षा का स्वरूप वर्तमान समस्याओं के समाधान के लिये भी होता है और भविष्य के निर्माण के लिये भी। 'यूनाइटेड नेशिन्स पापुलेशन फंड' की जो रिपोर्ट 'द स्टेट आफ वर्ल्ड पापुलेशन 1990' शीर्षक से यह स्पष्ट है कि इस शताब्दी के अन्त तक गरीबी की रेखा के नीचे गरीब देशों में आबादी 45 करोड़ से 53 करोड़, स्कूली शिक्षा से वंचित बच्चों की संख्या 33 करोड़, से साढे 39 करोड़, निरक्षरों की संख्या 74 से 90 करोड़ हो जायेगी। इस भयावह का सामना शिक्षा के लिये एक चुनौती है और इस चुनौती का समाधान शाहू जी के शैक्षिक विचारो से प्राप्त हो सकता है। प्रश्न यह है कि बावजूद सही चिन्तन से देश के तत्वदर्शी महापुरूषों के द्वारा शिक्षा में सुधार क्यों नही होता? उसका प्रमुख कारण है कि चिन्तन और आचरण,

सिद्धान्त और व्यवहार में, ज्ञान और कर्म मे बड़ा अन्तर आ गया है। जब तक शाहूजी के शैक्षिक विचारों को अपनाकर देश में चिन्तन और आचरण सम्बन्धी व्यवधान को दूर कर आधुनिक शिक्षा व्यवस्था मे परिवर्तन नहीं होगा तब तक शिक्षा की दृष्टि से देश का भविष्य अनिश्चित है।

शिक्षा का अर्थ एवं स्वरूप

शिक्षा शब्द से हम सब परिचित है। जानते है कि यह हमारे जीवन के लिये परम आवश्यक है। इसके द्वारा हमारे व्यवहार में परिवर्तन होता है और हम सभ्य एवं सुसंस्कृत बनते है इसके अभाव मे हम पशु से अधिक और कुछ नही बन सकते।

शिक्षा मनुष्य की जन्मजात शक्तियों का विकास कर उनके आधार पर उसे अपने उद्देश्यों की प्राप्ति करने योग्य बनाती है। इस प्रकार हमारे जीवन के जो उद्देश्य होते है, शिक्षा हमें उन्ही की प्राप्ति कराती है। यदि हम मनोवैज्ञानिक दृष्टि से देखे तो शिक्षा मनुष्य की जन्मजात शक्तियों का विकास करती है, सामाजिक दृष्टि से वह उसका समाजीकरण करती है, अर्थात उसमें सामाजिक गुणों का विकास करती है, राजनीतिक दष्टि से वह उसे राष्ट्र का सुयोग्य नागरिक बनाती है और धार्मिक दृष्टि से वह उसे पशु से देवत्व की ओर ले जाती है ।

मानव कुछ शक्तियाँ लेकर जन्म लेता है और उसका सारा व्यवहार इन शक्तियों पर आधारित होता है। शिक्षा का सर्वप्रथम कार्य इन शक्तियों का विकास करना है। पर जन्मजात शक्तियों का विकास तो पशु–पक्षियों मे भी होता है। मनुष्य मे यह व्यक्ति और समाज दोनो के हितों को सामने रखकर किया जाता है।

शिक्षा का कार्य मनुष्य की जन्मजात शक्तियों का विकास, मार्गान्तीकरण और उदान्तीकरण करना है। अब यह कार्य मनुष्य और समाज के किन हितों को सामने रखकर किया जायें, यह समय विशेष की मान्यताओं, आवश्यकताओं और आकांक्षाओं पर निर्भर करता है। इनमें जो

सार्वभौमिक और सर्वकालिक कार्य है वे है मनुष्य की शारीरिक, मानसिक, चारित्रिक तथा नैतिक विकास करना।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है वह अकेला नही रह सकता। समाज में रहने के लिये यह आवश्यक है कि उसमें सामाजिक गुणों का विकास किया जाये, उसे समाज की भाषा, रहन–सहन,खान–पान,व्यवहार के तरीके और रीति रिवाज आदि का ज्ञान हो तथा वह उसी के अनुसार व्यवहार करे। इसे दूसरे शब्दों मे समाजीकरण कहते है। अब चाहें जैसा समाज हो, उसमे कुछ भी मूल्य और मान्यतायें हो उसमें रहने के लिये उसके सदस्यों का उसी के अनुसार समाजीकरण अवश्य होना चाहिये। बिना इसके कोई मनुष्य जीवन व्यतीत नही कर सकता। शिक्षा मनुष्य के जीवन में यह कार्य भी करती है।

शरीर जन्मजात शक्तियों और मस्तिष्क मनुष्य विकास के आधार होते है एवं उसकी सभ्यता और संस्कृति उसके विकास के साधन। मानव जाति की भौतिक उपलब्धियाँ उसकी सभ्यता कहलाती है और इन उपलब्यिों के प्रति भावात्मक संगठन को उसकी संस्कृति कहते है। अब किसी समाज, जाति अथवा राष्ट्र की कैसी भी सभ्यता और संस्कृति हो, उसे अपने निरन्तर विकास के लिये उसे सुरक्षित रखना होगा और उसमें अपने अनुभव विचार और आकांक्षायें जोड़ कर आने वाली पीढ़ी को हस्तान्तरित करना होगा। यह कार्य हम शिक्षा के द्वारा ही करते है।

पशु–पक्षियों की आवश्यकतायें बड़ी सीमित है या यह कहिये कि उन्होंने कोई विकास ही नहीं किया है। उन्हें जीने के लिये केवल भोजन और आवास चाहिये, और यह वह प्रकृति से ही प्राप्त कर लेते है। लेकिन मनुष्य की आवश्यकतायें असीमित और विविध प्रकार की है। इन

आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वे उत्पादन करते है, उद्योग और भिन्न–भिन्न व्यवसाय करते है। किसी देश की भौतिक श्री उस देश के उत्पादन, उद्योग और व्यवसाय पर ही निर्भर करती है। सदैव से ही सभी जातियों, समाजों और राष्ट्रों को इसकी आवश्यकता रही है और यह कार्य उन्होंने शिक्षा द्वारा किया है।

शिक्षा मनुष्य को वस्तुओं के विभिन्न रूप और उनके निर्माण की तकनीक और विधियो से परिचित कराती है। और उन्हें विविध व्यवसायों के लिये प्रशिक्षित करती है।

डा0 राधाकृष्णन् के शब्दों मे, ''छात्रों को जीविका उपार्जन करने में सहायता देना शिक्षा का एक कार्य है।''

स्वामी विवेकानन्द जी ने भी देश की गरीबी, भुखमरी और विभिन्न प्रकार के कष्टों को दूर करने के लिये ऐसी शिक्षा की आवश्यकता पर बल दिया था जो हमें रोजगार दे और आत्मनिर्भर बनायें, उनके अपने शब्दो में, ''केवल पुस्तकीय ज्ञान से काम नहीं चलेगा हमें उस शिक्षा की आवश्यकता है जिससे कोई व्यक्ति अपने पैरों पर खड़ा हो सके।''

शिक्षा मनुष्य को अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिये उसे विभिन्न व्यवसायों, उत्पादन कार्यों और उद्योग कार्यों का प्रशिक्षण देती है और विशिष्ट योग्यता प्रदान करती है।

स्वास्थ्य रक्षा के लिये डॉक्टरों का निर्माण, मकान और कपड़ों को सुन्दर और अच्छा बनाने के लिये इन्जीनियरों का निर्माण, शिक्षा की प्रक्रिया को सुचारू रूप से चलाने के लिये शिक्षकों का निर्माण, कानून की रक्षा के लिये वकीलों का निर्माण, देश की व्यवस्था चलाने राजनीतिक

संगठनों का निर्माण आदि कार्य शिक्षा ही सम्पन्न करती है। इसके लिये प्रयोग और शोध को प्रोत्साहन देती है।

वास्तविक रूप मे शिक्षित पुरूष अपनी विशिष्ट योग्यताओं से क्षेत्र विशेष की समस्याओं के समाधान के लिये सदैव प्रयत्नशील रहता है। वह विभिन्न वस्तुओं और शक्तियों को मानव के लिये उपयोगी बनाने के लिये सदैव प्रयत्नशील रहता है। मनुष्य अपनी इस प्रवृत्ति के कारण ही भौतिक और आध्यात्मिक दोनों क्षेत्रों मे इतनी अधिक प्रगति कर सका है और उसी के कारण वह आज भी प्रगतिशील है। शिक्षा के अभाव में यह सब असम्भव है।

कुछ लोगो का विचार है कि मनुष्य चाहे जितनी भौतिक उपलब्धियाँ कर लें और चाहें जितना सुधार कर ले अपने जीवन की कला में, लेकिन वह वास्तविक सुख और शान्ति का अनुभव तब तक नही कर सकता, जब तक कि उसमें आध्यात्मिकता का विकास नहीं किया जाता है। शिक्षा यह कार्य भी करती है, कही औपचारिक और अनौपचारिक दोनों रूपों मे और कहीं केवल अनौपचारिक रूप में ही। शिक्षा हमें आत्म ज्ञान कराती है और परमात्मा तक पहुँचने के लिये हमारा मार्ग प्रशस्त करती है।

किसी भी राष्ट्र में शिक्षा मानवीय जीवन में जो कार्य करती है उससे वह राष्ट्र प्रभावित होता है। प्रत्येक नागरिक राष्ट्र की एक इकाई होता है। उसका स्वास्थ्य राष्ट्र का स्वास्थ्य होता है, उसका चरित्र राष्ट्र का चरित्र होता है,उसके नैतिक व्यवहार से राष्ट्र का नैतिक स्तर निश्चित होता है। उसकी योग्यता राष्ट्र की योग्यता होती है, उसकी उत्पादन शक्ति राष्ट्र की उत्पादन शक्ति होती है और उसकी भावना राष्ट्र की भावना होती है।

इस प्रकार शिक्षा मानव जीवन में जो कार्य करती है उससे अप्रत्यक्ष रूप से राष्ट्र भी प्रभावित होता है। राष्ट्र की दृष्टि से शिक्षा किसी राष्ट्र में उसकी मान्यतानुसार श्रेष्ठ नागरिकों का निर्माण करती है।

यह तो सभी राष्ट्र चाहते है। कि उनके नागरिक स्वस्थ, उत्तम चरित्र वाले, ईमानदार, परिश्रमी, कर्मनिष्ठ और राष्ट्र भक्त हों। शिक्षा इस प्रकार के नागरिक तैयार करती है। शिक्षा नागरिको को उनके अपने कर्त्तव्यों और अधिकारों का ज्ञान कराती है और उन्हें अपने अधिकारों की रक्षा करने और कर्त्तव्यों का पालन करने की सामर्थ्य प्रदान करती है। उचित शिक्षा के अभाव में हम स्वस्थ एवं चरित्रवान नागरिकों का निर्माण नही कर सकते है।

लोकतन्त्र शासन प्रणाली वाले देशों में प्रत्येक नागरिक के समान अधिकार होते हैं वह अपने लिये स्वयं सरकार बनाता है, स्वयं नियम बनाता है और इन नियमों का स्वयं पालन करता है।

यह सब कार्य सुचारू रूप से हो, इसके लिये लोकतंत्र में नेतृत्व करने वाले अच्छे नागरिकों का निर्माण शिक्षा द्वारा किया जाता है।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, बिना समाज के सहयोग के न तो वह सुखपूर्वक जी सकता है और न विकास कर सकता है। एकतन्त्र शासन प्रणाली वाले देशों में व्यक्ति को राष्ट्रहित के लिये शिक्षा द्वारा इस दृष्टि से तैयार किया जाता है कि राज्य उचित और अनुचित जो कुछ भी करे उसमें प्रत्येक नागरिक का सहयोग हो वे राष्ट्र के वफादार नागरिक हों।

कोई एक मनुष्य सब प्रकार के कार्य सम्पादित नहीं कर सकता। इसलिये प्रत्येक राष्ट्र में शिक्षा क्षेत्र–विशेषों के लिये विशेषज्ञ तैयार करती है। खाद्य उत्पादन को बढ़ाने के लिये कृषि की शिक्षा, प्राकृतिक वस्तुओं के प्रयोग के लिये विज्ञान और इंजीनियरिग की शिक्षा,. स्वास्थ्य सुधार के लिये डॉक्टरो की शिक्षा की प्रक्रिया को सुचारू रूप से चलाने के लिये अध्यापक प्रशिक्षण आदि इसी उद्देश की पूर्ति के लिये किये जाते हैं। क्षेत्र विशेष में विशिष्ट योग्यता प्राप्त व्यक्तियों के अभाव में आज के समाज को समझा ही नहीं जा सकता इसलिये प्रत्येक राष्ट्र में शिक्षा द्वारा विशेषज्ञों का निर्माण किया जाता है।

प्रायः सभी राष्ट्रों में भिन्न–भिन्न जाति और धर्म के लोग रहते है। उनके रहन–सहन, खान–पान और जीवन–यापन के तरीके भी भिन्न होते हैं। और इस कारण वे एक–दूसरे से अलग से रहते है। हमारे देश में यह सब विभिन्नतायें अपनी चरम सीमा पर हैं। जाति की भिन्नता, धर्म की भिन्नता, प्रान्तीय भिन्नता और सांस्कृतिक भिन्नता इस सभी के कारण हम एक दूसरे से भिन्न से लगते है और परिणामतः एक–दूसरे से अपने को अलग समझते है।

शिक्षा इन सब विभिन्नताओं के होते हुए भी किसी राष्ट्र के नागरिकों को एक भावात्मक संगठन में बाँधने का प्रयत्न करती है।

शिक्षा राष्ट्रीय भावना के विकास का सबसे बड़ा साधन है। उसकी इस शक्ति को सभी शिक्षाशास्त्री एक मत से स्वीकार करते हैं। राष्ट्रीय भावना का विकास शिक्षा का एक सार्वभौमिक एवं सर्वकालिक कार्य हैं। यदि हम अपने देश की बात सोचें तो इस समय हम जाति, धर्म, संस्कृति और प्रान्त के नाम पर लड़ रहे हैं। इससे देश की अखण्डता और

स्वतन्त्रता दोनों खतरे में पड़ सकती है। अतः राष्ट्रीय एकता का विकास आवश्यक है।

इस सन्दर्भ में डॉ0 राधाकृष्णन के शब्द उल्लेखनीय है। उनके शब्दों में–"यदि भारत स्वतन्त्र संगठित और लोकतन्त्रीय रहना चाहता है तो शिक्षा को लोगों की एकता के लिये न कि क्षेत्रीय के लिये और लोकतन्त्र के लिये न कि तानाशाही के लिये प्रशिक्षित करना चाहिये।"

यह तभी सम्भव है जब हम में राष्ट्रभाषा, राष्ट्रधर्म, राष्ट्रध्वज, राष्ट्रीय नियम और कानून और राष्ट्र की विभिन्न सभ्यता और संस्कृतियों के प्रति अटूट प्रेम और श्रद्धा का भाव भरा हो।

शिक्षा इस कार्य को पूरा करती है। शिक्षा के कुछ कार्य ऐसे है जो वह सब देशों में और सभी समय सामान्य रूप से करती है। इन्हें शिक्षा के सामान्य कार्य कहा जाता है। इसके अन्तर्गत मुख्य रूप से मनुष्य की जन्मजात शक्तियों का विकास उसका उदान्तीकरण और मार्गान्तीकरण मनुष्य के व्यक्तित्व का विकास अर्थात उसका शारीरिक, मानसिक सामाजिक, चारित्रिक और नैतिक विकास मनुष्य को किसी व्यवसाय उद्योग अथवा उत्पादन कार्य में निपुण करना समाज की सभ्यता और संस्कृति की सुरक्षा आदि आते हैं।

शिक्षा के विशिष्ट कार्यों के अन्तर्गत वे कार्य आते हैं जो देश विदेश की परिस्थितिनुकूल बदलते रहते हैं। उदाहरण के लिये शारीरिक विकास का कार्य तो सामान्य कार्य है पर कब कितना और किस प्रकार का शारीरिक विकास करना है यह शिक्षा का विशिष्ट कार्य होता है। भावात्मक एकता और राष्ट्रीय एकता के विकास से राष्ट्रभक्त नागरिक का निर्माण

होता है पर केवल भावना से कोई राष्ट्र अपनी सुरक्षा नही कर सकता इसके लिये आत्मनिर्भर होना होता है।

संसार के अन्य राष्ट्रों की प्रगति के साथ साथ प्रगति करनी होती है। और आवश्यकता पड़ने पर युद्ध के लिये तैयार रहना पड़ता है।

इस सत्य को सामने रखकर शिक्षा राष्ट्र के उत्पादन, उद्योग और व्यवसाय को बढावा देती है।

राष्ट्र की रक्षा के लिये मर मिटने की भावना का विकास करती है और युद्व के लिये आवश्यक सामग्री का निर्माण करने के लिये हमें प्रशिक्षित करती है।

संक्षेप में हम यह कह सकते है कि शिक्षा राष्ट्र को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष दोनों रूपों में प्रभावित करती है। मानव जीवन के विकास के लिये वह जो कार्य करती है उससे अप्रत्यक्ष रूप में उस राष्ट्र का हित होता है। प्रत्यक्ष रूप में वह राष्ट्र के लिये योग्य नागरिक का निर्माण करती है। उनमें नेतृत्व शक्ति का विकास करती है उन्हें सामाजिक कुशलता प्रदान करती है। राष्ट्र की सर्वतोन्मुखी उन्नति के लिये विशेषज्ञों का निर्माण करती है। भावात्मक एकता का विकास करती है और नागरिकों को इस योग्य बनाती है कि सफल होते है। जिस देश में शिक्षा यह कार्य नही करती उसका पतन अवश्यम्भावी होता है।

किसी राष्ट्र की शिक्षा से न केवल वह राष्ट्र और उस राष्ट्र के नागरिक प्रभावित होते है। अपितु उससे सारे संसार पर प्रभाव पड़ता है। एक राष्ट्र की अच्छाइयों एवं बुराइयों का प्रभाव दूसरे राष्ट्रों पर शीघ्र पड़ता है हम देश विदेश के समाचारों एवं उनकी प्रगतियों से प्रभवित हुए बिना

नही रहते। अब शिक्षा के द्वारा हम एक राष्ट्र को दूसरे राष्ट्रों की सभ्यता एवं संस्कृति से परिचित कराते है और एक दूसरे की आवश्यकताओं की अनुभूति करा कर एक दूसरे को उनकी पूर्ति करने की प्रेरणा प्रदान करते है। इतना ही नही अपितु संसार के जो क्षेत्र पिछड़े हैं उन्हें आगे बढ़ने के लिये वहाँ के नागरिकों की शिक्षा का प्रबन्ध करते है संसार के सभी मनुष्यो को एक संवेगात्मक संगठ्न में बाँधना आज शिक्षा का सबसे बड़ा कार्य है।

शिक्षा विहीन मनुष्य अधूरा और अपूर्ण होता है बिना शिक्षा के न तो नैतिकता का बोध होता है और न भौतिक जगत का। शिक्षा ही ज्ञान का आदि स्त्रोत तथा ज्ञान ही शक्ति और समृद्धि का मूल आधार है जिस देश में शिक्षा का अभाव है उस देश का शासन पंगु होता है वस्तुतः सुदृढ़ शासन का मुख्य आधार ही शिक्षा है।

इन्ही विचारों से प्रेरित छत्रपति शाहू जी ने अपना ध्यान अशिक्षितों की शिक्षा पर केन्द्रित किया और अशिक्षितों की शिक्षा मे उनका क्या योगदान रहा यह जानकारी हेतु वर्तमान समय में मुझे इस अध्ययन की आवश्यकता हुई।

शिक्षा का उद्‌देश्य

शिक्षा राष्ट्रीय समृद्धि और कल्याण की कुंजी है। बिना किसी हिंसात्मक क्रान्ति के बड़े पैमाने पर परिवर्तन करने का एक मात्र साधन शिक्षा है। अतः आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में तेजी लाने और सामाजिक नैतिक तथा आध्यात्मिक मूल्य विकसित करने के लिये शिक्षा का विकास होना आवश्यक है।

शिक्षा एक व्यापक शब्द है। शिक्षा की कोई सीमा नहीं होती है। इसका वास्तविक अर्थ है बालक की जन्मजात शक्तियों का सम्पूर्ण विकास करना है न कि ज्ञान को बलपूर्वक ठूसना। इस कार्य के लिये विद्यालयों की स्थापना शाहू जी महाराज द्वारा की गयी जिससे समाज के सदस्यो को शिक्षित किया जा सके योग्य बनाया जा सके ताकि वे समाज की उन्नति में योगदान कर सके। विद्यालयों की यह योजना विशिष्ट उद्देश्यों की पूर्ति के लिये बनायी गयी।

स्कूल समाज के प्रकाश गृह है। प्रत्येक दिन बालक अपने घरों से उस गृह में रोशनी लेने जाते है और उस प्रकाश से अपने घरों को प्रकाशित करते है। स्कूल बालक के लिये नही बल्कि सम्पूर्ण समाज की शिक्षा का एक महान स्त्रोत हैं।

इसी कारण छत्रपति शाहू जी ने मुख्यतः प्राथमिक शिक्षा का प्रचार प्रसार करने का प्रयास किया। क्योकि प्राइमरी शिक्षा ही सभी शिक्षा का आधार है। बिना प्राइमरी शिक्षा ग्रहण किये उच्च शिक्षा ग्रहण कर पाना असम्भव हे। इसी कारण शाहू जी ने निम्न वर्ग के लिये निशुल्क प्राइमरी शिक्षा अनिवार्य कर दी थी जब केसरी ने शाहू जी के प्राथमिक शिक्षा के

कार्य को गलत कह दिया था, तब शाहू जी ने कहा था, ''कि हम सभी को केक तो नही दे सकते है फिर भी सभी को रोटी तो दे सकते है।''

नासिक में मराठा आवासीय विद्यालय की स्थापना के अवसर पर शाहू जी ने कहा, ''परशुराम के समय का इतिहास हमें बताता है कि किस प्रकार से उच्च कुल के व्यक्तियों के विचारों को समझना कितना कठिन है। किस प्रकार से वे अपनी जाति के लोगों को शिक्षा देने तथा दूसरी जाति के व्यक्तियों को दासता से बाँधे हुए शिक्षा से दूर रखते है।''

शिक्षा एवं पाठ्यक्रम

छत्रपति शाहू ने निःशुल्क अनिवार्य प्राइमरी शिक्षा अपने छोटे सिद्धान्तों से प्रारम्भ की। इसकी सूचना इस प्रकार जनमानस को दी गयी।

छत्रपति शाहू जी के अनुसार, ''निःशुल्क अनिवार्य शिक्षा का प्रारम्भ विशालगढ़ में किया गया। लेकिन यह योजना नागरिको के निरक्षर होने के कारण ज्यादा सफल नही हो सकी तथा छात्रों की संख्या में अपेक्षत वृद्धि नही हो सकी।''

छत्रपति शाहू ने यह जानने का प्रयास किया कि लोगो के अन्दर शिक्षा का प्रचार व प्रसार क्यों नही हों रहा है। उन्होंने विचार किया कि यदि अध्यापकों की मासिक तनख्वाह बढ़ा दी जाये तो उन्हें अपेक्षित सफलता मिल सकती है। इसी कारण उन्होंने 8 सितम्बर 1917 को प्राइमरी अध्यापकों की तनख्वाह 7 रू0 से बढ़ाकर 9 रू0 कर दी। इसका एक अभूतपूर्व–परिणाम सामने आया कि प्राइमरी शिक्षा को ग्रहण करने के लिये व्यक्ति अग्रसर हुए।

निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा–

25 जुलाई 1917 को कोल्हापुर दरबार में बहुत महत्वपूर्ण निर्णय लिया गया जिसने कि शिक्षा के क्षेत्र मे क्रान्ति ला दी। निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा की घोषणा उस वर्ष गणेश महोत्सव के प्रथम दिन 30 सितम्बर 1917 को की गई थी। यह घोषणा मुख्य अधिकारी श्री भास्कर राव जाधव द्वारा की गयी थी। छत्रपति शाहू ने इस पर कार्य करने के लिये राव बहादुर, हरी करमाकर, कृष्ण जी घोड मराठे प्रोफेसर पंडित एवं

विष्णुपन्त काले की एक समिति बनायी इसकी रिपोर्ट राव बहादुर डोगरे जो कि उस समय शिक्षा अधिकारी थे के द्वारा दी गयी।

21 सितम्बर 1917 और 29 सितम्बर 1917 इन दोनो दिन अनिवार्य प्राइमरी शिक्षा कोल्हापुर शहर में रहने वाले बालकों के लिये प्रारम्भ कर दी गयी थी। धन की कमी के कारण इस योजना में बालिकाओं कों सम्मिलित नही किया गया था।

इस वर्ष के अन्त तक निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा के अधिकारियो ने विभिन्न गाँवों में 95 विद्यालय खोल दिये थे। वर्तमान में उनमे से 27 विद्यालयों में आज भी शिक्षा दी जा रही है। इस प्रकार का पहला विद्यालय 4 मार्च 1918 को चिकाली में छत्रपति शाहू जी महाराज द्वारा खोला गया था।

शिक्षण पद्धति

छत्रपति शाहू जी द्वारा प्राइमरी स्तर की निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा की घोषणा के बाद इसे एक कानून बना दिया गया तथा उसमें इस प्रकार से व्यवस्था की गयी कि प्रत्येक बालक विद्यालय जाये। इसके लिये यह व्यवस्था की गयी थी।

"अभिभावकों को आवश्यक है कि वे स्कूल भेजने लायक बच्चा होने पर 30 दिन के अन्दर उसे विद्यालय में दाखिला दिला दे। यह सूची प्रत्येक 30 दिन में जारी की जाती थी। प्रधानाध्यापक उन छात्रों के नाम मामलेदार को बता देगें जिनके अभिभावक अपने बच्चों को नियत तिथि से 7 दिन के अन्दर विद्यालय नहीं भेजेगें। मामलेदार उन सभी अभिभावको को जिनके बालक विद्यालय नहीं आ रहे हैं। एक सूचना देगें तथा उनकी दलीलें सुनेगें कि वे अपने बालक को विद्यालय क्यों नही भेज रहे हैं। यदि उनकी दलीलें झूठी पायी गई तो उनको दण्ड के रूप में एक रूपया प्रतिमाह तब तक देना होगा जब तक कि उनके बालक विद्यालय जाना प्रारम्भ नही कर देगें। माता पिता अपने पुत्र को खेती अथवा अन्य आवश्यक कार्यों में मदद के लिये 15 दिन तक घर में रख सकते थे, लेकिन इसकी सूचना उन्हें प्रधानाध्यपक को कारण सहित देनी होती थी। यदि किन्ही कारणों से बालक विद्यालय नहीं आता तो उसका सम्पूर्ण उत्तरदायित्व उसके अभिभावकों का होता। प्रथम बार अनुपस्थिति होने पर दण्ड के रूप में दो आना तथा उसके पश्चात् अनुपस्थिति होने पर दण्ड स्वरूप एक रूपया देना होता था।"

शैक्षिक प्रशासन

छत्रपति शाहू जी के समय की प्राइमरी शिक्षा व्यवस्थाः—

सन् 1893—94 में प्राइमरी शिक्षा देने के लिये कोल्हापुर राज्य में तीन प्रकार के विद्यालय थे—

- दिन समय के विद्यालय (vernacular day schools) इस प्रकार के विद्यालयों की संख्या 142 थी तथा इसमें छात्र अध्ययन कर रहे थे।
- रात्रि समय विद्यालय (vernacular day night schools) इस प्रकार के विद्यालयों की संख्या 4 थी इसमें 155 छात्र अध्ययन कर रहे थे।
- सवित्त निजी विद्यालय (Grantable Private Schools) इस प्रकार के विद्यालयों की संख्या 37 थी तथा इसमें 1209 छात्र अध्ययनरत् थे।

"इस प्रकार तीनों प्रकार के कुल विद्यालयों की संख्या 183 थी तथा इनमें 11,042 छात्र अध्ययन कर रहे थे।"

इस प्रकार के विद्यालय बोम्बे नेटिव एजूकेशन सोसाइटी (Bombay Native Education Society) के द्वारा चलाये गये थे। उस समय शिक्षा के प्रचार व प्रसार का मुख्य उददेश्य पश्चिमी विज्ञान तथा साहित्य को फैलाना था। इसके लिये "अंग्रेजी विद्यालय" खोले गये और जब इस उददे्श्य की पूर्ती हो गयी तो इन्हें वर्नाकुलर विद्यालय का नाम के दिया गया। दूसरे शब्दों में दोनो प्रकार के विद्यालयों में मुख्य अन्तर केवल निर्देश दिये जाने वाली भाषा का था। इन विद्यालयों में मुख्य पाठ्यक्रम में अंकगणित, बीजगणित, त्रिकोणमिति, नक्षत्रशास्त्र इंग्लैण्ड़ तथा भारत का इतिहास, प्राकृतिक ज्योतिष और विश्व इतिहास का एक बहुत बड़ा भाग सम्मिलित था।

यह उन वर्नाकुलर विद्यालयों में था जिनमें भारतीय भाषा में ही शिक्षा दी जाती थी। कोल्हापुर राज्य में 1894 में दिन तथा रात्रि के कुल विद्यालयों की संख्या 146 थी तथा कोल्हापुर दरबार ने शिक्षा सत्र में 44,463 रू0 नगद खर्च किये थे इससे विद्यालयों में बहुत संशोघन हुआ। 1894 में रात्रि के 4 विद्यालय शिक्षा देने का कार्य कर रहे थे तथा इनके 40200 रू0 का व्यय कोल्हापुर दरबार ने किया था। कोल्हापुर राज्य में 37 निजी विद्यालय भी चल रहे थे। जिसमें कि सभी को कोल्हापुर दरबार द्वारा वित्तीय सहायता दी गयी थी। ये सभी विद्यालय वहाँ के अध्यापकों द्वारा निजी तौर पर खोले गये थे। जिनको कि जनता की माँग के आधार पर अथवा जनता के लोगों की दयालुता पर उनके आर्थिक सहयोग से खोला गया था। इन सभी विद्यालयों का अपना भवन नहीं था।

"ये सभी विद्यालय जनता के द्वारा बनाये गये भवनो में (जैसे चावड़ी अथवा मंदिर) चलते थे अथवा धनी व्यक्तियों के मकानों में चलते थे लेकिन कुछ व्यक्ति बालिकाओं की शिक्षा के विरोधी थे। वे केवल विद्यालय में बालकों की ही उपस्थिति चाहतें थे। अधिकतर अध्यापक ब्राह्मण थे लेकिन अन्य जाति वर्ण के व्यक्ति भी वहाँ पर अध्यापक थे। उनमें से अधिकतर प्रभोस, मराठा भडरी तथा कुनवी थे जो पढ़ाने के लिये केवल साधारण बातें ही जानते थे। पाठ्यक्रम में पढ़ना लिखना साधारण अंकगणित गुणात्मक सारणी तथा कुछ खाता वही तथा पत्र लेखन सम्मिलित था।"

1894 में छत्रपति शाहू ने देखा कि प्राइमरी विद्यालयों की संख्या 183 हो यह संख्या सन् 1922 में लगभग ढाई गुनी हो गयी थीं।

ऐसे विद्यालयों की संख्या तथा विद्यालयों में छात्र संख्या निम्न थी।[1]

वर्ष	विद्यालयों की संख्या	छात्रों की संख्या
1893–94	37	1209
1896–97	43	1327
1901–02	24	762
1905–06	48	1501
1909–10	100	2542
1912–13	101	2432
1915–16	103	1830
1918–19	15	482
1920–21	12	493
1921–22	38	374

[1] उपरोक्त वर्षो में कोल्हापुर राज्य की साधारण सूचना।

सन् 1894 से 1922 के मध्य प्राइमरी विद्यालयों की संख्या तथा उन विद्यालयों में अध्ययनरत छात्रों की संख्या की सूची[2]

वर्ष	प्राइमरी विद्यालयों की संख्या	छात्रों की सेख्या
1893–94	183	11042
1896–97	147	10882
1901–02	159	6429
1905–06	212	9483
1909–10	295	12646
1912–13	309	13331
1915–16	318	10132
1918–19	367	11622
1921–22	496	26628

[2] कोल्हापुर राज्य का उपरोक्त वर्षो में किया गया सर्वेक्षण–कोल्हापुर अभिलेखा गार।

निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा की योजना राजर्षि छत्रपति शाहू जी महाराज द्वारा सन् 1918 में प्रस्तुत की गयी। निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा की उन्नति सूची नीचे दर्शायी गयी है।

सन् 1917–18 से सन् 1921–22 तक निःशुल्क एवं अनिवार्य

प्राइमरी शिक्षा की उन्नति विद्यालयों की संख्या एवं छात्रों की संख्या।[3]

वर्ष	विद्यालयों की संख्या	छात्रों की संख्या
1917–18	27	1296
1918–19	95	4631
1919–20	170	6362
1920–21	376	17218
1921–22	420	22007

अध्यापक प्रशिक्षणः–

कोल्हापुर राज्य में प्राइमरी अध्यापकों के प्रशिक्षण के लिये सन् 1867 में एक विद्यालय खोला गया था। उस विद्यालय में बहुत बड़ी संख्या में अध्यापकों ने प्रशिक्षण किया। वर्ष 1894–95 तक केवल 202 अध्यापकों ने ही वहाँ उपलब्ध विद्यालयों में प्रशिक्षण प्राप्त किया था। छत्रपति शाहू जी वहाँ प्राइमरी शिक्षा के प्रसार के लिये बहुत अधिक प्रयास कर रहे थे। शाहू जी ने इसके लिये अध्यापको को बहुत उत्साहित किया। सन् 1911

[3] कोल्हापुर राज्य की साधारण शासकीय सूचना।

में छत्रपति शाहू ने अयोग्य एवं अप्रशिक्षित अध्यापकों के लिये एक निर्देश दिया वह इस प्रकार है–

"वे सभी अध्यापक जिन्होंने अध्यापक प्रशिक्षण प्रमाण पत्र नही प्राप्त किया है अथवा वे जिन्होने वर्नाकुलर परीक्षा पास नही की है। इस प्रकार के अध्यापक दो वर्ष के अन्दर वर्नाकुलर परीक्षा पास कर लें तथा अध्यापक प्रशिक्षण प्रमाण पत्र प्राप्त कर लें। यदि कोई अध्यापक यह परीक्षा पास नही कर सकेगा तो उसे प्रोन्नति नहीं दी जायेगी।"[4]

लेकिन इस आदेश से भी प्रशिक्षण विद्यालयों में छात्रों की संख्या में कोई विशेष परिवर्तन नही हो सका। नीचे प्रदर्शित सूची से प्रशिक्षण विद्यालयों की उन्नति स्पष्ट है। प्रशिक्षण विद्यालयों में छात्र संख्या संतोष जनक नही थी।

अध्यापक प्रशिक्षण विद्यालयों में छात्र संख्या"[5]

वर्ष	छात्रों की संख्या
1913–14	11
1915–16	14
1916–17	09
1917–18	12
1918–19	–
1919–20	11
1920–21	10
1921–22	12

[4] कोल्हापुर गजट– 14 अक्टूबर 1911– भाग एक पृष्ठ 271

[5] कोल्हापुर राज्य में उपरोक्त वर्षो में किया गया सर्वेक्षण

छत्रपति शाहू जी महाराज ने 21.01.1918 को प्राइमरी शिक्षा के उन्मूलन हेतु अपना वक्तव्य दिया वह निम्न है –

"To start free and compulsory primary education in the state chhartrpati shahu opened a separate department of education. The department of education was under his highness and he appointed professor R.N Apte, M.A.L.L.B, F.R.A.S. as director of the department and professor R.B. Pandit Rao had been given all the right of the primary education. He was also given Rs. 125 per month as salary and Rs. 25 as allowance."

छत्रपति शाहू जी ने इस कार्य के लिये शिक्षा अधीक्षक का पद सृजित किया गया। शिक्षा अधीक्षक का वेतन सितम्बर 1895 से रू0 278 प्रतिमाह कर दिया गया। कोल्हापुर राज्य के सभी बालक एवं बालिकाओं के विद्यालय उनके अधिकार क्षेत्र में आते थे। शिक्षा अधीक्षक नियमित रूप से विद्यालय का निरीक्षण करते थे।

प्राइमरी शिक्षा में खर्चः–

निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा को छत्रपति शाहू जी महाराज द्वारा शिक्षा के प्रचार एवं प्रसार के लिये प्रारम्भ किया गया था। इस कार्य के लिये उन्होंने अनेकों विद्यालय खोले जिसके परिणाम स्वरूप कोल्हापुर राज्य में शिक्षा के लिये खर्च बहुत बढ़ गया था। वर्ष 1893–94 में शिक्षा पर व्यय रू0 71,098 था लेकिन वर्ष 1922 में यह व्यय रू0 1,33,700 हो गया था।

कोल्हापुर अभिलेखागार हूजुर आदेश संख्या 554 दिनांक 21.01.1918

माध्यमिक शिक्षा :–

माध्यमिक शिक्षा के प्रचार एवं प्रसार के लिये बहुत कार्य किये। उन्होने निर्धरित किया कि माध्यमिक शिक्षा प्राप्त करने के लिये छात्र की न्यूनतम उम्र दस वर्ष तथा अधिकतम उम्र 16 वर्ष होनी चाहिये। वर्ष 1893–94 में कोल्हापुर में स्थित राजाराम विद्यालय में 2202 छात्र अध्ययन कर रहे थे।

वर्ष 1894 में माध्यमिक शिक्षा की कोल्हापुर में स्थिति.[6]

S. No.	Describtion of Schools	No. of Schools	Numbers of Students
1	Rajaram High School Inclusive of Sardar's Class	1	399
2	Aided High School of the American Mission	1	75
3	First Grade Anglo Vernacular Schools	1	112
4	Second Grade Anglo Vernacular School	8	1384
5	Aided Private English School	1	238
	Total	12	2208

[6] कोल्हापुर राज्य मे उक्त वर्षो में किया गया सर्वेक्षण

वर्ष 1894 से 1922 के मध्य माध्यमिक शिक्षा का विकास :–

कोल्हापुर राज्य मे सन् 1922 तक हाई स्कूलों की संख्या 11 से बढ़कर 24 हो गई थी। निम्नांकित तालिका वर्ष 1894 से 1922 के मध्य माध्यमिक शिक्षा मे सुधार को प्रदर्शित करती है।

1894 से 1922 के मध्य की सूची[7]

वर्ष	विद्यालयों की संख्या	छात्रों की संख्या
1893–94	11	1734
1897–98	10	1654
1998–99	10	1681
1905–06	16	1177
1907–08	20	1241
1908–09	19	1353
1909–10	24	1720
1911–12	24	1811
1918–19	26	1924
1921–22	24	2151

7 कोल्हापुर राज्य में 1893–94 से 1921–22 तक किये गयें सर्वेक्षण

माध्यमिक शिक्षा हेतु छात्रवृत्ति :-

छत्रपति शाहू जी ने बुद्धिमान छात्रों की सहायता करने के लिये छात्रवृत्ति की योजना बनायी। कुछ जागीरदारों ने भी कोल्हापुर राज्य को शिक्षा हेतु कुछ सहायता की। कोल्हापुर राज्य के सर्वेक्षण की रिपोर्ट इस प्रकार थी- "33 छात्रों को छात्रवृत्ति रू0 3/- प्रतिमाह दी जाती थी। ये छात्र राजाराम हाईस्कूल के होते थे। इसके अतिरिक्त बवादा के जहाँगीरदार 5 छात्रों को छात्रवृत्ति देते थे। 12 छात्रो को छात्रवृत्ति रू0 150 प्रतिमाह तथा 16 छात्रों को छात्रवृत्ति रू0 70 प्रतिमाह दी जाती थी। यह छात्रवृत्ति उन छात्रों को दी जाती थी जो राजाराम हाईस्कूल मे सफलता प्राप्त कर लेते थे। इस प्रकार छात्रवृत्ति प्राप्त करने वाले छात्रों की कुल संख्या 66 थी।"

सेकण्ड्री स्कूलों में परीक्षा व्यवस्था :-

उस समय सेकण्ड्री विद्यालयों में परीक्षा व्यवस्था दों प्रकार की थी एक मैट्रिक परीक्षा तथा दूसरी विद्यालय छोड़ने हेतु परीक्षा। इन दोनो परीक्षाओं में अन्तर बम्बई राज्य के परिवर्तित संस्करण वर्ष 1855-56 में उल्लिखित है जो निम्न है-

"Matriculation Examination as conducted by the University during the period did not provide for the examination of the diversified courses. Government ,therefore, decided to conduct a separate examination which was called 'School Learning Certificate Examination' and apecial board was appointed to conduct it". [8]

---

[8] ए रिवाईव आफ एजूकेशन इन बाम्बे स्टेट 1855-56

स्कूल छोड़ने हेतु परीक्षा के परिणम राजाराम हाईस्कूल, निजी हाईस्कूल तथा शहर के हाईस्कूल मे वर्ष 1920–21 तथा 1921–22 के निम्नवत् है–

तीन हाईस्कूलों में वर्ष 1920–21 तथा 1921–22 में विद्यालय स्थानान्तरण प्रमाण पत्र परीक्षा परिणाम की सूची[9]

विद्यालयों के नाम	विद्यालय स्थानान्तरण प्रमाण पत्र परीक्षा 1920–21		1921–22	
	परीक्षा देने वाले छात्रो की संख्या	उत्तीर्ण छात्रो की संख्या	परीक्षा देने वाले छात्रो की संख्या	उत्तीर्ण छात्रों की संख्या
राजाराम हाईस्कूल	151	56	68	26
निजी हाईस्कूल	49	15	96	23
शहरी हाईस्कूल	56	12	147	74
योग	256	83	311	123

[9] कोल्हापुर राज्य में किया गया सर्वेक्षण वर्ष 1920 से 1922 तक

सन् 1894 में राजाराम कॉलेज में मात्र 61 छात्र थे जिनकी संख्या छत्रपति शाहू जी के ही प्रयास से कुल 173 हो गयी थी।जिनमें से अधिकतर छात्र मध्यम वर्ग तथा वर्ग के थे। शाहू जी के अथक प्रयास से राजाराम विद्यालय के छात्रो की संख्या में वृद्धि को दर्शाने हेतु सारणी निम्नवत् है[10] –

वर्ष	छात्रो की संख्या
1893–94	61
1897–98	97
1901–02	61
1906–07	64
1909–10	86
1912–13	157
1915–16	169
1918–19	155
1919–20	124
1921–22	173

[10] कोल्हापुर राज्य में किया गया सर्वेक्षण वर्ष 1920 से 1922 तक

पुस्तकालय प्रयोगशाला आदि :–

पुस्तकालय तथा प्रयोगशालाओं के विकास हेतु, छत्रपति शाहू जी महाराज ने विशेष ध्यान दिया तथा इसके लिये बहुत धन भी उपलब्ध कराया। वर्ष 1894 में राजाराम कालेज के पुस्तकालय में केवल 4,015 पुस्तकें थी लेकिन 1922 तक यह संख्या बढ़कर 7,687 हो गयी थी।

राजाराम कॉलेज मे नवीन उपकरणों से सुसज्जित प्रयोगशाला भी थी। कालेज प्रशासन प्रयोगशाला हेतु प्रतिवर्ष बहुत अधिक धन व्यय करता था। छत्रपति शाहू इस कार्य के लिये बहुत अधिक अनुदान देते थे।

Details regarding scholarships & Awards[11]

Sr.No.	Name of Accounts	Amount of G.P Notes	Amounts of Interest received during the year	Total Balance	Amont of scholarship prizes & medals awarded during the year
1	Alfred Scholarship	52,000	1,044	1,410	1,410
2	Bhikajipant Gokhale scholarship	1,500	24	130	28
3	Jaysingrao Ghatge scholarship	1,500	26	46	16
4	Waller prize & Medal	900	15	330	29
5	Krishnaji Bachoji Sovani Prize	1,500	24	225	96
6	Rajaram Scholarship	21,000	770	1,000	1,000
7	Chhatre Memorial	500	9	148	-
8	Jaysingrao	1,500	24	98	-
9	Fergusson Scholarship	20,000	327	7,882	497
10	Jaysingrao Ghatge Technical school fund	26,900	440	5,488	627
11	Mar Parr Fund	300	9	134	9
12	Ghorpade Fellowship & Lectureship	1,500	246	491	-
13	Shri Radhabai Ghatge Prize	500	7	66	-
14	Jahagirdar School Fund	18,500	303	5,189	-

[11] कोल्हापुर राज्य की साधारण प्रशासन की सूचना वर्ष 1921 से 1922 तक पृष्ठ 50

उच्च शिक्षा में व्यय नीचे दर्शायी गयी सारणी में वर्ष के अनुसार कोल्हापुर राज्य में शिक्षा में किये गये व्यय का विवरण दिया गया है [12]

उच्च शिक्षा में व्यय

वर्ष	छात्रों की संख्या
1893—94	15,897
1897—98	14,494
1898—99	12,260
1902—03	13,215
1903—04	17,477
1908—09	20,715
1912—13	19,628
1918—19	26,757
1919—20	20,500
1921—22	26,499

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है कि वर्ष 1894 में कोल्हापुर दरबार द्वारा उच्च शिक्षा में व्यय रू0 15,897 किया जाता था लेकिन 1922 में यह धन बढ़कर रू0 26,499 हो गया था।

---

[12] उक्त वर्षो में कोल्हापुर राज्य में किया गया सर्वेक्षण।

स्त्री शिक्षा –

छत्रपति ने स्त्री शाहू जी हेतु बहुत कार्य किये। शाहू जी महाराज ने उन्नीसवी सदी के अन्त तथा बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में स्त्री शिक्षा के उत्तरोत्तर विकास हेतु कार्य किया। शाहू जी का स्त्री शिक्षा के सम्बन्ध मे दृष्टिकोण प्रगतिवादी था।

भारत मे स्त्रियाँ अपने विचारों तथा इच्छाओं के साथ नहीं रह सकती है उन्हे पुरूषों की इच्छाओं तथा सिद्धान्तो पर चलना पड़ता है इसका मुख्य कारण है स्त्रियों की अज्ञानता। साधारण तौर पर स्त्रियाँ समाज में पुरूषों की दया की पात्र समझी जाती है। स्त्रियों की सामाजिक दशा इस प्रकार थी।

''उन्नीसवी सदी के प्रारम्भ मे स्त्रियों का सामाजिक स्तर असंतोषजनक था। हिन्दुओं मे स्त्रियों को सम्पत्ति का अधिकार था। बाल–विवाह की प्रथा उस समय साधारण थी। केवल उच्च वर्ग अथवा मध्यम वर्ग के कुछ परिवार ही इसका विरोध करते थे। उस समय विधवा विवाह, तलाक प्रथा तथा पर्दा प्रथा जैसी कुरीतियाँ बहुत फैल रही थी।''[13]

स्त्रियों की शैक्षिक दशा की सामाजिक दशा की तरह ही सोचनीय थी उन्नीसवी सदी की स्त्रियाँ बिना शिक्षा के ही रही। उनको शिक्षा के प्रभाव से वंचित कर दिया गया था।

स्त्रियों को घर की चाहरदिवारी के अन्दर ही रखा जाता था। उन्हें केवल खाना बनाने, घर का संचालन तथा कला की शिक्षा दी जाती थी। जिससे वे अपने पति की सहायता कर सकें। यह प्रायोगिक ज्ञान स्त्रियों

---

[13] ए रिवाईव ऑफ एजूकेशन इन बाम्बे स्टेट (1855–1965)

को उनकी माताओं से अथवा घर के बुजुर्ग व्यक्ति से प्राप्त होता था लेकिन वास्तविक ज्ञान के लिये उन्हें कभी भी स्कूल नहीं भेजा जाता था।

महाराष्ट्र मे स्त्री शिक्षा का प्रारम्भ "अमेरिकन मिशनरी सोसायटी" द्वारा प्रारम्भ किया गया सन् 1824 में इस समिति द्वारा पहला बालिका विद्यालय"स्टूडेन्ट्स लिट्टेरी एण्ड साइन्टिफक सोसायटी" द्वारा सन् 1851 में खोला गया। महात्मा ज्योतिराव फूले द्वारा भी पूना मे 1848 मे पहला बालिका विद्यालय खोला गया था। ब्रिटिश सरकार की नीति इस मामले में ठीक नहीं थी।

कोल्हापुर राज्य मे शाहू जी महाराज द्वारा सन् 1894 में 26 बालिका विद्यालय खोले गये थे जिनमे कुल 1409 बालिकायें अध्ययन कर रहीं थीं। कोल्हापुर मे बालिकाओं के लिये एक प्रशिक्षण विद्यालय भी खोला गया था जिसमे 10 छात्रायें प्रशिक्षण प्राप्त कर रही थी। मिस लिटिल को स्त्री शिक्षा का पर्यवेक्षक नियुक्त किया गया था लेकिन उनके इस्तीफा देने के पश्चात् श्रीमती आर0 के0 कालेकर को पर्यवेक्षक नियुक्त कर दिया गया था। सन् 1898–99 के पश्चात् यह शिक्षण विद्यालय बन्द हो गया।

"शिक्षा आपके दिमागी नेत्र को खोलती है। शिक्षा के द्वारा आपके विचार धीरे–धीरे श्रेष्ठ होते जाते है अतः हमें शिक्षा का बहिष्कार नहीं करना चाहिये। मेरी इच्छा आपको न उच्च शिक्षा प्राप्त योग्य युवती बनाने की है। मेरे अनुसार अशिक्षित व्यक्ति अपने नेत्रों के होता हुआ भी अन्धा है।"[14]

छत्रपति शाहू स्त्री शिक्षा के प्रचार–प्रसार को अपने जीवन का लक्ष्य बनाना चाहते थे। उन्होंने स्त्री शिक्षा के लिये अनेको विद्यालय खोले इसके

---

[14] ए0 वी0 लट्ठे प्रष्ठ 432

लिये उन्होंने स्त्रियों को प्रोत्साहित किया। इस प्रोत्साहन के लिये उन्होंने बालिकाओं को छात्रवृत्ति से सम्मानित करने का प्रयास किया। शाहू जी महाराज स्त्री शिक्षा के सम्बन्ध 6 अक्टूबर सन् 1919 को अपना वक्तव्य दिया जो निम्नवत् है।

"यह सभी व्यक्तियों को सूचित किया जाता है कि वे व्यक्ति जो पर्दा प्रथा के पोषक है। अथवा बालिकाओ की शिक्षा देने के विरोधी है वे मामासाहब को इसकी सूचना अवश्य दे देवें। बालिकाओं की शिक्षा हेतु, बालिकाओं के रहने, खाने तथा शिक्षा के हेतु अन्य सभी खर्चे सरकार द्वारा देखे जायेगे।"[15]

यह तो स्पष्ट ही है कि छत्रपति शाहू जी महाराज ने स्त्रियों को निःशुल्क शिक्षा देकर उन्हें उच्च शिक्षा की ओर भी अग्रसर किया।

छत्रपति शाहू योग्य बालिकाओ को समय–समय पर सम्मानित करते थे। एक क्रिसमस लड़की अत्रीकाबाई डेनियल बाकर को प्रशिक्षण विद्यालय पूना मे प्रवेश के लिये दो वर्ष तक लगातार रू0 16 प्रतिमाह की छात्रवृत्ति प्रदान करते थे। उन्होने श्रीमती कृष्णा बाई कालेवकर को ग्रांट मेडिकल कालेज बम्बई मे प्रवेश हेतु भेजा गया तथा उन्हे आर्थिक सहायता भी प्रदान की। शिक्षा पूर्ण होने के पश्चात् श्रीमती कृष्णा बाई कालेवकर सन् 1902 में सहायक डॉक्टर के पद पर नियुक्त की गयी।

"छत्रपति शाहू जी महाराज ने बालिकाओं तथा स्त्रियों को निःशुल्क शिक्षा देने का प्रस्ताव किया। उनकी नीति में उन्होंने राधाबाई सूर्यवंशी तथा ताराबाई खांडेकर को 'सेन्ट कोलम्बो गर्ल्स स्कूल' बम्बई अध्ययन हेतु

---

[15] कोल्हापुर अभिलेखागार शाहूदफ्तर, अभिलेखसंख्या, 11607 एवं 11608।

भेजा तथा उनके खर्च के तौर पर उन्होंने उस विद्यालय को रू0 500 अनुदान के रूप में दिया।"[16]

छत्रपति शाहू समय–समय पर बालिकाओं के लिये छात्रवृत्ति की घोषणा किया करते थे। विवाह के समय भावनगर के महाराजा ने तीन हजार रू0 4% ब्याज पर कोल्हापुर के सरकारी खजाने मे जमा कर दिये थे। जिसका प्रयोग दो प्रकार की छात्रवृत्ति के रूप में तथा एक स्वर्ण पदक के रूप में कोल्हापुर राज्य में बालिका विद्यालयों मे उच्च श्रेणी में उत्तीर्ण छात्राओं के लिये किया गया था। इस महत्वपूर्ण घटना में छत्रपति शाहू जी महाराज ने तीन प्रकार की छात्रवृत्ति की घोषणा की।

"कक्षा पाँच तक की छात्राओं को 1 वर्ष के दो छात्रवृत्तियाँ, सकवारबाई रानी साहब छात्रवृत्ति रू0 3 की तथा रू0 2 की निर्धारित की गयी। अहिल्याबाई छात्रवृत्ति रू 6 की केवल उन विवाहित महिलाओं को जिनके पति राजाराम कालेज में अध्ययनरत है। कमलाबाई ओवलकर छात्रवृत्ति रू03 की कक्षा 5 के स्तर की बालिकाओं को दी जाती थी। इसके अतिरिक्त श्रीमती पार पुरूस्कार रू 08 का केवल उस छात्रा को दिया जाता था जो कि कक्षा 5 की परीक्षा में सर्वश्रेष्ठ अंक प्राप्त कर लेती थी। वाल्कर पुरूस्कार रू0 15 का केवल उसी बालिका को मिलता था जो कि कक्षा 5 की परीक्षा गणित विषय में सर्वाधिक अंक प्राप्त करती थी। इनके अतिरिक्त राधाबाई आकासाहब महाराज पुरूस्कार तीन मूल्यों का रू0 40/– रू0 15/– तथा रू012/– का भी दिया जाता था। दो पुरूस्कार रू0 40/– के कक्षा 4 में सर्वाधिक अंक प्राप्त करने वाली छात्राओं को दिये जाते थे।[17]"

---

[16] कोल्हापुर अभिलेखागार,फाइल संख्या, 46 हुजुर आदेश दिनांक 05.01.1920।

[17] कोल्हापुर अभिलेखागार हुजूर आदेश संख्या 115 दिनांक .30.05.1904

छत्रपति शाहू जी ने बालिकाओं के विद्यालयों में एक अभूतपूर्व को इस प्रकार स्त्री शिक्षा की उन्नति संतोषजनक थी –

विद्यालय तथा छात्राओं की संख्या [18]

वर्ष	विद्यालयों की संख्या	छात्राओ की संख्या
1893–94	26	1419
1897–98	28	1451
1901–02	25	975
1903–04	30	780
1906–07	31	1184
1909–10	36	1882
1912–13	34	1708
1915–16	35	1800
1921–22	33	1918

छत्रपति शाहू जी ने पिछड़ी जातियों की बालिकाओं की शैक्षिक समस्याओ के निराकरण के लिये अलग से विद्यालय खोले तथा पिछड़ी जाति की बालिकाओं की शिक्षा पर अतिरिक्त ध्यान दिया। उस समय सह–शिक्षा एक कठिन कार्य था। छत्रपति शाहू साहसी अध्यापकों को

---

[18] शासन द्वारा उक्त वर्ष में कोल्हापुर राज्य का किया गया सर्वेक्षण।

समय–समय पर पुरस्कृत करते थे। छत्रपति शाहू निम्न दो बिन्दुओं पर विशेष ध्यान देते थे।

"उन्होंने राखमबाई केलोवकर को बालिका विद्यालयों का पर्यवेक्षक नियुक्त कर दिया था। उन्होने उनकी तनखाह रू0 70/– प्रतिमाह से बढ़ाकर रू0 85/– प्रतिमाह कर दी थी। इसके अतिरिक्त एक पद पर रू0 30/– प्रतिमाह कर दी थी।[19]"

"एक बार एक ग्रामवासी ने बालिका विद्यालय में एक अध्यापिका की नियुक्ति के लिये कहा क्योंकि वहाँ पर नियुक्त अध्यापक श्री दामोदर जोशी का व्यवहार अच्छा नही था। छत्रपति शाहू जी ने इसकी विवेचना की तथा उन्हें दण्डित भी किया तथा ग्राम रूकाडी में एक महिला अध्यापिका की नियुक्त कर दी।[20]"

बलिकाओं की शिक्षा में व्यय :–

छत्रपति शाहू जी ने महाराज ने बालिकाओं की शिक्षा हेतु अनेकों बालिका विद्यालयों की स्थापना की तथा इसके लिये उन्होंने बहुत अधिक धन का व्यय किया।

---

[19] कोल्हापुर गजट भाग एक पृष्ठ दिनांक –28–09–1885

[20] कोल्हापुर अभिलेखागार हुजूर आदेश संख्या –1116 दिनांक 30–05–1904

वर्ष 1893—94 से 1921—22 के मध्य बालिकाओं की शिक्षा में व्यय[21]

वर्ष	व्यय (रूपयों में)
1893—94	8,093
1898—99	9,227
1902—03	8,720
1906—07	11,325
1911—12	11,148
1914—15	12,124
1917—18	13,100
1921—22	14,452

इस अध्ययन से यह तो स्पष्ट ही है कि छत्रपति शाहू ने बालिकाओं की शिक्षा हेतु बहुत व्यय किया। उन्होंने कोल्हापुर राज्य में स्त्रियों की दशा शिक्षा के माध्यम से सुधारने का एक विशेष कार्य किया।

इन सबके अतिरिक्त छत्रपति शाहू जी ने तकनीकी विद्यालय खोले।

जयसिंह राव घटगे तकनीकी विद्यालय :—

इस विद्यालय में लकड़ी का काम, पीतल का काम, लोहे का काम तथा चित्रकला आदि सिखाई जाती थी। यहाँ पर एक बहुत बड़ी संख्या में मराठा छात्र शिक्षा प्राप्त करते थे।

---

[21] कोल्हापुर राज्य का उक्त वर्षों में किया गया सर्वेक्षण

विद्यालय के एक सर्वेक्षण के अनुसार विद्यालय में 148 वस्तुएं निर्मित की गयी जिसमें 16 पीतल की, 105 लोहे की तथा 27 लकड़ी की थी जिनकी कीमत रू0 542/थी और 49 वस्तुऐं पीतल की थी जिनका मूल्य रू0 9,553/ तथा 5 लोहे तथा 21 लकड़ी की वस्तुऐं भी थी इनमें से 142 वस्तुऐं रू0 492/ में बेच दी गई थी।[22]

जीनागर सम्प्रदाय के लिये औद्योगिक विद्यालय :–

यह विद्यालय छत्रपति शाहू महाराज ने खास तौर पर जीनागर सम्प्रदाय के लिये बनाया था। बाद में इसका नाम बदलकर राजाराम औद्योगिक विद्यालय कर दिया गया था।

"इस कार्य के लिये छत्रपति शाहू जी ने रू0 30,000/– का व्यय किया था। इसके लिये एक बड़ी इमारत तथा छात्रावास का भी निर्माण किया गया था।"[23]

मिश्रित विद्यालयों का विकास :–

छत्रपति शाहू जी महाराज ने मिश्रित विद्यालय भी खोले उनमें से कुछ इस प्रकार थे–

1– भाषा की पढ़ाई हेतु विद्यालय

(अ) संस्कृत विद्यालय

(ब) उर्दू तथा अरबी विद्यालय

2– विशेष समुदाय के लिये विद्यालय

---

[22] सधारण शासन द्वारा कोल्हापुर राज्य का सर्वेक्षण वर्ष 1913–14

[23] ए0 बी0 लटठे पृष्ट 149–50

(अ) सरदार विद्यालय (युवराज विद्यालय)

(ब) आदिवासी जातियों के लिये विद्यालयों

(स) इनफैन्ट्री विद्यालय

3– सामाजिक विचारों के विद्यालयों

(अ) स्काउट शिक्षा के विद्यालय

(ब) सत्य शोधक स्कूल

4– विकास हेतु विद्यालय

(अ) तलिम विद्यालय

छात्रावासों का विकास :–

यह तो ज्ञात ही हैं कि कोल्हापुर को छात्रावासों की जननी कहा जाता है। कोल्हापुर राज्य में छत्रपति शाहू जी ने 20 से भी अधिक छात्रवास खोले जिनमें कि निम्न तथा पिछड़े वर्ग के ही छात्र शिक्षा ग्रहण कर सकते थे।

छत्रपति शाहू जी महाराज द्वारा खोले गये छात्रवास निम्नलिखित थे–

- विक्टोरिया मराठा छात्रावास
- जैन छात्रावास
- मुस्लिम छात्रावास

- लिंगायत छात्रावास
- मिस क्लार्क छात्रावास (पिछड़ी जाति के छात्रों के लिये)
- श्री नामदेव छात्रावास
- दैवेदन्य छात्रावास
- पांचाल ब्राह्मण छात्रावास
- सारस्वत छात्रावास
- राव बहादुर आर0 बी0 सबर्निस प्रभु छात्रावास अथवा राव बहादुर रघुनाथ वेयन्कजी सबर्निस चंद्रसेनियाँ क्षत्रिय प्रभु छात्रावास।
- जिन्गार छात्रावास
- भारतीय ईसाई छात्रावास
- वैश्य छात्रावास
- चम्बर ढोर छात्रावास अथवा इन्दूमती रानी साहब छात्रावास
- देवंश छात्रावास
- सूटर छात्रावास
- नाथिक विद्यार्थी वस्तीग्रह
- वैदिक विद्यालय छात्रावास

- आर्य समाज गुरूकुल
- निःशुल्क छात्रावास अथवा शिवाजी निःशुल्क मराठा छात्रावास
- शिवकान्ती शिक्षा समाज छात्रावास
- सोमवंश आर्य क्षत्रिय छात्रावास–15 अगस्त 1990 को इस छात्रावास की स्थापना हुई। यह कोल्हापुर में आर्य क्षत्रिय महासभा के लिये बनाया गया था।

अन्तिम छात्रावास शाहू जी ने 19 मई 1921 को बनवाना प्रारम्भ किया। यह छात्रावास नाऊ जाति के छात्रों के लिये खोला गया था। यह छात्रावास परिधि में हनुमान जी का मंदिर तथा एक धर्मशाला का भी निर्माण हुआ था। यह छात्रावास नाऊ समुदाय के नेताओं के सपुर्द कर दिया गया।

छत्रपति शाहू जी महाराज सामाजिक क्रान्ति के सूत्रधार थे। इन सभी छात्रावास के अतिरिक्त छात्रावासों की स्थिति निम्न थी–

Building of place	Student of back ward class	Other's Maratha	Total
1- Main Institute Shivaji Peth	55	108	163
2. Main Institute Girl's Peth	04	11	15
3- 51- Thana Manglwar Peth	47	115	162
Total	106	234	340

इन सभी छात्रावासों के अतिरिक्त छत्रपति श्री शाहू जी महाराज ने कोल्हापुर के बाहर भी छात्रावासों की स्थापना की थी उनमें से कुछ निम्नलिखित है–

1. छत्रपति मराठा छात्रावास, पूना
2. उदय जी मराठा विद्यार्थी बस्तीग्रह, नासिक
3. सन्त सेना नाभिक विद्यार्थी बस्तीग्रह, नासिक
4. हीन भावना के समाज का छात्रावास, नासिक
5. मराठा विद्या प्रसारक समाज, पन्धरपुर
6. शिवाजी चतुर्थ छात्रावास, अहमदनगर
7. हीन भावना के समाज हेतु छात्रावास, नागपुर
8. शिवाजी शैक्षिक समाज, अमरावती

छत्रपति शाहू जी ने इन सबके अतिरिक्त अनेको प्रान्तो में विद्यालयों का निर्माण कराया। उन्होंने अमरावती तथा विदर्भ में भी अनेकों विद्यालयों का निर्माण कराया।

छत्रपति शाहू जी महाराज ने शिक्षा के प्रचार एवं प्रसार के लिये केवल कोल्हापुर में ही नहीं बल्कि अनेको प्रान्तो में विद्यालयों तथा छात्रावास की स्थापना की। उन्होने स्त्री–शिक्षा, बालशिक्षा तथा निम्न वर्ग की शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया।

छत्रपति शाहू जी महाराज ने 30 सितम्बर 1917 को ऐतिहासिक निर्णय दिया था। जिसमें उन्होने 14 वर्ष की आयु वर्ग के समस्त छात्रों के लिये प्राइमरी शिक्षा निःशुल्क एवं अनिवार्य कर दी थी।

अध्याय - 5

- शाहू जी महाराज के शैक्षिक विचारों का दलितों के उत्थान में योगदान।

शाहू जी महाराज के शैक्षिक विचारों का दलितों के उत्थान में योगदान

शिक्षा के दायरे में दलित

प्राचीन भारत में गुरूकुल और पाठशालाओं में दलितों के प्रवेश पर प्रतिबन्ध लगाकर उन्हें परम्परागत शिक्षा–व्यवस्था से निष्कासित कर दिया गया था। मध्यकालीन भारत में दलितों को उर्दू और फारसी से वंचित रखा गया। हैरानी की बात है कि ब्रिटिश राज में भी दलितों को शिक्षा के मन्दिरों में घुसने नहीं दिया गया। डॉ0 भीमराव अम्बेडकर ने ब्रिटिश काल में दलितों को शिक्षा से विमुख रखने के तीन कारण बतायें–

- शासक वर्ग होने के कारण अंग्रेजों का मानना था कि शिक्षा और सभ्यता का प्रसार उच्च वर्ग से निम्न वर्ग की ओर होता है, न कि निम्न वर्ग से उच्च वर्ग की ओर।

- ब्रिटिश नहीं चाहते थे कि न्यायपालिका और नौकरशाही में दलितों का दखल हो। उनका मानना था कि अगर सरकारी संस्थानों में दलितों को प्रवेश दिया गया तो इससे दलितों में बुद्धिजीवी और शिक्षित वर्ग का उदय होगा। ऐसे में उच्चतम पदों, जैसे न्यायाधीश तथा विभिन्न आयोग के अध्यक्ष पदों तक के दरवाजे दलितों के लिये भी खुल जायेगे।

- ब्रिटिश शिक्षा पर तथाकथित उच्च जातियों का वर्चस्व था।[1]

---

[1] दैनिक जागरण– 26.12.2007 पृष्ठ 6, लेखक– विवेक कुमार (जे0 एन0 यू0 प्राध्यापक)

बोम्बे नेटिव एजूकेशन सोसाइटी के अध्यक्ष माउंट स्टुवार्ट एलफिस्टोन ने कहा था कि दलितों को शिक्षा की पेशकश करते समय अंग्रेजों को बड़ा सावधान रहना चाहिये। अगर ब्रिटिश शिक्षा व्यवस्था की जड़े दलितों में पनप गई तो ये कभी फैल नहीं पायेगी। इससे उपयोगी ज्ञान के क्षेत्र में एक बेहतर वर्ग का तो उदय होगा, किन्तु यह अन्य जातियों की घृणा और तिरस्कार का कारण भी बनेगा। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने भी दलितों को शिक्षित करने के मुद्दे पर उदासीन ही दिखाई। तत्कालीन अध्यक्ष एनी बेसेन्ट के विचार थे, ''वंचित वर्गो के बच्चों को सबसे पहले तो साफ–सफाई, मर्यादित व्यवहार और शिक्षा के मूल तत्वों का ज्ञान होना जरूरी है। सदियों से उनका रहन–सहन इसी ढर्रे पर चल रहा है। उन्हें अन्य जातियों के साफ–सुथरे और खाते–पीते बच्चों के बीच बैठने लायक बनाने के लिये कई पीढ़ियों तक शुद्ध और पौष्टिक भोजन का सेवन करना होगा, और साफ–सुथरा रहने का सलीका सीखना होगा।''

उपरोक्त कारणों के अलावा हिन्दू दबंग जातियाँ भी दलितों को शिक्षा देने के खिलाफ थी। 1882 में भारतीय शिक्षा–व्यवस्था पर शोध कर रहे हंटर आयोग का निष्कर्ष था कि जब अस्पृश्य बच्चे स्कूल पहुँचे तो उनके हाथों से किताबें छीन ली गई। मध्य प्रान्त और बोम्बे प्रेसीडेन्सी में स्थानीय अधिकारियों ने रिपोर्ट दी कि कई साल से निम्न जाति के बच्चों का पाँच छः बड़े स्कूलों में प्रवेश प्रतिबन्धित है और निचली जातियों की झोपड़िया और उनकी फसले जला दी गयी। एक अन्य गाँव में दलितों पर दो वर्ष तक भारी जुर्माना लगाया गया। इसी प्रकार डब्लू ब्रिग्स ने उत्तर प्रदेश के सम्बन्ध में लिखा कि दलितों के लिये पब्लिक स्कूलों के दरवाजे बंद थे। शिक्षक और सवर्ण जातियों के छात्र निम्न जाति के बच्चों को

कक्षा में बैठने नहीं देते थे। इसी कारण 1909–10 में 12625 स्कूलों में एक भी स्कूल ऐसा नहीं था जहाँ दलित छात्र पढ़ते हो। इन परिस्थितियों में हम कह सकतें है कि राज्यव्यवस्था, राजनीतिक दलों और सभ्य समाज ने दलितों को जानबूझकर आधुनिक शिक्षा के दायरे से दूर रखा। इसी का नतीजा है कि आज शिक्षा साक्षरता यानी लिखित शब्दों को वरीयता देती है इसलिये दलितों के देशी अव्यवस्थित मौखिक ज्ञान को निरर्थक बताते हुए उन्हें हर लिहाज से अयोग्य मान लिया गया। दलितों को शिक्षा प्रदान करने में ईसाई मिशनरियों, ज्योतिबा फूले और डॉ0 भीमराव अम्बेडकर, छत्रपति शाहू जी ने काफी सहायता दी। स्काटिस मिशन स्कूलों ने अछूत बच्चों को स्कूल में प्रवेश दिलाने का पुरजोर प्रयास किया। तीन मिशनरियों ने इसे ब्राह्मण धार्मिक मूल्यों के खिलाफ अपने सार्वजनिक दृष्टिकोंण का केन्द्र बिन्दु बना दिया। इसके अलावा ज्योतिराव फूले ने दलित–शिक्षा का बीड़ा उठाया और 1848 में उच्च वर्ग के जबर्दस्त विरोध के बावजूद उन्होंने दलितों के लिये अलग से स्कूल की स्थापना की।

दलित जातियों में शिक्षा के प्रसार–प्रचार के लिये ज्योतिबा फूले ने एक संस्था की स्थापना की। इसी तरह डॉ0 अम्बेडकर ने दलितों को शिक्षित करने के लिये 'पीपुल्स एजूकेशन सोसाइटी' और 'सिद्धार्थ कॉलेज आफ आर्ट एंड साइंस' की स्थापना की। आजादी के बाद जब संविधान लागू हुआ तो उसके अनुच्छेद 46 के अनुसार दलितों की शिक्षा की जिम्मेदारी राज्यों को सौपी गयी।

शैक्षिक संस्थानों में दलित छात्रों के लिये आरक्षण का प्रावधान 1965 में किया गया। दलितों के लिये छात्रवृत्तियों की भी व्यवस्था की गयी, फिर भी शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर दलितों की भागीदारी संतोषजनक नहीं है। अभी तक 80 फीसदी दलित छात्र माध्यमिक स्तर पर पढ़ाई छोड़ देते है।

विभिन्न आई0 आई0 टी0, मेडिकल कॉलेज और प्रबंधन संस्थानों में आरक्षण का कोटा उनकी आबादी के अनुपात से कम है।

अनुसूचित जाति–जनजाति आयोग की कुछ वर्ष पूर्व जारी एक रिपोर्ट के अनुसार देश भर में कला संकाय में दलित स्नातकों की संख्या 3,61894 विज्ञान में 1,42,686 और वाणिज्य में 82,118 है, लेकिन इसी संकाय मे स्नात्कोत्तर दलितों की संख्या 44,093 और विज्ञान में 10,134 है इंजीनियर दलितों की संख्या 30,193, डाक्टरो की 12,193 और बी0 एड0 प्रशिक्षित दलितों की संख्या 13,004 है। दलित शिक्षकों की संख्या भी बहुत कम है। दस विश्वविद्यालयों और आई0 आई0 टी0, चेन्नई के आँकड़े चौकाने वाले है। इनमें तैनात 1,457 प्रोफेसरों में से केवल 8 दलित है। इसी प्रकार एसोसिएट प्रोफेसर, रीडर पद पर दलितों के लिये 15 फीसदी आरक्षण के बावजूद 1,578 में से कुल 51 पदों पर ही दलित नियुक्त है। चेन्नई आई0 आई0 टी0 में 422 शिक्षकों में से कुल दो ही दलित वर्ग से है। यह है दलितों की उच्च शिक्षा में उपस्थिति की वास्तविक स्थिति। प्रश्न है कि क्या हमारे देश के नीति निर्माता दलितों को शिक्षा के ढाँचे में शामिल करने की इस कठिन चुनौती को स्वीकार करेगें?

राजर्षि शाहू जी महाराज और दलितोद्धार कार्य :–

कोल्हापुर राज्य में सामाजिक विषमता के निवारण हेतु तीव्र भावना जाग्रत हो रही थी। ब्राह्मण अपनी श्रेष्ठता के मद में चूर कोल्हापुर दरबार से मोर्चा ले रहे थे। छत्रपति शाहू जी ब्राह्मणों के मोर्चे के सामने एक बार भी नहीं झुके और न असफल हुए। वेदोक्त की समस्या का अब भी अन्त नहीं था। तिलक तथा कतिपय अन्य ब्राह्मण नेता खुले छिपे वेदोक्त के सन्दर्भों को ताजा करते रहते थे। ब्राह्मणों तथा अब्राह्मणों की उठा पटक

चल रही थी। शाहू जी ने इसी बीच राजाराम कॉलेज के प्रिंसिपल एफ अडेयर के स्थान पर 19 अक्टूबर 1902 को आर्थर सिडनी लूसी को प्रिंसिपल के रूप में नियुक्त किया। प्रिंसिपल अडेयर की विदाई के अवसर पर कोल्हापुर कॉलेज के छात्रों द्वारा 'श्री तुकराम' (1901) नाटक खेला गया। संत तुकाराम के विरोधी रामेश्वर भट्ट नामक व्यक्ति ने नाटक में तुकाराम को शूद्र बताया, यह भी कहा कि संत तुकाराम को वेदोक्त का अधिकार नहीं है। मराठों ने इस नाटक का विरोध किया तथा शक्ति प्रयोग की धमकी दी। वासुदेव रंगनाथ शिरवाल्कर नाटक के रचयिता थे जिन्होने छत्रपति शाहू की सभी कार्यवाहियों का खंडन किया। नाटक बाबा साहब घोरपड़े को समर्पित किया गया था जो छत्रपति शाहू के प्रबल विरोधी थे। ब्राह्मणों ने ऐसे ब्राह्मणों को जाति से इस कारण बहिष्कृत किया कि उन लोगों ने छत्रपति शाहू के यहाँ वेदोक्त पद्धति से कर्मकाण्ड करवाये हैं।

कोल्हापुर राज्य इन दिनो ब्राह्मणों और अब्राह्मणों के द्वन्द का केन्द्र बन गया था इस तूफानी आन्दोलन ने समूचे महाराष्ट्र को हिला दिया था। छत्रपति शाहू जी सवर्णो, शूद्रों तथा अतिशूद्रों का मानवी समीकरण चाहते थे। वे सभी की आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति में समानता के आकांक्षी थे किन्तु ब्राह्मणों का दुर्भाव शिखर पर था। वे मात्र अपने सम्मान और शिक्षित होने से संतुष्ट नहीं थे। प्रत्युत वे यह भी चाहते थे कि अब्राह्मण आर्थिक, बौद्धिक और शैक्षिक दृष्टि से कभी आगे न बढ़ सके। इसके लिये उनको हर कुर्बानी स्वीकार थी। परन्तु अब्राह्मणों मे व्याप्त अन्धविश्वास तथा जड़ता ब्राह्मणो की जड़े जमाये हुई थी। उन्हीं दिनों ब्राह्मणों ने बीजापुर को अपने प्रतिनिधि के रूप में छत्रपति शाहू जी के पास यह जानने के लिये भेजा कि वेदोक्त विवाद में कोल्हापुर के दीवान जो कार्यवाही कर रहे है वह छत्रपति के आदेश से कर रहें है अथवा स्वतन्त्र रूप से कर रहे है।

पॉलिटिकल ऐजेन्ट -

कर्नल डब्ल्यू. बी. फेरीस

छत्रपति शाहू जी 29 दिसम्बर 1902 को होने वाले दिल्ली दरबार में भाग लेने के लिये शीघ्रता में थे। छत्रपति द्वारा भेजे गये लोगो ने उनके लिये विशेष शिविर की व्यवस्था की। छत्रपति के साथ पोलेटिकल एजेन्ट फेरीज तथा कुछ यूरोपियन अतिथि थे। मार्ग में पड़ने वाले विशेष स्थानों को देखते हुए छत्रपति की पार्टी 26 दिसम्बर को दिल्ली पहुँच गयी। 29 दिसम्बर को दरबार का कार्य आरम्भ हुआ। छत्रपति दरबार के विशेष जुलूस में कतिपय अन्य महत्वपूर्ण व्यक्तियों के साथ सम्मिलित हुए। छत्रपति हाथी पर हौदे के अगले भाग में तथा तथा विशालगढ़ के पन्त प्रतिनिधि तथा बवेदा के पंत अमात्य. हौदे मे छत्रपति के बाद वाले स्थानों में छत्रपति का मोर्छल लेकर बैठे। सायाजी गायकवाड़ ने इस जुलूस में भाग लेने से यह कहकर इन्कार कर दिया कि जुलूस में सम्मिलित होना राजकीय कर्तव्य का अंग नहीं है। इस पर लार्ड कर्जन बहुत अप्रंसन्न हुए। दरबार का मुख्य कार्यक्रम सन् 1903 के प्रथम दिन सम्पन्न हुआ। 9 जनवरी 1903 को भारत के वायसराय लार्ड कर्जन द्वारा दिये गये प्रीतिभोज में छत्रपति शाहू ने भाग लिया। इस अवसर पर छत्रपति को सर्वोच्च प्रतिष्ठा मिली। छत्रपति शाहू जी अपने साथियों सहित 11 जनवरी 1903 को दिल्ली से विदा होकर 15 जनवरी 1903 को वापस आये। रास्ते में छत्रपति बड़ौदा नरेश रायजी गायकवाड़ से मिले चूँकि उनका यह मिलन निजी ढंग का था अतः उसका कोई प्रचार नहीं किया गया था। शाहू जी का विचार था कि दिल्ली दरबार में जिस प्रकार राजाओं, महाराजाओं का जमघट लगा था वह भारत के इतिहास में अभूतपूर्व था। ब्राह्मणों की प्रतिज्ञा थी कि वेदोक्त प्रकरण को वे अपनी पूरी शक्ति के साथ आखिरी मंजिल तक ले जायेगे। छत्रपति शाहू की अनुपस्थिति में ब्राह्मणों ने सभी पुरोहितों का बहिष्कार किया जो छत्रपति शाहू का

यक्तिकिंचित साथ दे रहे थे। यहाँ तक कि उन बेचारों को सार्वजनिक नलो से पानी लेने की अनुमति नहीं दी। ब्राह्मण उनके सम्बन्धियो का दाह–संस्कार भी नहीं होने देते थे।

पॉलिटिकल एजेंन्ट कर्नल फेरीस ने राजोपाध्याय की अपील सुदृढ़ तर्क देते हुए खारिज कर दी तथा यह भी स्पष्ट कर दिया कि राजकीय वेतनभोगी राजोपाध्याय को राजाज्ञाओं की अवहेलना अथवा उल्लंघन करने का कोई अधिकार नहीं है। कर्नल फेरीस ने अपना निर्णय 19 फरवरी 1903 को घोषित किया। राजोपाध्याय की सनद और राजकीय इनामादि के सम्बन्ध में कर्नल फेरीस ने ब्यौरे के साथ स्पष्ट किया कि राजाज्ञा की अवहेलना पर यदि छत्रपति ने सनदों और इनामों को निरस्त कर दिया था तो ऐसा करने में वे पूर्णतः न्यायानुमोदित थे। किसी भी सरकारी कर्मचारी को कर्तव्यच्युत होने का दण्ड तो भोगना ही पड़ेगा। ब्राह्मणों ने इस मामले का अपनी प्रतिष्ठा का प्रश्न बना लिया था। इन्हीं की प्रेरणा से राजोपाध्याय ने बम्बई सरकार के यहाँ अपील की। बहरहाल ब्राह्मण इस बिन्दु पर किसी प्रकार झुकने को तैयार नहीं थे।

छत्रपति शाहू द्वारा संचालित समस्त सामान्य जनकल्याण योजनाओं में ब्राह्मणों द्वारा प्रतिरोध करने पर अंग्रेजी शासन छत्रपति को अप्रत्याशित सहयोग देता था। अंग्रेजी शासन के सभी कार्यवाहक छत्रपति की ईमानदारी चारित्रिक सौन्दर्य निश्कलुष जीवन पद्धति से अत्यन्त प्रभावित थे। शोषित दलित मानवता के कल्याण के संदर्भ में अंग्रेजी शासन खुले रूप में ब्रह्मणों की संकीर्णता एवं जड़ता का विरोधी था। छत्रपति शाहू अपने सार्वजनिक सत्कार्यो मे जब भी संकट और बाधा का अनुभव करते तो अंगेजी शासन तुरन्त उनको प्रोत्साहन और सच्चा सहयोग देता था। अपनी इस नीति के अन्तर्गत ब्रिटिश शासन ने 17 जून 1903 को हाईकोर्ट

के वे सभी अधिकार वापस कर दिये जो 1868 की संधि की धारा 8 के द्वारा सरकार ने अपने हाथ में ले लिये थे। इसी बीच फेरीज ने सम्राट के राज्याभिषिक के सम्पन्न होने की खुशी के प्रतीक रूप में सरदारों, प्रमुखों तथा छत्रपति को उनके स्तर के अनुरूप मेडल प्रदान किये। इससे भी छत्रपति के गौरव में वृद्धि हुई। यह सब वहाँ के ब्राह्मण किसी प्रकार सहन नहीं कर पा रहे थे परन्तु अन्याय पथ पर चलने वालों को सदैव ऐसी लाचारियाँ झेलनी पड़ती है। ब्राह्मणों का कोप तथा षडयंत्र लगातार जारी था। उधर छत्रपति शाहू जी उनके हर कदम हर चाल को विफल कर देते थे 13 सितम्बर 1903 को तीन ब्राह्मणों विष्णु भट्ट देवधर, बालक भट्ट परगांवकर तथा वासुदेव भाट पोरे ने एक सम्मिलित प्रार्थना पत्र शंकराचार्य थी विद्याशंकर भारती के यहाँ इस स्पष्टीकरण तथा निर्णय के लिये भेजा कि छत्रपति शाहू जी क्षत्रिय है या नहीं तथा वे वेदोक्त के अधिकारी है अथवा नहीं। उन्होंने अपने प्रार्थना पत्र में अपनी दोहरी मजबूती का चित्रण किया था। उनका कहना था कि यदि वे महाराज का धार्मिक कार्य वेदोक्त पद्धति से नहीं कराते तो नौकरी से हाथ धो बैठेगें और यदि कराते है तो ब्राह्मणों द्वारा जाति से बहिष्कृत कर दिये जायेगें। इधर बम्बई के गर्वनर ने 16 अक्टूबर 1903 को राजोपाध्याय के मामले में अपना निर्णय सुनाया कि कोल्हापुर की मंत्रिपरिषद का निर्णय सर्वथा न्यायसंगत है। इससे छत्रपति शाहू जी को बड़ी राहत मिली। बम्बई सरकार के इस निर्णय का सभी ब्राह्मण, वकीलों तथा ब्राह्मणी समाचार पत्रों ने खुला विरोध किया और सरकारी निर्णय को अनुचित तथा असंगत घोषित किया। छत्रपति इस मामले को लेकर कई दिनों तक घोर मानसिक अशान्ति का शिकार हो गये थे। बम्बई सरकार के निर्णय से उनको परम शान्ति मिली। छत्रपति ने बम्बई के गवर्नर की मंत्रिपरिषद के प्रति अपना लिखित आभार भेजा और

इंग्लैण्ड के अपने मित्रों को अपनी विजय का समाचार प्रेषित किया। तदुपरान्त ली वार्नर ने छत्रपति शाहू को परामर्श देते हुए कहा कि किसी भी मामले में यह देखना होगा कि लड़ाई से उत्पन्न की गयी परेशानी में स्तरीय अनुपात है या नहीं। छत्रपति शाहू के मित्रों तथा फेरीज ने शाहू जी को यह कहकर सांत्वना दी कि अब वेदोक्त प्रकरण स्वतः समाप्त हो जायेगा।[1]

ब्राह्मणी गुरूता और प्रभुता का दुस्सह भार न केवल कोल्हापुर अथवा महाराष्ट्र की अब्राह्मण जनता पर था प्रत्युत सम्पूर्ण भारत वर्ष में व्याप्त था। इनकी भेद–भाव, जाति–पाँति, ऊँच–नीच की दुर्भावना पूरा नंगा नाच कर रही थी। असंतोष का ज्वालामुखी महाराष्ट्र में उग्र था। महात्मा ज्योतिराव फूले का सत्यशोधक समाज, छत्रपति शाहू जी का आन्दोलन, पेरियार का संघर्ष तथा डॉ0 भीमराव अम्बेडकर का अभियान, सब इसी ब्राह्मण वादी कठोर संकीर्ण व्यवस्था के प्रति तीव्र प्रतिक्रियास्वरूप ही थे। इस देश के मानव–मानव में भेद की दुर्लध्य प्राचीर धीरे–धीरे धसक रही थी तथा आज ध्वस्त होने के कगार पर खड़ी है। कष्ट तो यह सोचकर होता है कि छत्रपति शाहू जैसे उज्जवल चरित्र के नरेश का वह महत्वपूर्ण शक्ति और समय ब्राह्मणों के वेदोक्त प्रकरण में नष्ट हुआ। कोल्हापुर ही क्या समग्र महाराष्ट्र जो कि नव रचना और निर्माण में लगते, न जाने कितनी धनराशि ब्राह्मणों के अत्याचारों, अनाचारों तथा दुर्व्यवहारों को नियन्त्रित करने में व्यय हो गयी। दशाब्दियों से कोल्हापुर नरेश का मानस अन्याय के प्रतिकार में व्यस्त एवं क्षुब्ध रहा। उन्हें प्रायः अपने राज्य के शासन प्रबन्ध को देखने का समय नहीं मिलता था। कभी ब्रिटिश शासन को सन्तुष्ट करके उसका समर्थन प्राप्त करने में छत्रपति लगते तो कभी

---

[1] सामाजिक क्रान्ति के सूत्रधार– राजर्षि छत्रपति शाहू– डॉ0 ब्रजलाल वर्मा

ब्राह्मणों को अपीलों को निपटाने में संलग्न होते और कभी ब्राह्मणों के षडयन्त्रों एवं कुचक्रों को ध्वस्त करने में व्यस्त होते। एक दिन का विश्राम उनको नहीं था। चिन्ता, उद्विग्नता और जनकल्याण के लिये टीस में ही छत्रपति डूबे रहते। एक के बाद एक समस्या ब्राह्मणों द्वारा उत्पन्न की जाती। खेद है कि आज जिस राष्ट्रीय नेताओं की भारत में आरती उतारी जा रही है वही उस समय के ब्राह्मण नेता छत्रपति शाहू जैसे महान शासक और सत्पुरूष को परेशान करके अपने को धन्य मानते थे। लोकमान्य बालगंगाधर तिलक इनमें से प्रमुख थे।

समस्या मूलक प्रतिरोधी परिस्थितयों को अपने पौरूष, विवेक और साहस से भले ही छत्रपति ने अपने अनुकूल बना लिया था किन्तु ब्राह्मणों द्वारा उठाये गये वेदोक्त प्रकरण का जटिल बोझा छत्रपति के मानस में निरन्तर कोल्हाहल करता रहता था। इसी ऊहापोह में उन्होंने 22 फरवरी सन् 1904 को अपने मित्र एडगर्ले को लिखा कि,''हम लोगों के मन में एक विचार आता है कि क्यों न हम ब्राह्मण पुरोहितों के स्थान पर अपने ही वर्ग के पुजारी नियुक्ति करें, जैसा कि स्वर्णकारों तथा शेनवी लोगों ने किया है। उनका सारा कार्य बिना ब्राह्मणों के सफलतापूर्वक चल रहा है।'' छत्रपति जैनियों और लिंगायतों की भाँति ब्राह्मणों की दासता का जुंवा अपनी गर्दन से उठाकर फेंक देना चाहते थे।

छत्रपति की सज्जनता, विवेक और दृढ़ता का अंग्रेजी सरकार पर गहरा प्रभाव था। इसलिये जो भी प्रभाव अथवा निवेदन वे सरकार से करते उसे ब्रिटिश सरकार तुरन्त स्वीकार कर लेती थी। पशुओं की नस्ल सुधारने, पशु–पालन वृक्षारोपण आदि में छत्रपति की रूचि देखकर ब्रिटिश सरकार और भी प्रसन्न होती थी। यहाँ तक की पन्हाला में छत्रपति ने चाय के वृक्ष भी लगवाये। इन्हीं दिनों ब्रिटिश सरकार ने छत्रपति से

राजकीय सेना को अधिक प्रभावी और समर्थ बनाने के लिये परामर्श लिया। छत्रपति की सूझबूझ और लाभदायी परामर्श से प्रभावित होकर ब्रिटिश सरकार ने उनको 2 जनवरी 1905 को भारत साम्राज्य के मित्र की उपाधि प्रदान की तथा कोल्हापुर के दीवान के पद को राय बहादुर नाम से अभिहित किया। उसी महीने भावनगर के अपने मित्र नरेश भावसिंह जी के निमन्त्रण पर छत्रपति भावनगर गये जहाँ उनका अतीव भव्य स्वागत किया गया तथा वहाँ के नवीन राजप्रसाद के नाम के साथ शाहू जोड़ा गया।

ब्रह्मनाल्कर को मठ की गद्‌दी का उत्तराधिकारी यद्यापि शाहू जी ने नहीं स्वीकार किया तथापि वह अपनी प्रतिभा, विवाद शक्ति और तर्क–कुचक्र से समूचे राज्य में घूम–घूमकर वेदान्त और धार्मिक समस्याओं पर निरन्तर व्याख्यान देता था। उसने अपना नाम विद्या नरसिंह भारतीय रख लिया था। उसकी प्रतिभा से प्रभावित होकर निजाम हैदराबाद ने उसका स्वागत किया। तिलक के नेतृत्व में उस समय के सभी ब्राह्मण ब्रह्मनाल्कर का गुणगान करते नहीं अघाते थे। यहाँ तक कि तिलक के नेतृत्व में पूना में उसको बड़ी धनराशि भेंट की गयी। महाराष्ट्र के अनेक नगरों में व्याख्यान देते हुए ब्रह्मनाल्कर बीच–बीच में छत्रपति शाहू जी के क्षत्रिय होने का खण्डन भी करता था। शिवाजी को वह क्षत्रिय नहीं मानता था। उसका कहना था कि चूँकि गंगाधर को कुछ धन देकर शिवाजी ने अपने को क्षत्रिय घोषित कराया अतः उनके परिवार का नाश हो गया। इसी प्रकार के विवाद वह छत्रपति शाहू और उनके परिवार के विरूद्ध फैलाता रहता था। यह विचित्र था कि एक ओर तिलक शिवाजी के स्मृति समारोहों में उनको राष्ट्र नायक के रूप में प्रस्तुत करते थे दूसरी ओर ब्रह्मनाल्कर शिवाजी को शूद्र सिद्ध करने में लगा रहता था।

ब्रह्मनाल्कर के गुरू जी ने 5 नबम्बर 1903 को उसे लिखा कि वे वेदोक्त प्रकरण सम्बंधी सभी संशय दूर करना चाहते हैं। उन्होंनें उसे संकेश्वर में उपस्थित होने के लिये कहलवा भेजा। परन्तु अहंकारी व्यक्ति के लिये न कोई गुरू और न कोई पिता। यही ब्रह्मनाल्कर की दशा थी। वह गुरू के बुलाने पर नहीं आया। गुरू मिलावादिकर ने छत्रपति शाहू से समझौता कर लिया। कोल्हापुर से 2 मील दूर कोलाम्बी गाँव में मिलावादिकर ने छत्रपति शाहू को वस्त्रों से सम्मानित किया और वैदिक मंत्रो द्वारा आशीर्वाद दिया। किन्तु छत्रपति का काम इससे बनने वाला नहीं था गद्दी का वर्तमान शंकराचार्य तो ब्रह्मनाल्कर था। गुरू जी तो गद्दी से हट चुके थे। अतः उनके द्वारा वैदिक मंत्रो के आशीर्वाद से कार्य पूरा नहीं होता था। इसका परिणाम यह हुआ कि गुरू चेला में तीव्र मतभेद हो गया। तीन ब्राह्मणों ने बहुत पहले वेदोक्त समस्या पर निर्णय के लिये प्रार्थनापत्र शंकराचार्य के यहाँ प्रस्तुत किया था, उस पर विचार करने हेतु गुरू ने पुनः अपने शिष्य को उपस्थित होकर विचार विमर्श के लिये प्रेरित किया। मिलवादिकर का ब्राह्मणों से कहना था कि वर्तमान मठाधीश ब्रह्मनाल्कर के वार्तालाप में सम्मिलित हो जाने से उक्त विषय पर विचार करने में सुविधा होगी। गुरू ने सारे कागजात और ब्राह्मणों का प्रार्थनापत्र ब्रह्मनाल्कर के पास विचारार्थ भेज दिया। परन्तु अप्रैल 1905 तक इस सम्बन्ध में कुछ भी नहीं हो सका।

मनुष्य के जीवन और पुरुषार्थ को धन्य बनाने के लिये ही परमात्मा ने अनेक प्रकार की समस्यायें इस जगत में उत्पन्न की हैं। इन समस्याओं से कोई व्यक्ति मुक्त नहीं है। साधारण व्यक्ति समस्याओं को विपत्तियाँ मान बैठते हैं और कभी–कभी समस्या के समाधान का बिना प्रयास किये ही हारकर बैठ जाते हैं। परन्तु संकल्प शक्ति वाले व्याक्ति को किसी भी

समस्या में परेशानी का अनुभव नहीं होता। छत्रपति शाहू जी का सम्पूर्ण जीवन जैसे विपुल समस्याओं का संग्रह है। एक समस्या के बाद दूसरी समस्या और कभी–कभी समस्या ही समस्या। छत्रपति शाहू जी ने हर समस्या को दुलराया, उसको प्यार किया, उससे संघर्ष किया, उससे क्रुद्ध और परिश्रांत भी हुए पर समाधान तो वे खोज ही लेते थे। फरवरी के मध्य 1905 में छत्रपति चिंचली जा रहे थे वहाँ घोड़ो का विशाल मेला लगता था। दो घोड़े बिक्री के लिये थे। जिनको गाड़ी में जोतकर छत्रपति उनको देखने और परखने लगे। कुछ ऐसा हुआ कि लगाम अथवा डोरियों के अव्यवस्थित हो जाने से गाड़ी एक गड्ढे में चली गयी, जिसमें कैक्टस के पेड़ थे इसके काँटे छत्रपति के शरीर में काफी गहरे पड़ गये। बड़ी कठिनाई से इस गड्ढे से निकल सके। छत्रपति ने इस सम्बन्ध में अपने मित्र हिल को एक पत्र द्वारा इसकी सूचना दी थी। डाक्टरों को छत्रपति के शरीर में गड़े हुए काँटों को निकालने में एक सप्ताह लग गया। डाक्टरों को आश्चर्य था यह देखकर कि काँटे निकालते समय छत्रपति को भयानक कष्ट होगा किन्तु वे बिना टस से मस हुए दृढ़ मुद्रा में काँटे निकलवाते रहे। कुछ लोग ऐसे दुर्बल मानस के होते हैं जिनको गुलाब भी काँटा प्रतीत होता है परन्तु कुछ ऐसे भी साहसी व्यक्ति होते हैं कि उनको हर काँटा गुलाब लगता है – हर समस्या एक उपलब्धि होती है।

महात्मा ज्योतिराव फूले जो सामाजिक विषमता को ध्वस्त करने के लिये आजीवन संघर्ष किया, आन्दोलन चलाया तथा ब्राह्मणवादी व्यवस्था के विरूद्ध लड़ते रहे। सन् 1873 में स्पष्ट रूप में अपनी पुस्तक 'गुलामी' में कहा था कि हम पूर्णरूप से समझते है कि ब्राह्मण अपने द्वारा ही निर्मित उच्चस्तर से कभी नीचे उतरकर अपने पड़ोसी कुनबी भाइयों अथवा अन्य ब्राह्मणेतर जातियों के लोगों से कभी नहीं मिल सकते। ब्राह्मणों ने

उस समय जिस रूप में ऊँच–नीच का भेदभाव अपनी ऊँचाई को कायम रखने के लिये स्थापित किया था उसे देखकर और क्या–शिक्षित ब्राह्मण भी स्वीकार कर लेगा कि उसके पूर्वजों ने कितनी अनीति और अन्याय बरत कर अपनी श्रेष्ठता प्रचारित की है। समझदार शिक्षित ब्राह्मण अपने पूर्वजों की व्यवस्था को संभव है त्याग दे। जाति व्यवस्था और वर्ण–व्यवस्था को बिना समाप्त किये भारत उन्नति के मार्ग पर न तो आगे बढ़ सकता है और न सम्पन्न और समृद्ध ही हो सकता है। भारत में इस ब्राह्मण वादी व्यवस्था को नष्ट करने के लिये संघर्ष करना पड़ेगा। अन्यथा इस व्याधि का समुचित उपचार हो ही नहीं सकता।

छत्रपति शाहू जी ने सामाजिक समानता का जब प्रश्न रखा तो ब्राह्मणों ने इसे किसी रूप में स्वीकार नहीं किया। शाहू जी ब्राह्मणेतर जातियों को सामाजिक न्याय दिलाने के लिये जी जान से लगे थे। उन्होंने मराठा छात्रों को प्रेरित किया कि जाति–पाँति का भाव समाप्त करके मराठों और मुसलमानों को भी अपने साथ छात्रावास में रखे। यदि ध्यान से देखा जाये तो छत्रपति जातियों और वर्णो में सहस्त्रधा खण्डित भारत को सामाजिक समानता तथ भेदभाव रहित अखण्ड राष्ट्रीयता के सूत्र में बाँधना चाहते थे जबकि ब्राह्मण देश को अनेक प्रकार से खण्डित करके अपनी श्रेष्ठता कायम रखने के लिये सदैव कटिबद्ध थे। छत्रपति शाहू जी ने अपनी राजगद्दी के मोह और लोभ का सर्वथा करके महाराष्ट्र में महात्मा फूले के संघर्ष सूत्र को बहुत आगे बढ़ाया था। कहने को छत्रपति सामाजिक समानता के स्थापनार्थ सारा संघर्ष कर रहे थे, परन्तु यह चेतना ही भारत की भावी राष्ट्रीय एकता का मूलाधार बनी।

सन् 1920 में अपने राज्य कोल्हापुर में शाहू छत्रपति जी महाराज ने दलितों को गुलामी से मुक्त घोषित किया। उन्होंने उन्हें सभी मानवीय

अधिकार प्रदान करके, भारत में कभी भी न हुई सामाजिक क्रान्ति का श्री गणेश अपने राज्य में किया। राजर्षि ने अपने राज्य कोल्हापुर की इस सामाजिक क्रान्ति को समूचे महाराष्ट्र में प्रस्तुत करने के लिये डॉ0 अम्बेडकर को आर्थिक सहायता देकर 'मूक–नायक' नामक एक पत्रिका को निकलवाया। डॉ0 अम्बेडकर यद्यपि एक संस्थान के प्रोफेसर बन चुके थे, पर वे तब तक हिन्दू समाज पर खुल्लम–खुल्ला हमला करने में सिद्ध–हस्तता नहीं प्राप्त कर पाये थे, जैसा कि दो या तीन दशक बाद उन्होंने बखूबी कर दिखाया।

राजर्षि शाहू छत्रपति महाराज ने डॉ0 अम्बेडकर के संस्थान में रहने वाले महार, मांग, चमार आदि जातियों की, अस्पर्श्य समझा जाता था, एक परिषद बुलाई। डॉ0 अम्बेडकर के नेतृत्व एवं विचारों का समर्थन करने के लिये ही उस क्रान्तिकारी महापुरूष ने वह परिषद बुलाई थी। मार्च सन् 1920 में आयोजित परिषद में राजर्षि शाहू छत्रपति महाराज ने घोषणा की थी– प्रजाजनों! तुमने अपना सही नेता ढूंढ लिया है, इसीलिये मैं तुम्हें हार्दिक बधाई देता हूँ मेरा विश्वास है कि डॉ0 अम्बेडकर तुम्हारा उद्धार किये बगैर नहीं रहेंगे। इतना ही नहीं एक समय ऐसा आयेगा कि वे समूचे हिन्दुस्तान के नेता होंगे, ऐसा मेरा मन देवता बताता है। छत्रपति शाहू जी ने अपने राज्य में प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य और निःशुल्क करने का कानून सन् 1922 ई0 में बनाया और अमल भी किया। राजर्षि छत्रपति शाहू जैसा पक्का खरा, बेजोड़ और पूर्ण अध्यक्ष न तो अखिल भारतीय कूर्मि क्षत्रिय महासभा को अब तक मिला था और न अस्पर्श्यो की परिषद को। एक बार का सही किस्सा है कि राजर्षि कोल्हापुर राज्य के महार और मांगो का परिवार लेकर नागपुर आ रहे थे, ऐसा मालूम होते ही नागपुर राज्य के भोंसले महाराज, राजर्षि के सगे कुटुम्बी होते हुए भी शिकार का बहाना

बनाकर महल से बाहर जंगल में चले गये। उन्हें भय हो गया कि यदि राजर्षि अपने साथियों सहित उनके नागपुर–निवास पर ठहर गये तो अमंगल हो जायेगा। अस्पर्श्यो को फिर राजर्षि छत्रपति शाहू जैस कोई अन्य संरक्षक न मिल सका। इस सम्बंध में एक अन्य महाराजा ने भी काफी क्रान्तिकारी कदम उठाया, वह थे ट्रावनकोर और कोचीन के महाराजा जिन्होंने सन् 1936 में अपने राज्य में अस्पर्श्यो का मंदिर प्रवेश जो उस समय तक पाखंडी पुरोहितों की रूढ़िवादिता के कारण वर्जित था, अस्पर्श्यो के मंदिर प्रवेश को घोषणा करके खोल दिया गया। वह दिन वहाँ के दलित एवं अस्पृश्यों के लिये मान–सम्मान की दृष्टि से स्वर्णिम दिवस था। दो वर्ष पूर्व ही इन महाराजा का निधन हो गया, वे आजीवन अविवादित रहे।

क्रान्ति ज्योति श्रीमती सावित्रीबाई फूले (महात्मा ज्योतिबा की पत्नी) की मृत्यु के बाद महाराष्ट्र में चले ''सत्य शोधक समाज'' का करवाँ चलाने वाला कोई योग्य नेता नहीं बचा था। सन् 1910–1911 ई0 तक शाहू महाराज ने महात्मा फूले द्वारा स्थापित 'सत्य शोधक समाज' आन्दोलन का अध्ययन किया। इन्होंने ब्राह्मणी वर्चस्व को समाप्त करने हेतु 'सत्य शोधक समाज' का आन्दोलन चलाना उचित समझा और सन् 1911 ई0 में शाहू जी ने अपने राज्य में 'सत्य शोधक समाज' की विधिवत् स्थापना की। सत्य शोधक पाठशालायें खुलवाकर और बहुजन समाज के विद्यार्थियों को धर्मज्ञान का प्रशिक्षण देकर उन्होंने पोगापंथी पुरोहितों का दम्भ–भंग किया। इनके इस कार्य से धर्म के ठेकेदार तिलमिला उठे पर वह कुछ कर न सकते थे क्योंकि छत्रपति शाहू जी महाराज स्वयं कोल्हापुर नरेश थे और

यह सुधार प्रजाहित में कर रहे थे उनसे अंग्रेज सरकार भी सहमति रखती थी।[*]

शाहू जी 15 अप्रैल 1920 'अछूत निर्मूल परिषद' मानगाँव के तथा 30 अप्रैल 1920 में नागपुर में इस परिषद के सम्मेलन के अध्यक्ष बनाये गये। इन सम्मेलनों का आयोजन डॉ0 अम्बेडकर ने किया था। शाहू जी ने इस परिषद को सम्बोधित करते हुए घोषणा की थी– "अगर सत्ताधारी लोग मुझ पर दबाव डालते है तो मैं राजगद्दी का त्याग तक कर दूँगा। और शूद्र (सछूत शूद्र) और अति शूद्र (अछूत शूद्र) के क्रान्ति संग्राम में कार्य करूँगा।" इस वक्तव्य से जनता में चेतना की चिनगारी सुलग उठी।

महाराष्ट्र राज्य में बसी फासेफारधी नामक एक आदिवासी जमात है। इस कौम के लोग जंगलों और बीहड़ पहाड़ों पर रहते थे। शाहू जी महाराज एक बार शिकार करने जंगल गये। वहाँ दयालु महाराज का अपनी प्रजा की इस जाति से परिचय हुआ। महाराजा ने पूँछा– आप लोग गाँवों में क्यों नहीं बसते? उन्होंने कहा– महाराजा लोग हमें अपराधी मानते हैं। हमें लोग चोरी, डकैती करने वाला समझ कर दण्ड देते रहते हैं। हम चोर–डाकू हैं इसलिये लोग हमें काम पर नहीं लगाते अतः पेट पालने के लिये हमें मजबूरन चोरी, डकैती करनी पड़ती है। छत्रपति शाहू ने उन फसेफारधी आदिवासी लोगों का गाँव में बसाया और उन्हें जीवकोपार्जन हेतु काम दिलाये। छत्रपति शाहू के कारण वे आदिवासी लोग समाज की मूल धारा में आये। भारतीय सेना में जो महार रेजीमेन्ट हैं, उसी महार जाति में डॉ0 अम्बेडकर जी का जन्म हुआ था।

---

[*] जायसवार डॉ दिलावर सिंह, अध्यक्ष कूर्मि क्षत्रिय समाज
अखिल भारतीय कूर्मि क्षत्रिय महासभा शातबदी स्मृति ग्रन्थ
पृष्ठ– 224–225

महारों के समाजोद्धार मे तथा भारतीय फौज में उनकी अलग रेजीमेन्ट जैसे मराठों, सिक्खों और गोरखों आदि की थी उन्होंने महार रेजीमेन्ट बनावाने में अंग्रेजों से कह–कह करके अन्त में उसका गठन करवा दिया। आज महार सैनिक किसी तथाकथित लड़ाकू जाति के सैनिकों से किसी बात में कम नहीं बैठते। डॉ0 अम्बेडकर को शाहू जी ने पत्र प्रकाशन के लिये धन देकर प्रोत्साहित किया। प्रकाशित जस्टिस पत्र में डॉ0 अम्बेडकर ने लिखा– **''शाहू जी मनुष्यों में राजा थे और राजाओं में मनुष्य थे।''** 6 मई 1922 को समाज हितैषी राजर्षि छत्रपति शाहू जी के निधनोपरान्त सारे राज्य में जनता शोकाकुल हो गयी। मद्रास से उनके मित्र तथा गुरू फ्रेजर महोदय ने अपने शोक सन्देश में कहा कि– शाहू जी ने दलितों और दीन–हीनों की सहायाता स्वयं को संकट में डालकर की। लन्दन से डॉ0 बाबा अम्बेडकर ने लिखा– ''इस निधन से मुझे बड़ा दुख हुआ है शाहू जी के निधन से मेरा महान उपकारी संरक्षक तथा दलितों का मसीहा चला गया। शाहू जी का एक उद्‌देश्य था कि भारत की समग्र मानवता अखंडित अथवा अविभाजित रहे। वे सचमुच निर्बल के बलराम थे। इस दृष्टि से कहा जा सकता है कि शाहू जी जैसा महापुरूष समूचे नरेश मंडल में अथवा सम्पूर्ण भारत में न तो इनसे पहले और इनके बाद में ही हुआ।''

सामाजिक क्रान्ति के प्रणेता महात्मा ज्योतिराव फूले ने भारतीय इतिहास में स्त्री शूद्र और अति शूद्रों के मानवीय अधिकार के लिये सामाजिक आन्दोलन की नींव रखी। आगे चलकर इस आन्दोलन से छत्रपति शाहू महाराज का जुझारू एवं बेजोड़ व्यक्तित्व जुड़ गया। उन्होंने ब्राह्मण शाही के खिलाफ बहुजन चेतना का स्वर मुखर किया। वह बहुजन समाज के लिये क्रान्ति पीठ बने, लोक नायक बने।

शाहू महाराज कोल्हापुर रियासत के राजा थे, केवल इसी कारण उन्हें महान व्यक्ति नहीं कहा जा सकता। इतिहास में और भी लोग राजा हुए, परन्तु वह सभी महान नहीं कहलाये। समूचे नैतिक गुणों के संगम के बिना कोई भी व्यक्ति महान नहीं कहा जा सकता। जो व्यक्ति समाज को संकट की घड़ी से उबारने के लिये मार्ग ढूढ़ लेता है, वह व्यक्ति महान कहलाता है। डॉ0 बाबा साहब अम्बेडकर ने महान व्यक्ति की चर्चा करते हुए लिखा हैं– **"एक महान व्यक्ति को सामाजिक उद्देश्य की गतिशीलता से प्रभावित होना चाहिये और समाज के अंकुश तथा उपमार्जक के रूप में काम करना चाहिये।"** शाहू महाराज के व्यक्तित्व में विकासोन्मुख गतिशीलता थी और उन्होंने दलित पिछड़ी जाति के बहुजन समाज के उपमार्जक रूप में काम भी किया, इसलिये वह निश्चित रूप से महान व्यक्ति हैं।

महाराज ने सन् 1894 में कोल्हापुर रियासत का राज्यसूत्र संभाला। उस वक्त एक तरफ ब्रिटिशों का राजकीय साम्राज्यवाद और दूसरी तरफ सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक शोषक के रूप में ब्राह्मणशाही का एकाधिकार था। आधुनिक शिक्षा और सामाजिक सुधार सम्बन्धी नयें कानून के परिणामस्वरूप जाति–समूहों में आत्मसम्मान की लहर उमड़ रही थी। फिर भी आम आदमी अज्ञान और गरीबी के कारण धार्मिक आडम्बर, सामाजिक कुरीतियाँ और जाति–व्यवस्था से निर्मित विषमता में पिस रहा था। ऐसे समय शाहू महाराज राजमहल से बाहर निकले और आम जनता से जुड़ गये। उन्होंने दलितों की पुकार सुनी। झुग्गी–झोपड़ियों में जाकर लोगों के दुख दर्द को अनुभव किया। महिलाओं की बुरी हालत देखकर उनका दिल पीड़ा से भर गया। खेतिहर मजदूर, किसान और आदिवासी

जनजाति की तकलीफ उन्होंने देखी, उसे समझने की कोशिश की और उन समस्याओं को सुलझाने की दिशा में कठोर कदम उठाये।

महाराष्ट्र उन दिनों राष्ट्रीय स्वतन्त्रता का आन्दोलन भी चला रहा था। लोकमान्य तिलक राष्ट्रीय सभा के नेता थे। राजकीय स्वतन्त्रता और सामाजिक समता के प्रश्न पर विवाद चल रहा था। लोकमान्य तिलक ने गर्मपंथियों का नेतृत्व किया और गोखले, रानडे, आगरकर नरमपंथी कहलायें जाने लगे। शाहू महाराज के व्यक्तित्व पर इन दोनों प्रवाहों का असर होना स्वाभाविक था। शुरू में उन्होंनें गर्मपंथी क्रान्तिकारियों की सहायता भी की लेकिन गर्मपंथी क्रान्तिकारी लोग बहुजनों की आजादी के सम्बन्ध में कुछ बोलते नहीं थे यह देखकर शाहू महाराज सामाजिक समता के आन्दोलन से प्रभावित होते गये। अंग्रेज जाने के बाद आजादी का लाभ दलित–पिछड़ी और आदिवासी जनता के कल्याण के लिये नहीं हुआ तो ऐसी आजादी ब्राह्मणों के हाथ में सिमटकर रह जायेगी, यह देखते हुए उन्होंने दलित शोषित जनता के उद्धार के लिये काम किया।

ब्राह्मणेतर युवकों को प्रशासन में लाने के लिये शाहू महाराज ने विशेष तौर पर प्रयास किया। बड़ौदा के महाराजा गायकवाड़ और स्नेही–सम्बन्धियों से सम्पर्क किया पत्र लिखे। ब्राह्मणेतर आन्दोलन के एक प्रमुख नेता भास्करराव जाधव इस बात का प्रमाण है। महाराज ने जाधव साहब को सन् 1894 को सहायक सरसुमें के पद पर नियुक्त किया और आगे की शिक्षा के लिये सहायता की। उन्हें एल0 एल0 बी0 की परीक्षा देने के लिये तीन माह की सवेतन छुट्टी और अग्रिम रकम अदा की। दलित–पिछड़ी जाति के लोग गरीबी और शिक्षा सम्बंधी असुविधा के कारण लिख–पढ़ नहीं पाते यह देखकर उन्होंने अपने रियासत में शिक्षा आन्दोलन चलाया। सभी जाति के छात्रों के रहने और खाने की मुफ्त

व्यवस्था के लिये उन्होंने सन् 1896 में छात्रावास की स्थापना की। लेकिन तीन साल तक उस छात्रावास में ब्राह्मण जाति के अलावा दलित–पिछड़ी जाति के एक भी छात्र क़ो प्रवेश नहीं दिया गया। जातिभेद की इस वास्तविकता को समझकर उन्होंने पिछड़ी जाति के और अल्पसंख्यक विद्यार्थियों के लिये बीस छात्रावास स्थापित किये। अज्ञान ही गरीबी, सामाजिक शोषण एवं गुलामी की श्रंखला को मजबूत बनाता है–ऐसा महात्मा फूले ने कहा था। शाहू महाराज ने इसी सत्य का अनुभव किया और अपनी रियासत में बहुजन समाज के शिक्षा सुविधा के लिये अभियान शुरू किया। अपनी जिन्दगी के वेशकीमती पच्चीस साल बहुजनों के ज्ञान प्रसार में लगाने वाले वह पहले राजा थे।

शिक्षा आन्दोलन चलाने के पीछे उनके तीन प्रमुख उद्देश्य थे–

- सभी जाति के छात्रों के लिये शिक्षा–सम्बंधी सुविधायें उपलब्ध कराना उसके लिये शिक्षा–संस्थाओं का निर्माण करना और ऐसी संस्थाओं की सहायता करना।

- भिन्न–भिन्न पिछड़े जाति समूहों के लिये छात्रावास खोलकर ज्ञान प्राप्ति का मार्ग सुलभ कराना।

- आम आदमी के दिल में शिक्षा के प्रति रूचि पैदा करना एवं पिछड़ेपन और अज्ञान को बारूद लगाना।

आज बहुजन समाज में राजनीतिक और सामाजिक क्षेत्र में जो नेतृत्व दिखाई देता है उसका ज्यादातर श्रेय शाहू महाराज के हिस्से में जाता हैं। शाहू महाराज ने शिक्षा के साथ ही चित्रकार, मूर्तिकार, गायक शिल्पी, अभिनेता, संगीतकार और अन्य कलाकारों की मदद की।

शिक्षा–सुविधाओं के साथ ही शाहू महाराज ने बहुजन के लिये प्रशासनिक नौकरियों में पचास प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान किया। नौकरियों में आरक्षण देने वाले वह पहले राजा थे। सन् 1902 में आरक्षण के जरिये पिछड़े हिन्दुओं को मिलाने वाले, अधिकारों का विरोध करने वाले लो0 तिलक राष्ट्रीय सभा के 1916 को हुए लखनऊ अधिवेशन में लखनों करार को मंजूरी देकर मुस्लीमों की स्वतन्त्र राजकीय अस्तित्व की माँग को मान्यता देते हैं।

शाहू महाराज की महानता और बहुजन समाज के प्रति उनकी प्रतिबद्धता समझने के लिये 'वेदोक्त प्रकरण' बहुत महत्वपूर्ण हैं। बहुजन को सत्ता, सम्पत्ति और शिक्षा से वंचित रखने के लिये वेदोक्त मसले का उपयोग कर्मठ ब्राह्मणों के परम्परागत अधिकर के खिलाफ जब शाहू महाराज लड़ रहे थे तब ब्राह्मणों ने धर्म की आड़ लेकर शाहू महाराज पर उनकी नीतियों पर हमला किया। वेदोक्त प्रकरण भी राजसत्ता और धर्म सत्ता के बीच हुआ सत्ता संघर्ष ही था। धर्म गुरू श्रेष्ठ है या राजा इस प्रश्न पर यह संघर्ष दोनों तरफ से दल–बल और दलितों के साथ लड़ा गया। शाहू महाराज के राजोपाध्याय ने वेदोक्त पद्धति से उन भी धार्मिक संस्कार करने से इंकार किया। शूद्रों को वेदोक्त का अधिकार नहीं है इस बात को धर्मगुरू, कर्मठ पुरोहितों, ब्राह्मण और संकेश्वर पीठ के शंकराचार्य वासुदेव शास्त्री भिलवडीकर तथा काशीनाथ ब्रह्मनाडकर ने तूल दिया। लो0 तिलक कर्मठ ब्राह्मणों के साथ रहे, इस बात को डॉ0 फडके ने ऐतिहासिक दस्तावेज के साथ सप्रमाण सिद्ध किया और कहा– **"वेदोक्त प्रकरण में लोकमान्य तिलक जैसे उनके हितैषियों को पराजित करके शाहू छत्रपति ने अंतिम विजय प्राप्त की"।**

इसी सम्बन्ध में प्रसिद्ध लेखक पु0 ल0 देशपांडे अपना अभिमत जाहिर करते हुए लिखते है–''बहुजनों को अज्ञान और गरीब रखकर समूची सत्ता पर कब्जा जमाने की मनीषा रखने वाला वर्ग सबसे पहले स्वयं का अधः पात कर लेता है। सरकारी नौकरियाँ पाने के लिये अंग्रेजो के सामने लार टपकाते समय छोटा न समझने वाले ब्राह्मण और उनके जैसे ही मध्यमवर्गीय लोग शाहू महाराज का दर्द नहीं समझ सके, इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं, परन्तु जिन धर्मशास्त्रों पर शताब्दियों से धूल बैठी थी, ऐसे शास्त्रों और पोथियों में से वेदोक्त या पुराणोक्त का आधार ढूढ़ने के लिये लो0 तिलक जैसे बुद्धिमान और महान राष्ट्र पुरूष ने अपना वक्त बरबाद करके बहुजन समाज के आधार को नकार दिया।'' स्वयं शाहू महाराज को इस षड़यंत्र के पीछे कौन सी शक्तियाँ काम कर रही हैं और क्यों संघर्ष कर रही है ? इसकी जानकारी थी। वेदोक्त के बारे में उन्होंने कहा– ''ब्राह्मणों का कारस्थान कभी बन्द होगा, ऐसा मुझे नहीं लगता है। लेकिन पिछड़े वर्ग को आगे लाने की मेरी नीति बहुत से ब्राह्मणों को पसंद नहीं है। वेदोक्त आन्दोलन अथवा उसी प्रकार अन्य घटनाओं का सहारा लेकर ब्राह्मणी वर्चस्व का जरा जर्जर छत बचाने का यह पहला बड़ा प्रयत्न हुआ है।''

शाहू महाराज ने हिदुत्व में छिपे इसी ब्राह्मणी जहर को नष्ट करने की कोशिश की। किसी ने उन्हें एक बार पूँछा–''राजनीति और अस्पृश्चता का क्या सम्बन्ध है?'' तब महाराज ने कहा, ''अस्पृश्यों के साथ आदमियों जैसा व्यवहार किये बिना राजनीति कैसे हो सकती है। जिन्हें राजनीति करनी है उन्हें प्रत्येक मनुष्य को मानव के सभी अधिकार देने के लिये तैयार रहना चाहिये।''

शाहू महाराज समूची ब्राह्मणी संस्कृति का भेद यहाँ खोल रहे है। ब्राह्मणी धर्म और संस्कृति के खोल में बहुजन समाज जब तक बन्द है तब तक वह अपना उद्धार नहीं कर सकता। आज भी यह बात समसामाजिक है। जिस दिन बहुजन समाज में फूले शाहू महाराज और डॉ0 अम्बेडकर के विचारों का अनुसरण करेगी उनके नक्शे कदम पर चलेगा उसी दिन बहुजन मुक्ति के द्वार खुल जायेगे। सार्वजनिक जगह और विशेष रूप से शिक्षा संस्थाओं में जिससें अछूतों को शिक्षा बिना कोई कठिनाइयों से प्राप्त करना आसान हो इसलिये अस्पृश्यता का पालन शासन प्रणाली के नियम के विपरीत या दुवर्यवहार घोषित करते हुए शाहू महाराज अपने दिनाँक 15 जनवरी 1919 के आदेश में जो करवीर सरकार के गजट पृष्ठ 46 दिनाँक 23 अगस्त 1919 में प्रकाशित हुआ है आदेश देते हैं– "शिक्षा–विभाग और जिन निजी या सरकारी संस्थायें जैसे इमारत प्ले ग्राउन्ड को ग्रांट के रूप में मद्‌द की जाती है वहाँ के लोगों ने उच्चवर्णीय हिन्दुओं से भी ज्यादा अछूतों के साथ ममता और आदरयुक्त व्यवहार करना चाहिये। अछूतों को यह असाध्य समानता का व्यवहार नहीं किया गया तो शिक्षा–विभाग का प्राचार्य या नीचे दर्जे का पाठक इन्हें स्पष्टीकरण देना बाध्य होगा। और जो निजी संस्थाओं को रियासत से आर्थिक मद्‌द की जाती है वह बंद की जायेगी।"

शाहू जी ने शूद्र अछूतों को शिक्षा का अधिकार दिलाने हेतु भारत में सर्वप्रथम उनके यहाँ शिक्षा जगत में आरक्षण की नीति अपनायी। इतना ही नहीं अपितु उनके लिये अपने राज दरबार में और शासन के कई महत्वपूर्ण पदों पर उनकी नियुक्तियाँ की थी जो आज के आरक्षण विरोधी शासन के लिये भी मुश्किल काम लगता है। विशेषकर छुआ–छूत नष्ट करने का कानून बनाने वाले वे भारत के प्रथम राजा थे।

स्त्रियों की दासता से मुक्ति

स्त्रियों को 'मनुस्मृति' के अनुसार भोग की वस्तु समझकर उनसे व्यवहार किया जाता था। केवल इतना ही नहीं उनका गुलामों जैसा क्रय–विक्रय भी किया जाता था और समाज में उनका स्थान पशु से भी निष्कृष्ठ रखा गया था। उन्हें धर्मशास्त्रों के अनुसार चार अक्षर पढ़ने की अनुमति नहीं थी। लेकिन महात्मा फूले के क्रान्ति आन्दोलन से स्त्रियों को शिक्षा देना प्रारम्भ हुआा। स्त्रियों पर लगाये गये सभी प्रकार के अमानवीय व्यवहारों पर प्रतिबन्ध लगाये और उन्हें मानवता के अधिकार देने हेतु शाहू महाराज ने 22 अक्टूबर 1920 को उचित कानून बनाकर उसे 11 नबम्बर 1920 से कार्यान्वित किया। जिसमें हिन्दू विरासत अधिकार हिन्दू विवाह कानून, अविभक्त हिन्दू परिवार कानून हिन्दू सम्पत्ति का कानून, हिन्दू सम्पत्ति वितरण कानून आदि सम्मिलित है। उन्होंने स्त्रियों के संरक्षणार्थ 29 जुलाई 1919 को तलाक सम्बन्धी कानून जारी किया जिसे राज्य तलाक सम्बन्धी कानून 1919 कहा जाता था।

अछूतों और पिछड़े समाज को नौकरी में आरक्षण :–

शाहू महाराज अछूत और पिछड़े समाज के लोगो को रियासत में अधिक से अधिक नौकरी देने के पक्ष में थे। जिससे वे अपनी सर्वक्षेत्रीय प्रगति कर सके। दिनाँक 16 अप्रैल 1920 को अछूत समाज को सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा– "मैने जब रियासत का कार्यभार लिया उस समय कोल्हापुर से सभी जगह केवल एक ही सुशिक्षित जाति का प्राब्लय था। कार्यालयों में पिछड़े समाज का एक भी व्यक्ति नहीं था। इसलिये पिछड़े समाज के लोगों का स्तर बढ़ाने हेतु उन्हें नौकरी देने की कार्य प्रणाली मुझे शुरू करनी पड़ी। उन्हें शिक्षा देने हेतु विशेष छात्रवृत्ति देकर सभी के

लिये छात्रावास की व्यवस्था की। मेरे 25 साल के प्रयत्न से कुछ संतोष जनक परिणाम दिखाई दे रहें है।'' तुम्हारा समाज अभी भी उस हद तक नहीं पहुँचा। अतः आप सभी लोगों को सभी प्रकार की सुविधा देने का मेरा संकल्प है। शाहू ने 1902 से सरकारी नौकरी में बहुजन समाज को 50 प्रतिशत आरक्षण दिया। उच्च वर्ग इसके विरोध में था क्योंकि नौकरी से उनका एकाधिकार समाप्त हो रहा था। उन्होंने शाहू जी पर दबाव डालने का भी प्रयास किया, लेकिन उनका प्रयास विफल रहा।

शाहू महाराज को अपने लक्ष्य के अनुसार नौकरी में स्थिति नहीं दिखाई दी। कुल 833400 जनसंख्या में से उच्च वर्ग के 30,000 से ज्यादा लोग नहीं थे। शिक्षा की दृष्टि से किसी ऊँची जाति को नौकरी में स्थान नहीं था। शाहू जी का कहना था–'' मेरा सच्चा लक्ष्य यह है कि नौकरी में ऊँच जाति के एक व्यक्ति के साथ पिछड़ी जाति के कम से कम 27 लोग रहने चाहिये।''

बहुजनों को राजनीतिक अधिकार :–

मनुवादी समाज व्यवस्था के अन्तर्गत बहुजन समाज को सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक शाहू महाराज को उच्च कुलीन वर्ग की अनीतिमान प्रवृत्ति और कृति की पूरी जानकारी थी। जिसका संक्षेप में ब्यौरा शाहू महाराज ने दिनाँक 23 जून 1920 को सर अल्फेड पीज लन्दन का लिखे एक पत्र में जिसे डॉ0 बाबा साहब द्वारा भेजा गया था स्पष्ट था।

आमतौर पर राजाओं के बारे में जब हम सोचते है तो हमे पौराणिक कथाओं में जो बताया गया या दिखाया गया जैसा कि बहुत बड़े और ऊँचे सिंहासन पर राजा बैठा है। प्रधान और उनके मंत्रियों का दरबार सामने

लगा है, राजा हुकुम फरमा रहे है और जनता राजा का हुक्म सर आँखो पर रखकर पालन कर रही है, ऐसा चित्र हमारे सामने आना यह स्वाभाविक है। क्योंकि बहुत सारे राजाओं का यही इतिहास रहा है। इतिहास बताता है कि राजा अपने प्रजा का मालिक है, भगवान है और प्रजा उसकी गुलाम है, धन–वस्तु है, अपने राजा की सेवा करना जनता का परम कर्तव्य है।

राजर्षि शाहू महाराज कुछ और ही थे। वे ऐसे राजा थे जो राजा होकर भी प्रजातन्त्र लाना चाहते थे। प्रजातन्त्र लाने के लिये समाज और समाज क्रान्ति लाने के लिये शिक्षा में क्रान्ति लाने वाले शाहू महाराज भारत के प्रथम राजा थे। समाज व्यवस्था में अमूलचूल परिवर्तन लाकर वे ऐसा मानवसमाज निर्माण करना चाहते थे, जो अपनी जाति और झूठे धर्म को भूलकर लोग अपने देश और देशवासियों पर प्रेम करे। सम्राट अशोक और छत्रपति शिवाजी के बाद जन कल्याण के बारे में सोचने वाले राजर्षि शाहू महान क्रान्तिकारी राजा साबित हुए।

महाराष्ट्र के सारे ब्राह्मणों के विरोध के बावजूद शिवाजी महाराज ने मराठा साम्राज्य की स्थापना कर बहुजन स्वराज्य की लहर आगरा और दिल्ली तक पहुँचायी। बहुजन राजा की यह विजय ब्राह्मणों की आँखों में खटकती थी क्योंकि ब्राह्मण शिवाजी को शूद्र मानते थे और शूद्र का एक राजा होना ब्राह्मण धर्म का (वैदिक धर्म का) अपमान समझते थे। उन दिनों बहुजन समाज की हालत बहुत खराब थी। बहुजन समाज का सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक शोषण बुरी तरह चल रहा था। शाहू महाराज ने अपनी रियासत का पूरा दौरा करके स्थिति का जायजा लिया और अपने समाज के सुख–दुख में शामिल होने की ठान ली। खुद को किसान और कुर्मी कहलाने में वे धन्यता मानने लगे। उन्होंने राज्य का कारोबार हाथ में

लेते ही एक अध्यादेश निकाला और कहा– "हम चाहते है कि हमारी प्रजा हमेश संतुष्ट और खुश रहे। हमारी प्रजा और हमारे राज्य की दिनों–दिन प्रगति हो, यह हमारी उत्कट इच्छा है।" केवल अध्यादेश निकालकर चुप न रहकर उन्होंने शासन, प्रशासन, खेती उद्योग, शिक्षा, स्वास्थ्य आदि के क्षेत्र में सुधार करना बड़े पैमाने पर चालू कर दिया।

जातीयता, अस्पृश्यता और धार्मिक पाखंड से समाज बुरी तरह टूट चुका था। शाहू जी समाज को जोड़ने और सुधारने में लगे रहे। यद्यपि शिवाजी महाराज के उत्पीड़न का इतिहास उन्हें मालूम था। ब्राह्मणों द्वारा ऊँच–नीच व्यवस्था के बारे में वे अवगत थे फिर भी शुरू में उन्होंने ब्राह्मणों के विरोध में लोहा नहीं लिया था। लेकिन सतारा में महाराज का एक बार पड़ाव था। वहाँ पर भोजन सभारम का आयोजन किया था। भोजन बनाने वाले ब्राह्मण पंडे थे। महाराज नहाने के बाद खाने की तैयारी देखने रसोई गये। बहुत सा खाना बन रहा था। उसी समय एक ब्राह्मण पंडा हाथ में बिल्ली लेकर महाराज के पास आया और कहने लगा, आप यहाँ नहीं आ सकते। आपके अन्दर आने से खाना और जगह अपवित्र हो जायेगी तो बड़ा अनर्थ हो जायेगा। महाराज यह सुनकर काफी क्रोधित हुए। एक बिल्ली से मैं नीच! छत्रपति होकर मेरा इस तरह अपमान होता है, तो मेरे समाज के अस्पृश्य और गरीब लोगों को कितना दुखः और पीड़ा सहनी पड़ती होगी। इस घटना से महाराज के मन पर बड़ा आघात हुआ। उन्होंने इस समाज व्यवस्था को जल्दी बदलने की ठान ली।

रियासत के ब्राह्मण अधिकारियों ने शाहू महाराज को महात्मा फूले के 'सत्य शोधक समाज' मिशन से दूर रखा था। जान बूझकर महात्मा फूले साहब के विचार और साहित्य के विषय में महाराज को मालूम होने नहीं दिया। गुजरात के दयानन्द सरस्वती 'आर्य समाज' की एक मिशन

चलाते थे। अधिकारियों ने महाराज का सम्बन्ध उस मिशन से जोड़ दिया, जो ऊपरी–ऊपर समाज सुधार का नाटक करता था और आर्य समाज का मिशन मूर्ति पूजा, रूढ़िपरम्पराओं का विरोध करता था, लेकिन वेदों को पवित्र मानता था। महाराज शुरू में उधर आकर्षित हुए, लेकिन जब पंच गंगा नदी पर महाराज नहाने गये, तब ब्राह्मणों ने शूद्र कहकर वेदोक्तमंत्र बोलने से मना कर दिया। उनका क्षत्रिय होने का अभिमान भी टूट गया और ब्राह्मणों के ये दूसरे झटके से वे संवर गये। महाराज ने ब्राह्मणी समाज व्यवस्था के विरोध में विद्रोह करने का निश्चय किया। सारे बहुजन समाज का जाति विहीन समाज निर्माण करने में जुट गये। तब तक सत्य शोधक समाज चलाने वाले कुछ लोगों का महाराज से सम्पर्क आया और महात्मा फूले के विचारों का महाराज को भंडार मिल गया। शाहू महाराज ने अपने कोल्हापुर शहर में 1919 में 'सत्य शोधक समाज' की स्थापना की।

सत्य शोधक समाज मिशन से महाराज के ध्यान मे आया कि आर्य, ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य लोगों ने धर्म के नाम से यहाँ के मूल–निवासियों (बहुजन समाज) को शिक्षा, सत्ता और सम्पत्ति से दूर रखा है। उनका शारीरिक और बौद्धिक शोषण करके रात–दिन अपनी सेवा में लगाये रखा है। अतः दबे हुए समाज को ब्राह्मणों की गुलामी के जाल से निकालने के लिये महात्मा फूले का मिशन ही उपयुक्त हो सकता है और महाराज ने बहुजन समाज को शिक्षित करने का बीड़ा उठाया।

अपने खजाने का बहुत सारा धन शिक्षा पर खर्च किया, अस्पृश्यता और जातीयता मिटाना वे अपना प्रथम कर्तव्य मानते थ, और उसके लिये सही शिक्षा देकर लोगों को सत्य धर्म बताना अपना धर्म कार्य मानते थे।

शाहू महाराज ने बहुजनों का शैक्षणिक, सामाजिक, आर्थिक, औद्योगिक और धार्मिक उत्थान करना चालू किया। लेकिन उन्होंने शिक्षा कार्य के ऊपर सबसे ज्यादा ध्यान लगाया। वे जानते थे कि जनता की सारी प्रगति का आधार शिक्षा ही है।

अपेक्षानुरूप सामाजिक परिवर्तन लाने के लिये और उसे स्थायी रूप से टिकायें रखने के लिये शिक्षा ही प्रभावी माध्यम होगा। कोल्हापुर संस्थान को अपनी प्रजा को वे राजकीय अधिकार और प्रशासन में भागीदारी दिलाना चाहते थे ताकि धीरे–धीरे देश में स्वयं शासन (Self Government) शुरू हो सके।

जातीयता और अस्पृश्यता जल्दी से जल्दी मिटाने के लिये महाराज ने 1896 में सभी जाति के लोगों के लिये एक बोर्डिंग निकाला, लेकिन तीन साल तक कमेटी के लोगो ने अपनी ब्राह्मण जाति के अलावा किसी अन्य को प्रवेश नहीं दिया, तब महाराज ने 1901 में लगातार अलग–अलग जाति के लिये होस्टल निकाले। सबको पढ़ने की और रहने–खाने की व्यवस्था की। प्रशासन में भागीदारी दिलाने के लिये बहुजन समाज को 1902 में 50% आरक्षण देने का आदेश लन्दन से जारी किया, जो काम स्वतन्त्र भारत को सरकार ने 47 साल में नहीं किया, शाहू महाराज ने अपने कार्य–काल में किया। शाहू महाराज ने अकेले कोल्हापुर शहर में 22 हॉस्टल खोलकर कोल्हापुर को विद्या नगरी बना दिया और महाराज उस नगरी के शिक्षा सम्राट साबित हुए महात्मा फूले ने शिक्ष रूपी गंगा को पूना से बहाया और शाहू राजा ने उस गंगा की धारा से अपने कोल्हापुर को विद्या का सागर बना दिया। उसी विद्या सागर से बादल बनकर बहुजन–

· राजर्षि छत्रपति शाहू महाराज जन्मदिन विशेषाक 1994 बहूजन नायक पृष्ठ–82

समाज के क्रान्तिकारी लोग सारे भारत में फूले, शाहू, अम्बेडकर के ज्ञान की सिंचाई कर रहे है।

शाहू महाराज शुरू से ही क्रान्तिकारी राजा थे। शिक्षा को बढ़ावा देने के लिये उन्होंने अपने शासन काल में जो आदेश निकाले, उसे जानकर ही उनकी महानता का परिचय मिलता है। उन्होंने अपने शासन के पहले साल में ही प्रचलित शिक्षा नीति का जायजा लिया और उसमें सुधार करने के लिये शिक्षा सुधार समिति की स्थापना की। प्राथमिक शालाओं और माध्यमिक शालाओं की संख्या में बढ़ोत्तरी की।

कोल्हापुर राजाराम कॉलेज की प्रतिष्ठा बढ़ायी। बहुजन–समाज के गरीब और दुखी लागों को स्कालरशिप, पुरस्कार और नगद राशि आदि के माध्यम से राहत उपलब्ध करायी।

शाहू महाराज ने स्कूलों के अभ्यास क्रम में परिवर्तन किया और विद्यार्थियों को सत्य ज्ञान हो, ऐसी आधारभूत शिक्षा चालू की। स्कूलों की देखभाल, निर्माण और उसके आय–व्यय एवं व्यवस्थापन के लिये उचित नियम बनायें। ब्राह्मण धूर्त शिक्षकों को निकालकर अच्छे शिक्षकों की भर्ती करायी। मंदिरों की आय शिक्षा पर खर्च होना चाहिये, इसलिये महाराज ने खास अध्यादेश निकाला। शिक्षा पर होने वाला खर्च पूरा करने के लिये जनता पर शिक्षा कर लगाया। खासकर कोल्हापुर संस्थान के अधिकारी, जागीदार और धनी व्यक्ति पर ज्यादा शिक्षा कर लगाया। संस्थान के बजट में शिक्षा के प्रावधान के लिये 6 गुना वृद्धि की। ग्रन्थालय अनुदान देना चालू किया गरीब और अस्पृश्य विद्यार्थियों को मुफ्त में किताबें उपलब्ध कराने के लिये बुक–बैंक योजना चालू की। बच्चों को लश्करी

शिक्षा देने के लिये इन्फन्ट्री स्कूल चालू किया। तकनीकी शिक्षा के लिये इंस्टीट्यूट की संख्या बढ़ाई।

महाराज ने लड़कियां की शिक्षा में वृद्धि करने के लिये बहुत प्रयास किये। पिछड़े वर्ग की लड़कियों को रहने के लिये और खाने के लिये मुफ्त व्यवस्था संस्थान की तरफ से की। अच्छे शिक्षकों को तैयार करने के लिये शिक्षक प्रशिक्षण केन्द्र 1912 मे बनाया गया। पुलिस और अधिकारियों में अनुशासन बनाये रखने के लिये पाटील स्कूल खोला गया।

होशियार विद्यार्थियों का उच्च शिक्षा देने के लिये विदेश भेजने का प्रबन्ध किया गया। राजाराम कॉलेज की सभी लड़कियों की शिक्षा फीस माफ कर दी गई। हर गाँव में स्कूल खोलकर 1912 में वतनदार शिक्षक योजना और 1917 में पगारी शिक्षक योजना बनायी गयी। कोल्हापुर को 1919–20 साल में संस्थान के खर्च से मैट्रिक परीक्षा का सेन्टर चालू किया गया। सितम्बर 1917 में शाहू महाराज ने प्राथमिक शिक्षा को सख्ती से और मुफ्त में शुरू किया। ये उनकी शिक्षा क्षेत्र में महान क्रान्ति है।

ब्राह्मण लोग जिस राम राजा की तारीफ करते नहीं थकते, उस राम ने अपने राज में शिक्षा लेने की इच्छा रखने वाले शंबूक शूद्र का शिक्षा लेकर धर्म का उल्लंघन करने के आरोप में खून कर दिया, लेकिन हमारे शाहू राजा ने शिक्षा को सार्वजनिक करके मानवतावादी होने का इतिहास रचा है। शाहू महाराज एक दिलदार राजा थे। वे प्रज्ञावत, शीलवत, परोपकारी और मानवतावादी होने के साथ ही लोकशाही के सच्चे प्रवर्तक थे। उन्होंने अपने भाषण में कहा था, "मेरी प्रजा अगर पढ़ी लिखी होती तो मैं अपना राजपाट उनकों सौप देता।" शाहू महाराज चाहते थे कि जाति व्यवस्था और अस्पृश्यता का नाश करने के लिये समाज में से लोग आगे

आये, जो इस व्यवस्था से प्रताड़ित किये गये है और जब महाराज को डॉ0 अम्बेडकर की विद्वता और कार्य के बारे में पता चला तो वे खुद चलकर डॉ0 अम्बेडकर को मिलने के लिये बम्बई के परेल सिंमेंट चाल में गये। डॉ0 अम्बेडकर से मिलकर महाराज को बहुत खुशी हुई। शाहू महाराज डॉ0 साहब को विदेश में शिक्षा पाने के लिये, समाज परिवर्तन के लिये, प्रेस चलाने के लिये और संघटन चलाने के लिये काफी धन उपलब्ध कराया।

बहुजनों के उद्धार के लिये छत्रपति का योगदान :–

1. अपना भारत देश कृषि प्रधान देश है और कोल्हापुर भी इससे अछूता नहीं है। कोल्हापुर में भी अकाल पड़ता था। बाढ़ से फसलों को हानि होती थी और लोगों के जान–माल का नुकसान होता था। भूख के मारे लोग मरते थें, बीमारी तो उस समय आम बात होती थी, क्योकि लोग 90% ब्राह्मणों की मेहरबानी से अनपढ़ गँवार थे। एकाध बार फसल अच्छी हो भी जाती थी तो साहूकार के कब्जें में चली जाती थी जो उन्हें कर्ज देते थे। अनाज बेचने के लिये दलालों का समूह लूटने के अलावा और कुछ भी नहीं करता था। इसलिये शाहू महाराज ने अपने हाथ से ''श्री शाहू छत्रपति स्पिनिंग अंड वीनहिंग मिल'' का शुभारम्भ किया तो दिन था 27 सितम्बर 1906 का दशहरे का दिन। किसानों को कपास की बुआई करने के लिये प्रोत्साहन दिया गया और कपास सीधा मिल के द्वारा खरीद लिया गया जिससे किसानों को रकम भी भरपूर मिलने लगी और साहूकारों दलालों का सफाया होने लगा। दूसरी बात मिल शुरू होने से कोल्हापुर की जनता को कोल्हापुर मे ही काम मिलने लगा जिससे उनकी माली हालत सुधरने लगी।

2. दूसरा काम किया छत्रपति शाहू ने एक तालाब का निर्माण करने के लिये भोगावती नदी पर ''दाजिपुर के पास फेजिवाडे'' इस जगह बांध बाँधने का 1909 साल में ''महारानी लक्ष्मीबाई तालाब'' निर्माण के लिये बहुत खर्च हुआ, मुश्किलें भी बहुत आयी पर काम रूका नहीं चलता ही रहा और यहाँ तक कि प्रथम महायुद्ध में किन्हीं कारणों से काम थोड़ा रूका हुआ था जिसे छत्रपति शाहू के देहान्त के बाद उनके पुत्र ''राजा राम'' ने पूरा किया। इस बाँध से और तालाब से जो नहरें निकाली गयी उससे कोल्हापुर का भाग्य ही बदल गया। किसानों ने गन्ने की चारों ओर खेती करके अपनी और दूसरों की हालत सुधारकर कोल्हापुर को गुड़ की खरीद बिक्री वाली नगरी बनाने का काम किया जहाँ विदेशों से व्यापार करने के लिये लोग आते जाते थे। इससे कोल्हापुर में शुगर मिल की शुरूवात हुई और कोल्हापुर को दूसरा उद्योग मिला और लोगो को रोजगार 90% बहुजन समाज के लिये और इससे बेहतर काम क्या हो सकता है।

अछूतों का सच्चा मित्र

1894 साल में शाहू महाराज ने कोल्हापुर राज्य को अपने हाथ में लिया उस समय अछूतों की शिक्षा के लिये सिर्फ 5 शालाये थी। 168 अछूत विद्यार्थी थे। 1896–97 साल में सिर्फ एक ही शाला का अछूतों के लिये विस्तार हुआ और विद्यार्थियों की संख्या 168 से बढ़कर 196 हो गयी। सवर्णों के लिये दूसरी सार्वजनिक शालायें थीं जिनमें अछूतों को नहीं लिया जाता था।

अछूतों की हालत जानवरों से भी बदतर थी। गुलाम भी इनसे बेहतर जिन्दगी जीते थे, और वक्त आने पर कभी–कभी आजाद भी हुआ करते थे।

शाहू महाराज ने अछूतों की हालत में सुधार लाने के लिये चार प्रकार से काम_करने का फैसला किया–

- उन्हें शिक्षा प्रदान करना।
- उनसे सीधा सम्पर्क स्थापित करना और वह भी खुद ही के द्वारा।
- अपने राज्य के अधिकार मे प्रशासनिक कार्य के लिये उन्हें नियुक्त करना।
- उनके लिये कानून बनाकर उनकी रक्षा करना।

जहाँ 1896–97 में अछूतों के लिये सिर्फ 6 शालाएँ थी और विद्यार्थी सिर्फ 196 थे, वहाँ शाहू जी ने 1907–08 तक शालाओं की संख्या बढ़ाकर 16 कर दी और उनमें 416 अछूत विद्यार्थियों ने जिनमें 40 लड़कियाँ थी लाभ उठाया। उसके दो वर्ष बाद ही शाहू जी की वजह से शालाओं की संख्या 22 तक पहुँच गयी और विद्यार्थी 694 हो गये। और 5 नयी शालाएँ अछूतों के लिये निकालकर उन्होंने उनकी संख्या को 27 तक पहुँचाया। इसके लिये शाहू जी ने अपने प्रचार माध्यमों के द्वारा अछुतों के घर–घर जाकर शिक्षा का महत्व उन्हें समझाया।

शाहू महाराज ने अछूतों में शिक्षा के प्रति लगाव पैदा करने के लिये स्कूल की फीस माफ कर दी, और इतना ही नहीं उन्होंने स्कालरशिप भी

देने का प्रबन्ध किया। स्कालरशिप की रक़म उन्होंने अपने खुद के खर्चे में से भी दी।

शिक्षा के अलावा उन्होंने अछूतों के साथ सम्पर्क भी स्थापित किया और उनकी सदियों से उनमें पनपी हुई हीन भावनाओं को दूर करने का भरसक प्रयास किया। उन्होंने अपने शिकार के काम में अछूतों को भी साथ लिया और उनकी मद्द से बड़े–बड़े शिकार किये। महाराज के साथ और भी लोग जो शिकार के लिये रहते थे, उनमें अछूत भी हिल–मिल गये जिससे दूसरों का सम्पर्क भी उनके साथ आने लगा। महाराज को शिकार का बहुत ही शौक था। खुद तो वह शिकार करते थे, इसके बावजूद उन्होंने शिकार के लिये शिकारी कुत्तों का भी इस्तेमाल किया। जिन्हें सँभालने के लिये उन्होंने अछूत में से ही महार, माँग, चमार भंगी लोगों को इस काम पर रखा। उनकी असल में अछूतों को काम मिलने और उन्हें सबके साथ हिल–मिलनें के लिये, और दूसरों से अच्छी बातें सुनने के लिये मिलें, दूरदृष्टि थी। इससे अछूतों को अपनी सोयी हुई सदियों पुरानी बहादुरी दिखाने का भी मौका मिला।

पक्षियों का शिकार के लिये भी महाराज ने अछूतों में से ही कुछ लोगों को काम पर रखा और इस तरह उनके रोजी रोटी का कुछ हद तक सवाल हल किया।

शाहू महाराज ने अछूतों को छोटे–मोटे काम ही दिये ऐसा नहीं है। उन्होंने हाथी पर बैठने वाले माहुत का भी काम जो राज–परिवार तथा अन्य सरदार, राज–परिवार की स्त्रियाँ, बच्चे और अन्य दूसरे लोग, पारिवारिक लोग जो हाथी पर बैठकर शहर में, समय–समय पर घूमने के लिये, काम के लिये, आते जाते थे, अछूतों को ही दिया। जिससे अछूतों

को मान–सम्मान भी मिलने लगा, और वह अच्छी रोबदार पोषाक पहने हुए, सीना तानकर, ऊँची गर्दन करके सारी प्रजा की ओर देखते हुए सलामी लेता था। प्रदर्शन के दौरान हाथी के साथ लड़ने वाले लोगों में शाहू महाराज ने अछूतों को लिया और उनकी बहादुरी से लोग खुश होकर उनका सम्मान करने लगे।

राजमहल के रथों पर भी सारथी की जगह अछूतों को प्रथम स्थान दिया, जिससे राज–परिवार के लोगो का उससे सम्पर्क बढ़ने लगा।कचहरी में पत्रों को पहुँचाने के लिये भी अछूतों को नियुक्त किया गया। शाहू के समय में पत्रों को घुड़सवार ले जाते और लाते थे जिससे काम में शीघ्रता आ गयी। यह काम अछूत के द्वारा होने से उनमें जो हीन भावना थी, उसका अन्त हो गया और स्वाभिमान उनमें पैदा हो गया। साइकिल पर भी पत्रों का तत्पर अछूतों को बक्शीश देकर सम्मान भी किया जाने लगा, जिससे उनकी समाज में इज्जत बढ़ने लगी। न्यायालय में भी शाहू महाराज ने अछूत को चपरासी की नौकरी दी जिससे शुरू में न्यायाधीश से लेकर क्लर्क का काम करने वाले ब्राह्मणों को धक्का लगा। और उन्होंने उसे कुछ न सिखाते हुए शाहू महाराज से महीने के उपरान्त शिकायत की कि यह तो बहुत उज्जड, गँवार, मंदबुद्धि है जिसे कुछ भी नहीं सिखाया जा सकता। शाहू महाराज ने जब धमकी दी कि आप जैसे काबिल न्यायाधीश के हाथ के नीचे यदि यह कुछ नहीं सीख सका तो मुझे आपकी काबलियत पर ही शक करना होगा और आपके बारे में सोचना पड़ेगा। धमकी काम कर गयी और न्यायाधीश की सिट्टी–पिट्टी गुम हो गयी और कोई दूसरा चारा न देख उसे पूरी तरह सिखाने का काम खुद ने तो किया ही, आपने ब्राह्मणों को सौंपा और अपनी नौकरी बचायी।

शाहू जी ने अछूतों में से अनेक विद्यार्थियों की उच्च शिक्षा का प्रबन्ध कराकर काबिल लोगों को डॉक्टर, इंजीनियर भी बनाया और उन्हें सरकारी नौकरी में रखा, कुछ डाक्टरों को दवाखाना भी खोलने में मद्द की।

शाहू महाराज ने गंगा राम कोबलें को जो अछूत महार था, होटल खोलने के लिये तैयार किया और पैसे की पूरी मद्द भी की। खुद गंगा राम के होटल में चाय पीने वह रोज जाते थे और अपने साथियों को भी पिलाते थे। अच्छा होटल चलाने पर खुश होकर उन्होंने गंगा राम को सोडावाटर की मशीन भी दी। किसी को सिलाई मशीन देकर उन्हें टेलरिंग की दुकान खोल दी तो सवर्णो की बस्ती में अछूतों को जमीन देकर मकान बनाने के लिये भी उत्साहित किया और उन्हे सुरक्षा प्रदान की जिसकी अछूतों को सबसे ज्यादा जरूरत थी।

इतनी बारीकी से, छोटी–छोटी बातों को ध्यान में रखते हुए उन्होंने ऐसे कदम उठायें जिससे अछूतों में स्वाभिमान जागने लगा, उनकी माली हालत सुधरने लगी, लोगों से उनका सम्बन्ध बढ़ने लगा और उनमें खासकर शिक्षा का प्रचार भी होने लगा।

शाहू महाराज ने 1920–21 तक अपने राज्य में ऐसा वातारण. तैयार किया जिससे आगे के समाज क्रान्तिकारकों के लिये बहुत मद्द मिली। 20 मार्च 1920 में माणगाँव में उन्होंने 'अछूतो की परिषद' लेने का आयोजन किया जिसके अध्यक्ष 'डॉ0 बाबा साहब अम्बेडकर' को बनाया गया। इसके बाद ही नागपुर में दूसरी अछूतों की परिषद का आयोजन किया। इन्हीं परिषदों से डॉ0 बाबा साहब अम्बेडकर दलितों के मसीहा के रूप में सामने उभरतें नजर आये। यह देख छत्रपति शाहू महाराज ने अछूतों को कहा कि आपका मसीहा डॉ0 अम्बेडकर ही है और दूसरा कोई नहीं हो सकता।

इसी लिये आप डॉ0 अम्बेडकर को अपने आपस के भेद भूलकर पूरी मदद करे।

महात्मा ज्यातिबा फूले, छत्रपति शाहू महाराज ने अपने महान त्याग और कार्य से एक ऐसे महल की नींव डाली थी जिस पर डॉक्टर बाबा साहब अम्बेडकर ने अपने कर्तव्य शक्ति से, असीम त्याग से जबरदस्त संघर्ष से ऐसा महल खड़ा किया जिसकी बुलन्दी को छूने की कोई भी सनातनी कोशिश नहीं कर सकता।

छत्रपति शाहू महाराज के शिक्षा सम्बन्धी विचार और कार्य :-

छत्रपति शाहू जी कहते हैं कि मनु और अन्य शास्त्रकारों ने बहुजन समाज के लिये शिक्षा के दरवाजे बन्द कर दिये है। शिक्षा ही हमारे तरक्की की एकमात्र साधन है। इतिहास बताता है कि शिक्षा के बिना किसी देश की उन्नति नहीं हो सकी। अज्ञान में डूबे हुए देश में मुत्सद्दी और भढ़वय्ये वीर कभी पैदा नहीं हो सकते। इसलिये मुक्त और शक्ति की शिक्षा की हिन्दुस्तान को जरूरत है। इस देश को स्वराज्य चाहिये मगर आने वाले स्वराज्य को चला सके ऐसे बुद्धिमान लोग भी तैयार होना चाहिये। सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, शैक्षणिक, औद्योगिक आदि जिम्मेदारियाँ सँभालने के लिये बहुजनों को लायक बनाना होगा। अंग्रेज के हाथों से सत्ता निकालकर अल्पसंख्यांक ब्राह्मणों के हाथ सत्ता सौंप देना मुझे पसन्द नहीं हैं। मुझे इसलिये पसन्द नहीं है कि फिर से हमारा बहुजन पेशवाई की कीचड़ में फँसा जा सकता हैं। बहुजन समाज ब्राह्मणवाद के नीचे दबा कुचला है। इसे इस दशा से निकालने के लिये उसको शक्ति चाहिये और यह सिर्फ कम्पलसरी एण्ड फ्री प्राइमरी एजूकेशन से ही मिल सकती है। जल्दी ही पढ़-लिखकर जिम्मेदारियाँ निभाने लायक बन

जायेगा। इतना ही नहीं तो, मेरा बहुजन समाज तीसरी कक्षा तक भी पढ़कर लायक बन गया तों मैं उनके हाथों में सत्ता सौंपकर चैन से आराम कर सकूँगा।

मुसलमान समाज के प्रति महाराज को काफी लगाव था मुसलमान समाज भी ब्राह्मणवाद का शिकार है। इस ब्राह्मणवाद से उन्हें मक्त होना चाहिये। ऐसे शाहू महाराज की धारणा थी। मुस्लिम समाज में शिक्षा का प्रचार और प्रसार होने के लिये महाराज ने अथक प्रयास किये। पैलेस थियेटर कोल्हापुर में छत्रपति शाहू महाराज ने मुस्लिम समाज को सम्बोधित करते हुए कहा– शिक्षा के प्रति लगाव लाने के लिये आप मुझसे जितनी चाहें उतनी मद्द माँग सकते हैं। बदलते समय को ध्यान में रखकर खुद को बदलना चाहिये। मुस्लिम समाज का ध्यान शिक्षा की ओर केन्द्रित करने के लिये शाहू महाराज ने एक योजना बनाई। युसुफ अब्दुला नाम के व्यक्ति को महाराज ने इस काम के लिये नियुक्त कर दिया। इसी कारण सन् 15 नवम्बर 1906 में एक शिक्षा संस्था की स्थापना की और उसके पहले अध्यक्ष थे छत्रपति शाहू महाराज।

शिक्षा के प्रसार के लिये पाठशाला, कॉलेज आदि के साथ–साथ दूर गाँव से पढ़ाई के लिये आने वाले छात्रों के लिये हॉस्टल भी बनवाये। कोल्हापुर संस्थान में इतने हॉस्टलस् खुल गये कोल्हापुर को सब लोग मदर ऑफ हॉस्टलस् के नाम से जानने लगे। छत्रपति शाहू ने सन् 1904 में जैन हॉस्टलस्, जून 1907 में वीर शैव हॉस्टलस्, नवम्बर 1906 में मुस्लिम हॉस्टल्, फरवरी 1908 में अस्पृशों के लिये हॉस्टलस, 1920 में मराठा बोर्डिंग, 1921 में नामदेव शिंपी छात्रालय खुलवाये। छत्रपति शाहू महाराज की उत्तेजना से बहुजन समाज में परिवर्तन की एक लहर उठी और बहुजन समाज ब्राह्मणवाद से मुक्त होने के लिये स्वाभिमान की

जिन्दगी जीने के लिये पढ़ने–लिखने लगा। इस दिशा में छत्रपति द्वारा किया गया कार्य क्रान्तिकारक तथा महत्वपूर्ण है।

सनातनी ब्राह्मणों ने खुद को भूदेव समझकर बहुजन समाज को गुलाम बना दिया।इसी कारण बहुजन समाज की प्रगति न हो सकी। ब्राह्मण वर्ण व्यवस्था से जाति भेद–भाव से इस देश में अंग्रेज को बुला लिया मगर अंग्रेज उदारमतवादी थे। उनके आने से इस देश के बहुजनों को शैक्षणिक और सामाजिक सुविधायें मिल गई। छत्रपति शाहू महाराज के क्रान्तिकारक विचारों से बाल गंगाधर तिलक जैसे सनातनी ब्राह्मणवादी बौखला गये। उन्होंने शाहू महाराज को हर प्रकार की यातना देकर सामाजिक क्रान्ति के मार्ग से हटाने का प्रयास किया। यहाँ तक कि शाहू महाराज के खून का भी प्रयास हुआ। छत्रपति शाहू महाराज ब्राह्मणों के इन सभी तन्त्रों से अवगत थे। नागपुर की एक जनसभा में कार्यकताओं को सम्बोधित करते हुए शाहू महाराज ने कहा कि ब्राह्मण लोग आपको डरायेगे, तुम और तुम्हारे परिवार के सदस्यों पर बदनामी का कीचड़ उछालेगे, मगर तुम डरो मत, इसका प्रतिकार करों। ब्राह्मणवादी लोग मद्द के बहाने आपके पास आयेगे मगर उन पर भी भरोसा मत करना। मेरे प्यारे भाइयों एक हो जाओ। देश की आजादी के लिये अपनी जान कुर्बान कर दो, तुमसे जो जानवरों से भी नीचे का बर्ताव करते है उन ब्राह्मणवादियों की गुलामगीरी से पहले आजाद हो जाओ।"

ब्राह्मणवाद से बहुजनों को छुटकारा दिलाने के लिये छत्रपति शाहू ने अनेक क्रान्तिकारी कदम उठाये है। अस्पृश्य माने जाने वाले लोग महार, मांग, चमार आदि का थाने पर हाजिरी लगवाने की प्रथा थी उसे खत्म कर दिया। दरबार में महत्वपूर्ण स्थानों पर बहुजनों के लायक उम्मीदवारों को नियुक्त कर दिया। सन् 26 जुलाई 1902 में पिछड़े वर्गो के लिये 50%

आरक्षण लागू कर दिया। रेव्हिन्यु, ज्युडिशल, शिक्षा–विभाग, पटवारी आदि स्थानों पर बहुजनों के लोगों की बढ़ती करवा दी। उन्होंने ऐसे फरमान भी निकाले कि यदि कोई अधिकारी इन लोगों की मद्द नहीं करेगा तो वे इस्तीफा भेज दे और उसे पेन्शन भी नहीं मिलेगी।

डॉ0 बाबा साहब अम्बेडकर ने छत्रपति शाहू और महात्मा फूले इनकी बहुजन वादी विचारधारा को आगे चलाया। भारतीय राज्य घटना में बहुजनों के लिये ऐसे कानून बनवाये, जिससे बहुजन समाज ब्राह्मणवादी गुलामी से आजाद हो जाये। जैसे–कम्पलसरी एन्ड फ्री प्राइमरी एजूकेशन, जातिवाद प्रतिनिधित्व, ओबीसी के लिये आरक्षण, अस्पृश्यता निर्मूलन

छत्रपति शाहू महाराज ने अस्पृश्यता निर्मूलन किया और सभी को मानवतावादी दृष्टि से एक बनाने का प्रयास किया। 6000 जाति के टुकड़ों में बँटे हुए बहुजन समाज को एक बना दिया। इस क्रान्तिकरक कार्य से छत्रपति शाहू महाराज बहुजनों के आदर्श बन गये।

बहुजनों का नेता कैसा होना चाहिये इस बारे में छत्रपति शाहू महाराज कहते हैं कि मुख से केवल बकवास करने वाला नेता हमें नहीं चाहिये। कृती से भेदभाव नष्ट करकर समस्त बहुजनों को मानवतावादी दृष्टि से देखने वाला नेता हमें चाहिये। अपने स्वार्थ के लिये बहुजनों के हित का बली चढ़ाने वाला नेता हमें नहीं चाहिये। बातूनी नेता हमारे लिये व्यर्थ है इसलिये सही और बहुजनों को समर्पित नेतृत्व हमें चाहिये।

छत्रपति शाहू जी महाराज की जीवन बहुजनों के लिये दिपस्तम्भ की तरह मार्गदर्शन रहा है। जब अत्याचार अपनी चरम सीमा को लाँग जाते है और मानवता दर्द से कराह उठती है समय समय पर इस धरती पर महापुरूषों का अवतरण अवश्य हुआ हैं। जब इस तत्थ की दरिद्वता द्वन्द

और विषमता को समाप्त नहीं किया जा सकता। इस कड़ी में कबीर, ज्योतिराव फूले, स्वामी नायकर, राजषि छत्रपति शाहू जी, डॉ0 भीमराव अम्बेडकर ने अलग–अलग तरीके से इस सत्य को स्वीकार तथा उसे क्रियान्वित करने के लिये जीवन–पर्यन्त संघर्ष किया।

अपने देश में ऊँची जातियों के द्वारा निम्न जातियों का इतिहास हजारों वर्ष पुराना है। भारत की आजादी के साढ़े चार दशक पश्चात् भी इस जातीय कहें या नस्लवादी, जुल्म में किंचित भी कमी नहीं आयी है। ऐसा शायद ही कोई दिन जाता हो जब दलित उत्पीड़न के समाचार अखबारो की सुर्खियाँ न बनते हैं यद्यपि इस प्रकार की जतिय प्रताड़नायें और भेदभाव सारे भारत में होते रहे है। परन्तु महाराष्ट्र में इनकी संख्या कुछ अधिक ही रही है। नतीजा यह हुआ कि महाराष्ट्र ही दलितों की रक्षा, उनकी उन्नति, शिक्षा, समता, सामाजिक न्याय और सम्मान के लिये युद्ध का अखाड़ा बना और जातीय जुल्म के पिशाच के विरूद्ध युद्ध छेड़ने और दानवता के चुगल से मानवता को मुक्त कराने के लिये, सामाजिक क्रान्ति के पितामह ज्योतिबा फूले, भारतीय संस्कृति, सभ्यता के रक्षक और उद्धारक छत्रपति शिवाजी के वंशज कोल्हापुर नरेश छत्रपति शाहू और महात्मा बुद्ध, ईसा–मसीह और अब्राहम लिंकन के खंडित मानवता के उद्धार डॉ0 भीमराव अम्बेडकर इस धरा पर अवतरित हुए और यह शेर अक्षरशः चरितार्थ हुआ कि–

भड़क कर एक चिनगारी बड़ा अंगार बनती है।
युगों रौदी हुई मिट्‌टी कुतुबमीनार बनती है।

शाहू जी की ध्रुव धारण थी कि जब तक मनुष्य को व्यक्ति निखार और पराछत्र करने का अवसर नहीं मिलता तब तक उसके सामाजिक आर्थिक और शैक्षिक स्तर में सुधार नहीं आ सकता। इसी अनुभूति के

तहत शाहू जी ने ब्राह्मणेत्तर जातियों के युवकों की नियुक्ति प्रशासन में करायी और उनकी ट्रेनिंग की व्यवस्था की। इस प्रकार पिछड़े और निर्बल को चुस्त और दुरूस्त तथा संतुलित बनाया वहीं महात्मा ज्योतिराव फूले के सामाजिक न्याय के सिद्धान्त को व्यवहारिक रूप देकर मानवता का महान कल्याण किया। शाहू जी की अडिग धारणा थी कि शासन में सभी वर्गो के लोगों की साझेदारी शासक को चुस्त–दुरूस्त और मंगलकारी बनाती है। धरती के गर्भ में विस्कृत बीज बिना उचित पर्यावरण के लम्बे अन्तराल तक निष्क्रिय पड़ा रहता है। जैसे ही जलवायु और उष्मा उचित मात्रा में उसे प्राप्त हो जाती है अर्थात उसे अवसर का लाभ मिलता है, वह अंकुरित हो जाता है। शाहू जी का अटल विश्वास था कि शोषित, दलित और पिछड़ों के बीच अनगिनत प्रतिभायें आर्थिक विपन्नता और सामाजिक निरादर के तह में अनन्त काल से दबी पड़ी है। इन प्रतिभाओं को प्राणवन्त बनाने के लिये शाहू जी ने अपने पथ प्रदर्शक एवं दलित शिक्षा के जनक महात्मा ज्योतिराव फूले के सिद्धान्तों को पालन किया और जन–जन तक शिक्षा की किरण पहुँचाने का भरसक प्रयास किया। ज्योतिबा के पद–चिन्हों पर चलने वाले शाहू जी का विचार था कि शिक्षा–विहीन मनुष्य अधूरा और अपूर्ण होता है। जयोतिबा ने भी कहा था कि–

शिक्षा के अभाव में,बुद्धि का ह्मस हुआ।
बुद्धि के अभाव में, नैतिकता की अवनति हुई।
नैतिकता के अभाव में, प्रगति अवरूद्ध हो गई।
प्रगति के अभाव में, सम्पत्ति लुप्त हो गई।
सम्पत्ति के अभाव में, शूद्र मिट गये।

अर्थात समस्त विपत्तियों का आविर्भाव अशिक्षा से हुआ। बिना शिक्षा के न तो नैतिकता का बोध होता है और न भौतिक जगत का ही। शिक्षा ज्ञान का आदि स्त्रोत है और ज्ञान ही शक्ति और समृद्धि का मूलाधार। इन्हीं विचारों से प्रेरित होकर छत्रपति शाहू जी ने अपना ध्यान शिक्षा उन्नयन की ओर केन्द्रित किया। ग्रामीण अंचलों में शिक्षा का प्रसार का आन्दोलन प्रारम्भ किया। ब्रिटिश सरकार के शिक्षा कानून का विधान करके विद्यालय खुलवाये तथा 10 वर्ष तक की आयु वाले बालकों के लिये शिक्षा अनिवार्य कर दिया। महात्मा फूले से छत्रपति शाहू के कार्यकाल तक की अवधि में पृथ्वी के तथा कथित भूसरों ने ब्रह्मत्तेर जनता के लिये शिक्षा के द्वारा सदा के लिये बन्द रखने का पूरा–पूरा प्रयास किया था। तिलक जैसे राष्ट्रीय नेता ने घोषणा की थी कि स्त्रियों के लिये शिक्षा की छूट देने की आवश्यकता नहीं है। शाहू जी का मुख्य उद्देश्य था शिक्षा के माध्यम से दलितों और पिछड़ों में जाग्रति पैदा कर शासन और प्रशासन में भागीदारी देना। इसीलिये शाहू जी ने निर्धन होनहार छात्रों को छात्रवृत्तियाँ दी। उनके भोजन और वसन की व्यवस्था की तथा रहने के लिये छात्रावास खुलवाये। शाहू जी महात्मा ज्योतिराव फूले के उज्जवल आदर्शों को अत्यन्त महत्व देते थे। उन्होंने कुमारी कृष्णा बाई केलवकर जैसे अनेकों महिलाओं को योग्य और सक्षम बनाकर शासन ने भागीदार बनाया था।

अनुकूल परिस्थिति पाकर कली फूल के रूप में खिल जाती है, बालक युवा हो जाता है, वाष्पकण घनघोर वर्षा में परिणत हो जाते है और अंकुर पादप बन जाता है। अवसर की उपादेयता को मन में बसा लिया था। शाहू जी ने 26 जुलाई 1902 को अपने राज्य के गजट में शोषितों और दलितों को विशेष अवसर देने के लिये राज्य की नौकरियों में 50% आरक्षण देने का आदेश निर्गत कर दिया। भारत के इतिहास में शाहू जी

प्रथम नरेश थे जिन्होंने समय की गति को पहचाना और भविष्य के प्रतिबिम्ब को अपने कृतित्व के दर्पण में देखा। शाहू जी का चिन्तन आज राष्ट्रीय धारा का प्रमुख अंग बन गया है। इस चिन्तन ने करीब के कुछ वर्षो में राजनीति की धारा को मोड़कर उसे दलितों–सुख बना दिया है। आज देश में कौन ऐसा राजनेता, राजनैतिक दल, समाज चिन्तक और सामाजिक न्याय दिलाने और साधारण नौकरियों से लेकर शासन और प्रशासन में सम्यक भागेदारी की वकालत नहीं करता है। फूले ने जो बीज बोया था शाहू जी ने उसे अंकुरित किया और मण्डल वादियों ने उसे युवा अवस्था तक पहुँचा दिया है।

शाहू जी की वेदना को समाज में व्याप्त शोषण के विविध रूप शतत् कचोटते थे। अशिक्षा, पाखण्ड, पूजा, ओझा, मूलशूल मृतक श्राद्ध, पिण्डदान का दानव समाज का रक्त इस हद तक चूम चूका था कि कंकाल के अतिरिक्त शेष ही क्या था। पण्डा, पुजारियों ने मंदिरों और मठों के माध्यम से गरीब अशिक्षित जनता की गाढ़ी कमाई, इज्जत और भू सम्पत्ति पर पैतृक अधिकार जमा रखा था। राष्ट्रीय सम्पत्ति के इस दुरूपयोग से शाहू जी बहुत खिन्न रहते थे। ब्राह्मणवादियों द्वारा समय–समय पर उठाये गये प्रतिगामी झंझायातों तथा प्रतिकूल परिस्थितियाँ उत्पन्न कर देने के बावजूद भी शाहू जी ने 1903 में मठों की सम्पूर्ण सम्पत्ति को जप्त कर लिया था। एक अन्य आदेश के द्वारा मठ में मुख्य अधिकारी के प्रशासनिक अधिकार समाप्त कर दिये थे। शाहू जी की इस साहसिक कार्यवाही ने सम्पूर्ण शोषक समाज को पंगु कर दिया था। उन्होंने सम्पूर्ण जाति सम्पत्ति को सामान्य जनकल्याण की योजनाओं में प्रत्यारोपित किया तथा यह भी मन बना लिया था कि परम्परावादी पुरोहितो के स्थान पर शोषित दलित वर्ग के पुजारी नियुक्त करें। जैसा कि स्वर्णकारों तथा शेनवी जाति के लोगों ने

किया है और उनका सम्पूर्ण कार्य बिना ब्राह्मणों के सफलतापूर्वक चल रहा है।

शाहू जी ब्राह्मण–सर्वोच्यश्रेष्ठता मूलक प्रवृत्ति और ब्राह्मणेत्तर संवर्ग शोषण प्रवृत्ति से आहत और उद्विग्न थे। उनकी मर्मज्ञ वेदना जीवन–पर्यन्त उनके मनस्थल को कुंठित और खिन्न बनाये रही। शाहू जी कोल्हापुर राज्य के नरेश अवश्य थे परन्तु सम्मान और सम्पदा के स्वामी तो भूसुर ही माने जाते है। असम्मान की शूल और सम्मान की पिपरसा–स्वाभिमानी और विवेकशील प्राणी को क्रान्ति पथ का पथिक बना देती है। शाहू जी भी इसी पथ के गुरामी थे। वह जैनियों और लिंगायतों की भाँति ब्राह्मणों की दासता का जुंआ मानवतावादी समाज की गर्दन से सदा–सर्वदा के लिये फेंक देना चाहते थे।

शाहू जी के अन्तः करण में निरन्तर एक अभिशप्त वेदना और मूक उत्कण्ठा बनी रहती थी कि जब तक दलितों के मध्य से ही कोई प्रतिभा नहीं प्रस्फुटित छोटी तब तक उनका उद्धार असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है। प्रबल इच्छा और नेक इरादा पथिक का अपने गन्तव्य तक पहुँच देते है। ऐसा ही हुआ। बाबा साहब डॉ0 अम्बेडकर जैसी अद्भुत प्रतिभा को शाहू जी ने खोज लिया। उन्हें यकीन हो गया कि भीमराव अम्बेडकर में ऐसी निष्ठा लगन और श्रमशक्ति निहित है जिसे समुचित अवसर की प्रतीक्षा है। यदि उसे तिनके का भी सहारा मिल जाये तो वह ज्योतिराव के आदर्शों और शाहू जी के मन्तव्यों को उनकी पूर्णतः के शिखर पर प्रतिष्ठित कर देगा। फिर क्या था शाहू जी ने भीमराव अम्बेडकर को अपने आदर्शो का उत्तराधिकारी मनोनीत कर लिया। शाहू जी ने डॉ0 अम्बेडकर को देश और विदेश में उच्च शिक्षा तथा शोध कार्य के लिये भरपूर आर्थिक सहायता पहुँचाई। उनकी प्रबल इच्छा थी कि डॉ0

अम्बेडकर इतने महान विद्वान बने कि भारत में क्रान्ति का कारवाँ सफलता पूर्वक आगे बढ़ सके। शाहू जी अम्बेडकर को एक उद्भट विद्वान, विद्देण्य नेता और दलित मर्मज्ञ प्रणेता तथा अदृश्य का दृष्टा नाविक देखना चाहते थे। डॉ0 अम्बेडकर ने भी अपने गुरू महात्मा ज्यातिराव फूले की भविष्यवाणी–

"जब शूद्रो अति शूद्रो, कोल झीलों के बच्चे जिनकों ब्राह्मणों ने नीच, शूद्रो अछूत कहकर धिक्कार है, धीरे–धीरे समुचित ज्ञान और शिक्षा प्राप्त करेगे तो एक दिन उन्हीं के बीच कोई महान व्यक्ति प्रादुभूर्त होगा जो हमारी समाधि पर पुष्प वर्षा करेगा और हमारे नाम से हर्ष और विजय की घोषणा करेगा। यह मेरी पक्की भविष्य वाणी है।" को सही सिद्ध कर दिया तथा अपने सरंक्षक राजर्षि छत्रपति शाहू की चिर अभिलाषा–"दलितों और शोषितों का उत्थान राष्ट्र उत्थान है। यह तभी सम्भव है जब कोई दलित नेता नेतृत्व की बागडोर समभालें।" को साकार रूप देकर वरेण्ड गुरू और आदर्श शिष्य की परम्परा को सर्वदा के लिये अजर और अमर बना दिया। शाहू जी की मानव कल्याण की मंगलकारी वेदना और शोषित जन के प्रति हार्दिक संवेदना फली–भूति हुई जो दलित पीड़ित मानवता के लिये सदा–सर्वदा वन्दनीय और अभिवन्दनीय रहेगी।

मानवता के मूल्य जब विघटित होने लगते हैं तो उनके उन्नयन हेतु अदृश्य की प्रेरणा से कोई न कोई शक्ति महामानव के रूप में इस धरा पर अवतीर्ण हो जाती हैं और उसी से सामान्य मानव को सही दिशा मिलती है साथ ही विकृत मूल्यों का उदान्तीकरण होता हैं।

हर युग के समाज में कतिपय मनुष्य ऐसे होते है जो अपने सामान्य विकारों को नियन्त्रित करके अपने अन्तःकरण पर दबाव रखकर ऐसे

महत्कृत्य सम्पादित करते हैं जिससे समाज के अभावग्रस्त पीड़ित एवं शोषित जनों का त्राण एवं कल्याण होता हैं। वे अपनी इन्द्रियों अथवा इच्छाओं का दमन करके सामान्यजनों की आकांक्षाओं, उपेक्षाओं तथा आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं, ऐसे ही लोग युग पुरूष कहलाते हैं।

राजर्षि शाहू अपने शरीर मन एवं प्राणों को संकट में डालकर भी दीन–दुखियों की भलाई करते थे वे एक साहसी युग पुरूष थे, जो समाज तथा लोक कल्याण के मार्ग में आने वाली समस्त विघ्न–बाधाओं को सहज ही हटा देते थे।

लोक कल्याण उनकी राजवृत्ति का एक अंग बन गया। अपने और अपने परिवार की आवश्यकताओं की वेदी पर वे समाज की आवश्यकताओं को आसन देते थे। पुत्र की दुर्घटना में मृत्यु राज्य व्यापी प्रभाव डालने वाले मुकदमों की उलझन, कृषकों और मजदूरों के उत्थान की समस्या, दलितों के उद्धार की समस्या, कोल्हापुर की सिंचाई की विशाल परियोजना के लिये धन की समस्या, सामाजिक विषमता की समस्याओं के निराकरण के लिये शाहू जी निरन्तर प्रयत्नशील थे। अछूतोंद्धार के लिये वे समान धर्मों के लोगों से निरन्तर सम्पर्क रख हुये थे। सन् 1919 कोल्हापुर के लिये क्रान्ति का वर्ष था। वर्ष में प्रारम्भ में शाहू जी ने आदेश जारी किया जिसके अनुसार कोई भी अछूत अस्पताल में ससम्मान प्रवेश पा सकता था। इसके पूर्व अछूत जाति के रोगी को अस्पताल में भर्ती नहीं किया जाता था। इतना ही नहीं इस आदेश पर यह भी व्यवस्था थी कि यदि अस्पताल का कोई भी कर्मचारी किसी रोगी के साथ भेदभाव बरतेगा तो

6 सप्ताह के भीतर उसे इस्तीफा देना पड़ेगा। इस आदेश की प्रतियाँ राजकीय कार्यालय में टाँग दी गई। सचिवालय ने इस आदेश को गजट

में प्रकाशित नहीं किया। शाहू जी इस पर बहुत क्रुद्ध हुए और उन्होंने गजट के अगले अंक में प्रकाशित करने का निर्देश दिया। 15 जनवरी सन् 1919 में दूसरा आदेश जारी किया गया कि प्राइमरी स्कूलों, हाईस्कूलों और कॉलेजों के छात्रों में जातियों के आधार पर किसी भी प्रकार का भेदभाव न किया जाये। सचिवालय के कर्मचारियों ने जानबूझ कर इस आदेश की प्रति गायब कर दी। शाहू जी को इससे बड़ी उद्विग्नता हुई।

तीसरा अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं ऐतिहासिक आदेश जारी हुआ जिसमें शाहू जी ने राजकीय अधिकारियों को निर्दिष्ट किया कि सरकारी विभाग में कार्य कर रहे दलित जाति के कर्मचारियों के साथ शालीनता का व्यवहार करें तथा उनके साथ छुआछूत का भाव न रखे। जो कर्मचारी इस आदेश का पालन नहीं करेगे वे उक्त राजकीय आदेश के निर्गत होने के बाद 6 मास के भीतर सेवा से त्याग पत्र दे दें। वे पेंशन पाने के अधिकारी भी नहीं होगें।

शाहू जी पग–पग पर अछूतों को समान सामाजिक धरातल पर प्रतिष्ठित करने के लिये कटिबद्ध थे। जब शाहू जी किसी गाँव में जाते और वहाँ के सवर्ण लोग शिकायत करते कि अछूतों ने कुएँ का पानी गन्दा कर दिया है तो शाहू जी उस कुएँ का पानी पी लेते थे। इस पर सवर्ण लोग अपनी मनोवृत्ति के लिये शर्मिंदा होते थे। शाहू जी ने किसी बात की परवाह किये बिना अपने अछूतोद्धार कार्यक्रम को और भी अधिक निष्ठा और शक्ति के साथ सम्पादित किया। जाति–व्यवस्था के विरूद्ध आवाज उठाने वाले कितने ही व्यक्तियों, कितने ही पत्र–पत्रिकाओं की उन्होंने भरपूर आर्थिक सहायता की। शाहू जी महात्मा ज्योतिराव फूले के बाद मरहठा लोगों की शिक्षा–व्यवस्था के लिये एक मात्र आश्रय बन गये।

भेदभाव मुक्त समाज की आकांक्षा :–

शाहू जी केवल दलितों और शोषितों के बीच ही नहीं वे राजाओं के जातीय भेदभाव को भी मिटाना चाहते थे। महाराज इन्दौर को इन्होंने बड़े साहस से लिखा कि वे आपके पुत्र की शादी मराठों में करे– भले ही मराठे सम्पत्ति और वैभव में छोटे हो। शाहू जी की धारणा थी कि चूँकि हमारा धर्म छुआछूत सिखाता हैं इसलिये दलितों और शोषितों जातियों के लोग ईसाई और इस्लाम धर्म को स्वीकार कर रहें हैं। संसार के अन्य किसी धर्म में छुआछूत अथवा जातीय श्रेष्ठता का सिद्धान्त नहीं हैं। यह केवल हिन्दुओं में हैं। शाहू जी ने एक और क्रान्तिकारी कानून जारी किया इस कानून के मुताबिक शूद्रों की कोई अवैध सन्तान वंश की सम्पत्ति के उत्तराधिकार से वंचित नहीं रह सकती थी। यह हिन्दू कानून 17 जनवरी 1920 को जारी किया गया। इतना ही नहीं उस हिन्दू कानून में यह भी व्यवस्था थी कि उत्तराधिकार की यह कानूनी व्यवस्था लड़कियों में भी प्रवृत्त होगी चाहे वे जोगिनी हो अथवा देवदासी। 'यूनाइटेड इण्डिया' तथा 'इन्डियन स्टेट्स' नामक पत्रों ने इस हिन्दू कानून के बनाने पर शाहू जी को हार्दिक बधाई दी और ब्रिटिश सरकार से अनुरोध किया कि वे भी इस कानून को यथावत् लागू करें। ब्राह्मण समाज शाहू जी के पीछे पड़ा था। ब्राह्मणों के पत्रों ने शाहू विरोधी प्रचार तेज कर दिया। उधर शाहू जी इस प्रयास में थे कि किसी प्रकार प्रतिष्ठित समाचार पत्रों द्वारा ब्राह्मणों का कठोरता से विरोध हों। इसके लिये वे सुयोग्य सम्पादकों की आर्थिक सहायता करके उनको अपने पक्ष में ला रहे थे।

हम कल्पना कर सकते हैं कि इन भीषण विपरीत परिस्थितियों में एक बीस वर्षीय राजा के लिये महिलाओं, अछूतों और दलितों के लिये शिक्षा, आर्थिक सम्रद्धि और सामाजिक सम्मान में उन्होंने ब्राह्मणों के बराबर

लाने का कार्य कितना दुष्कर रहा होगा, जबकि तिलक और उनके ब्राह्मण साथी जातिवादी जड़–सामाजिक परम्पराओं, मान्यताओं और यथास्थितिवाद के कट्टर हिमायती रहे हो तथा छत्रपति शाहू की सामाजिक लड़ाई का खुला और डटकर विरोध करते रहें हों। अन्तःकरण की छटपटाहट से युक्त अपने इन्हीं कार्यो के कारण उन्हें मार डालने, बम से उडा देने की खुली धमकियाँ, आजीवन दी जाती रही, धमकी भरे पोस्टर दीवारों पर चिपकाये जाते रहें। यहाँ तक कि उन्हें बम से उड़ाने के लिये जिस समय पूना से कोल्हापुर आ रहे थे उसी रास्तें में विरोधियों ने बम रख ही दिया था परन्तु वे सौभाग्य से दूसरे मार्ग से आ गये और बच गये। पुनः वर्ष 1908 में जब वे अपनी पुत्री के विवाह महोत्सव में व्यस्त थे तब दामू नामक दुर्दान्त अपराधी ने बम और रिवाल्वर का प्रयोग कर हत्या का प्रयास किया। इन सबके बावजूद वे अपने उद्देश्य से कभी विचलित नहीं हुए।

अपनी अड़तालिस वर्ष की अल्पायु में अछूतों, दलितों और महिलाओं के लिये उन्होंने महत्वपूर्ण कार्य किये और उनके लिये जातिवादियों और यथास्थितिवादी विरोधियों से मोर्चे लिये, लड़ाइयाँ लड़ी और कार्य किये। कतिपय रूप से पूर्व जन्म के पापों से अभिशप्त, पापयोनि में जन्म लेने के कारण, जन्म से लेकर मृत्यु–पर्यन्त निर्ममतापूर्वक दण्डित करते रहने और कुत्ते, बिल्लियों से भी बदतर जिन्दगी जीने के लिये मजबूर किये गये इन शक्तिहीन लोगों के प्रति भगवान बुद्ध की भाँति संवेदनशील और करूणामय होने और उनके लिये सर्वस्व उत्सर्ग कर देने के कारण शासक होते हुए भी छत्रपति शाहू इतिहास पुरूष राजर्षि और महामानव बने। ऐसे ही युग पुरूष के लिये शायर ने कहा हैं–

"हजारों साल नर्गिस अपनी बेनूरी पै रोती हैं,
बड़ी मुश्किल से होता है चमन में दीदावर पैदा।"

अध्याय - 6

- निष्कर्ष एवं सुझाव।
- सन्दर्भ ग्रन्थों की सूची।

निष्कर्ष एवं सुझाव

छत्रपति शाहू जी महाराज के शैक्षिक विचारों से यह तथ्य पूर्णरूपेण स्पष्ट है कि आदर्शवादी होते हुए भी आधुनिक जीवन की आवश्यकताओं एवं वास्तविकताओं के प्रति भली भाँति जागरूक थे इसलिये उन्होंने जीवन के कटु सत्यों की उपेक्षा नहीं की। शिक्षा के द्वारा बुद्धि मस्तिष्क शरीर आत्मा के साथ ही हाथों का प्रशिक्षण करने के पक्ष में भी थे।

राष्ट्रीय भावना का समावेश और भारत के पुर्ननिर्माण की तीव्र अभिलाषा छत्रपति शाहू जी के शैक्षिक विचारों की विशेषता है। ये लोग व्यक्ति की असीमित शक्ति में विश्वास करते थे। और उस शक्ति का ज्ञान वे शिक्षा के माध्यम से देना चाहते थे। शिक्षा के द्वारा ही इन्होनें उच्च विचारों का प्रचार एवं प्रसार करना चाहा। इनका विश्वास था कि वास्तविक शिक्षा के द्वारा ही व्यक्ति का सर्वांगीण विकास सम्भव है। छत्रपति शाहू जी महाराज ने शिक्षा के उद्देश्य को भौतिकतावाद एवं आध्यात्मवाद से सम्बन्धित बताया है। भौतिक एवं आध्यात्मिक जीवन में इस प्रकार का ताल–मेल बैठाकर और शिक्षा का सही–सही उद्देश्य निर्धारित कर आधुनिक शिक्षा को नयी दिशा प्रदान की। स्पष्ट है इस महापुरूष के शैक्षिक उद्देश्य आधुनिक शिक्षा के लिये प्रासंगिक है।

कोल्हापुर नरेश श्री छत्रपति शाहू जी महाराज ने पुस्तकीय शिक्षा का समर्थन न करते हुए देश की आधारभूत आवश्यकताओं से सम्बन्धित पाठ्यक्रम का निर्धारण किया। आधुनिक शिक्षा में यदि इन महापुरूषों के द्वारा निर्धारित पांठ्यक्रम को महत्व दिया जाये तो अवश्यमेव शिक्षा अपने उद्देश्य को प्राप्त करने में सफल होगी।

शाहू जी महाराज द्वारा समर्थित शिक्षण विधियों को आधुनिक शिक्षा में अपनाया जाना चाहिये। शिक्षा का माध्यम मातृभाषा को स्वीकार कर जन–जन तक शिक्षा का प्रसार सम्भव हो सकेगा।

छत्रपति शाहू जी के शैक्षिक दर्शन में अध्यापक की गरिमा को स्वीकार कर उसे उचित स्थान प्रदान करने की बात कही गयी जो वर्तमान शैक्षिक जगत की माँग है। आज छात्रों द्वारा अध्यापक को सम्मान न दिया जाना भी शिक्षा के पतन का कारण है। अतएव अध्यापक को सम्मानीय स्थान प्रदान किया जाना आधुनिक शिक्षा की समृद्धि का आधार होगा।

हरिजन शिक्षा, स्त्री शिक्षा, जन साधारण की शिक्षा एवं धार्मिक शिक्षा पर छत्रपति शाहू ने अत्याधिक जोर दिया है। आज यह तथ्य पूर्णरूपेण प्रासंगिक है क्योकि जब तक इन चारों प्रकार की शिक्षा की व्यवस्था सुसंगठित एवं सुचारू रूप में नहीं होगी तब तक शिक्षोन्नति व राष्ट्रोन्नति की कोई सम्भावना नहीं है।

छत्रपति श्री शाहू जी महाराज ने सह शिक्षा जैसे द्वन्दात्मक एवं विवादास्पद प्रश्न पर अपने विचार अपनी सभ्यता संस्कृति के अनुरूप प्रकट किये। इस शिक्षा विशारद के सह शिक्षा सम्बन्धी विचार आधुनिक शिक्षा जगत के लिये प्रश्न चिन्ह है। विभिन्न सभ्यताओं एवं संस्कृतियों से समन्वित भारत जैसे विशाल देश को इस शिक्षा विचारक द्वारा प्रतिपादित सह शिक्षा पर पुनः विचार करने की आवश्यकता है।

व्यावसायिक शिक्षा से सम्बंधित विचार छत्रपति शाहू जी ने सबके समक्ष रखे आज व्यक्ति को उसी शिक्षा की आवश्यकता है जो उसे बेरोजगारी से मुक्त दिलाकर उसका जीवकोपार्जन कर सकें। ऐसी स्थिति में शाहू जी द्वारा समर्थित हस्त शिल्प, हस्त उद्योग जैसी व्यावसायिक

शिक्षा एवं निर्धारित पूर्णरूपेण व्यावसायिक विज्ञान की शिक्षा व्यक्ति को बेरोजगारी रूपी भयावह स्थिति से त्राण दिला सकती है। इस महापुरूष के व्यवसायिक शिक्षा से सम्बन्धित विचार आधुनिक शिक्षा जगत में प्रासंगिक ही नहीं अपितु सर्वमान्य भी होने चाहिये।

शाहू जी द्वारा निर्धारित परीक्षा को यदि मान्यता प्रदान की जाये तो सम्भवतः सर्व जन–जन तक शिक्षा सुलभ हो जाये। शाहू जी ने परीक्षा के क्षेत्र में आन्तरिक परीक्षा के क्षेत्र में आन्तरिक परीक्षा का समर्थन कर एवं परीक्षा के प्रति नया दृष्टिकोंण प्रतिपादित कर शिक्षा जगत में एक नवीन क्रान्ति का सूत्रपात्र किया है। आधुनिक शिक्षा जगत में एक ऐसी परीक्षा पद्धति की आवश्यकता है जिसमें परीक्षा मात्र बैद्धिक विकास का ही मापन न होकर ज्ञानार्जन का मापदण्ड हो एवं सर्वांगीण विकास का साधन हो। परीक्षा शिक्षा का एक अंग हो, न कि शिक्षा की आधारशिला। ऐसा तभी सम्भव है जब शाहू जी द्वारा समर्पित परीक्षा पद्धति पर अमल किया जाये।

शिक्षा दर्शन के क्षेत्र में शाहू जी की विचार धारायें बाह्य रूप से भिन्न होते हए भी मूलतः एक थी। विभिन्न मार्गो से चलकर उन्होंने एक ही लक्ष्य को सामने रखा और वह था जीवन का शाश्वत मूल्य। वह शाश्वत मूल्य जिसकी कि आज आधुनिक शिक्षा में आवश्यकता है। जिसके अभाव में शिक्षा निरूदेश्य एवं दिशा विहीन हो गयी है तथा युवावर्ग दिगभ्रमित है। ऐसी स्थिति में इनके शैक्षिक विचारों को आधुनिक शिक्षा में अपनाकर शिक्षा को सार्थक एवं जीवनपयोगी बनाया जा सकता है।

संक्षेप में आधुनिक काल में प्रगतिशील कही जाने वाली शिक्षा के अनेक गुण शाहू जी के शैक्षिक विचारों में विद्यमान है। स्वतन्त्रता क्रियाशीलता, अनुभूति, एकाग्रता, चिन्तन, समाजीकरण, सृजनात्मक,

अभिव्यक्ति, व्यक्तित्व, आदर, सर्वांगीण विकास शिक्षक का सम्मानीय स्थान आदि सभी तत्व इसमें है जो शिक्षा के लिये प्रासंगिक है एवं उपयोगी है, सार्थक है व इनमें उच्चतम शिक्षा शास्त्री के रूप में अधिस्ठित करती है।

इस महान शिक्षा–दार्शनिक द्वारा निश्चित शिक्षा के सिद्धान्त हमारे देश और इस काल के लिये ही नहीं अपितु हर क्षेत्र के लिये और हर काल में सही उतरने वाले है उन्हें सार्वभौमिक और सार्वजनिक सिद्धान्त कहा जा सकता है।

इनके शैक्षिक विचारों को आधुनिक शिक्षा में अपना कर भारत की उद्देश्य विहीन शिक्षा पद्धति का मार्गदर्शन किया जा सकता है।

वर्तमान समय में सबसे बड़ी राष्ट्रीय समस्या यह है कि शिक्षा कैसी हो शिक्षा के उद्देश्य क्या हो?, उसका स्वरूप क्या हो? नागरिकों को राष्ट्रीयता की दुष्वृत्ति से कैसे ऊपर उठाकर विश्वपरिवार कर नागरिक बनाने में सहायता प्रदान की जाये तथा किस प्रकार सम्पूर्ण मानव जाति का सर्वांगीण विकास कर उन्हें बेरोजगारी के मुँह से निकाला जाये। तृतीय विश्वशान्ति भारतीय संस्कृति की रक्षा कैसे की जाये। राष्ट्र के दो वर्ग कैसे मिटाये जाये। आज जबकि भारत एक धर्म निरपेक्ष लोकतन्त्रात्मक देश है फिर भी भारत को अनेक राजनैतिक सामाजिक धार्मिक साम्प्रदायिक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। आज सर्वत्र अहिंसा चोरबाजारी दुराचार इत्यादि दुष्प्रवृत्तियों का बोल–बाला है यंत्र–तंत्र भाषावाद जातिवाद प्रान्तीयतावाद की भावनायें जड़ पकड़ रहीं हैं।

हमारी वर्तमान शिक्षा पद्धति खोखली एवं निर्रथक है। आधुनिक शिक्षा विशेषज्ञ सड़ी गली शिक्षा पद्धति द्वारा राष्ट्र के नागरिक को तैयार

करके राष्ट्रोंन्नति का स्वप्न देख रहे हैं तो वे स्वयं तो नही राष्ट्र की अवनति का बीज अवश्य बो रहें हैं। उपरोक्त समस्त प्रश्नों का उत्तर शाहू जी के शैक्षिक विचारों में विद्यमान है। इनके शैक्षिक विचारों को अपनाकर शिक्षा का पाठ्यक्रम बनाया जाना चाहिये। इनके शैक्षिक विचारों में 'वसद्यैव कुटुम्बकम' की भावना निहित है एवं अनोखी छवि लिये हुए है। उसमें सम्पूर्ण आधुनिक शिक्षा को वहन करने की शक्ति है। वर्तमान में मैकाले शिक्षा पद्धति का ही बोल बाला है। सरकार द्वारा यद्यपि विभिन्न आयोग गठित किये गये है। लेकिन वे मात्र कागजों तक ही सीमित है। अभी हाल ही में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 का कागजीकरण हुआ है। वर्तमान शिक्षा भौतिकता के मोह से पूर्णतः ग्रस्त है। यह भारतीय संस्कृति से कोसों दूर जाती दिखायी दे रही है। ऐसी स्थिति में इनके शैक्षिक विचारों को अपनाने की विशेष आवश्यकता है। उनके शैक्षिक विचारों को अपनाकर समाज में व्याप्त अपराधिक प्रवृत्तियों को दूर किया जा सकता है।

भारत एक लोकतन्त्रात्मक देश है परन्तु यहाँ की अधिकांश जनता निरक्षर है। लोकतन्त्र की सफलता के लिये जनता का शिक्षित होना अति आवश्यक है। इनके शैक्षिक विचारों को दृष्टि में रखते हुए जनसाधारण की शिक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिये। देश के समस्त नागरिकों को समान शैक्षिक अवसर उपलब्ध कराने चाहिये। आज आधुनिक शिक्षा में इनके शैक्षिक विचारों के आधार पर एक उत्तम शिक्षा व्यवस्था की जा सकती है। यदि इनके प्रासंगिक शैक्षिक विचारों पर सरकार विचार कर ले और शिक्षा की पुर्नरचना करके एक नवीन शिक्षा प्रणाली का विकास कर ले तो अश्वमेव व्यापक उन्नति दिखाई पडेगी। एक कहावत भी है –

"एक साधे सब सधै, सब साधे सब जाय।"

लेकिन सरकार ने ऐसा नहीं किया है जिसका दुष्परिणाम आज सर्वत्र विद्यमान है। कोल्हापुर नरेश छत्रपति श्री शाहू जी महाराज के विचार अपने जीवन्त रूप में आज भी विद्यमान है तथा उनमें अध्यात्मिकता एवं भौतिकता का सुन्दर समन्वय है। इनके द्वारा बोये गये बीज ही इनके शैक्षिक विचार रूपी फसल के आधार है तथा आधुनिक शिक्षा–जगत के लिये प्रासंगिक है। इनके शैक्षिक विचारों को शिक्षा जगत में अपनाकर एक स्वस्थ समाज का निर्माण किया जा सकता है तथा राष्ट्र को विकास के पथ पर अग्रसर किया जा सकता है।

किसी भी शोध–कार्य का यह लक्ष्य होना चाहिये कि उसके द्वारा अपेक्षित सुधार हो। प्रस्तुत शोध अध्ययन के आधार पर निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किये जा रहे है। जो इस प्रकार है :–

- समाज में असमानता न रहे। जाति भेद, ऊँच–नीच का व्यवहार में समाप्त हो।
- प्राइमरी स्कूलों, हाईस्कूलों और कॉलेजो के छात्रों में जातियों के आधार पर किसी प्रकार का भेदभाव न बरता जाये
- सरकारी विभागों में कार्य कर रहे दलित जाति के कर्मचारियों के साथ शालीनता का व्यवहार करें तथा उनके साथ छुआछूत का भाव न रखें।

अन्त में हम कह सकतें है कि सभी वर्गो के लिये शिक्षा की उचित व्यवस्था होनी चाहिये। शिक्षा ही ज्ञान का आदि स्त्रोत है और ज्ञान ही शक्ति और समृद्धि का मूलाधार है। जिस देश में शिक्षा का अभाव है उस देश का शासन पंगु होता है। वस्तुतः शासन का मुख्य आधार ही शिक्षा है।

अग्रिम शोध के विषय :–

1. महात्मा ज्योतिराव फूले का जीवन परिचय एक सर्वेक्षण।
2. गाँधी जी का शैक्षिक दर्शन।
3. 18 वीं शताब्दी के सामाजिक सुधार।
4. बाबा साहब अम्बेडकर का शैक्षिक दर्शन।

सन्दर्भ ग्रन्थों की सूची

1— प्रेषित राजर्षि शाहू छत्रपति—धनन्जय कीर

2— राजर्षि शाहू स्मारक ग्रन्थ सम्पादक डॉ0 जयसिंह राव पवार

3— राजर्षि शाहू राजा का माणूस कृ0 ग्रो0 सूर्यवशी बाह्मणेतर चलवल

4— डा0 अम्बेडकर चरित्र खैरमोड खण्ड—2

5— डा0 अम्बेडकर चरित्र खैरमोड खण्ड—5

6— कूर्मिदर्पण—दि प्रिंट वैल कानपुर

7— सामाजिक क्रान्ति के सूत्रधार राजर्षि छत्रपति शाहू – डॉ0 बृजलाल वर्मा— भावना प्रकाशन, कानपुर

8— सामाजिक क्रान्ति के ज्योति स्तम्भ महात्मा ज्योतिराव फूले डॉ0 बृजलाल वर्मा— भावना प्रकाशन, कानपुर

9— सामाजिक क्रान्ति के सूत्रधार कोल्हापुर नरेश राजर्षि छत्रपति शाहू सम्पादक— आर0 एन0 माली

10— बहुजन नायक राजर्षि छत्रपति शाहू महाराज जन्मदिन विशेषांक गीतान्जलि प्रेस (प्राइवेट लिमिटेड) ,घाट रोड, नागपुर

11— महान वयक्तित्व चिलड्रन्स बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली

12— डा0 अम्बेडकर चरित्र खैरमोड खण्ड—1

13— राजर्षि शाहू – ए0 बी0 लटठे

14— भारतीय सामाजिक चिन्तन – डा0 एस0 एल0 विसारिया

15— महर्षि दयानन्द के शैक्षिक विचारों का अध्ययन एवं मूल्याकन— शैलजा द्विवेदी

16— शैक्षिक अनुसंधान मूल तत्व पी0 वी0 मेहरोत्रा, आर0 एन0 मेहरोत्रा

17— शैक्षिक अनुसंधान की प्रक्रिया— एस0 पी0 सुखिया

18— डॉ0 सर्वपल्ली राधाकृष्णन के शैक्षिक विचारों का वर्तमान परिस्थिति में प्रसंगिकता का अध्ययन – अशोक कुमार

19— गुरूदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर का शिक्षा दर्शन एवं वर्तमान युग में उसकी उपादेयता— बीना कुमारी

20— कबीरदास के शिक्षा दर्शन का आधुनिक परिप्रेक्ष्य में समालोचनात्मक अध्ययन— ममता द्विवेदी

21— सन्त गाडगे का शैक्षिक दर्शन एवं उपयोगिता— धर्मराज

22— श्री अरविन्द के शिक्षा दर्शन पर उनके विचारों का अध्ययन – पंकज कुमार मिश्रा

23— स्वामी विवेकानन्द के धार्मिक विचारों का शिक्षा में योगदान— अर्चना सिंह

24— महात्मा गाँधी के शैक्षिक विचारों का अध्यन –विजय कुमार त्रिवेदी

25— स्वामी विवेकान्द के शैक्षिक सिद्धान्तों का अध्यन— सीमा सिंह

26— डा0 भीमराव अम्बेडकर का शिक्षा दर्शन – रामनरेश

27— आखिल भारतीय कूर्मि क्षत्रिय महासभा शताब्दी स्मृति ग्रन्थ— डॉ0 दिलावर सिंह जायसवार

28— A Review of education in Bombay state (1855-1965)

29— Fourth Educational Survey–M.B.Buch. N.C.E.R.T, New Delhi.

30— Chhatrapati Shahu the Piller of Social Democracy – Edited by P.B. Salunkhe. Kolhapur.

31– Shahu Chhatrapati: A Royal Revolutionary Dhananjay Keer, Bombay.

32– A Sociological study of Marathi biography with special reference to Phule Urvane relations – Ramesh Jadhav.

33– A Comparative study of the Educational ideas of sarvapalli Radha Krishan and Bertand Russel – Uma Rani Sharma.